# अभिनव रामानंद : स्वामी रामनरेशाचार्य

## षष्टिपूर्ति पर्व
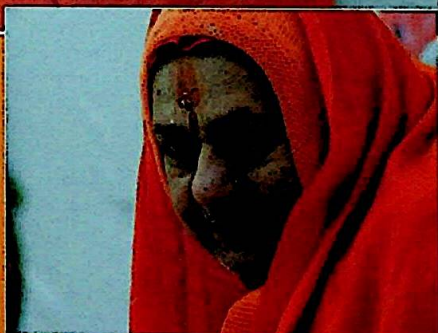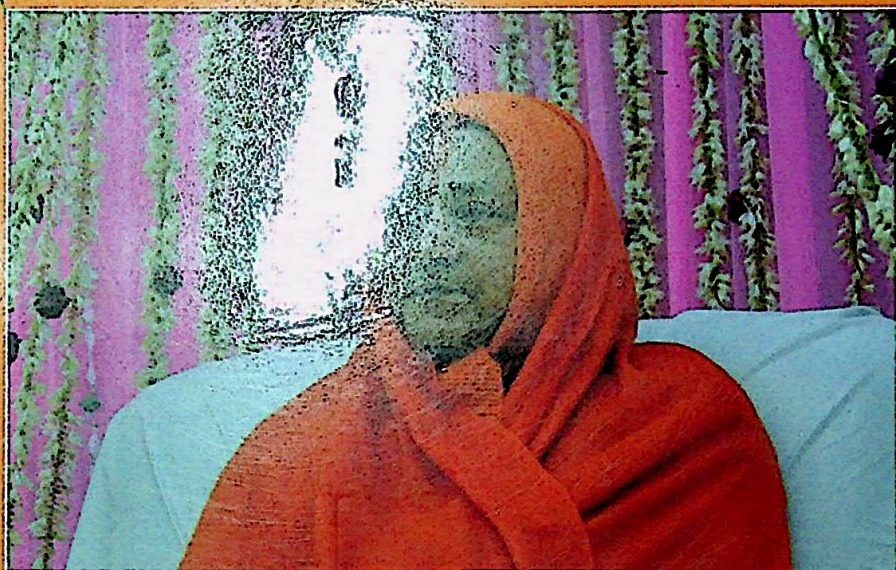
### जगद्गुरुरामानंदाचार्य श्रीरामनरेशाचार्य

सम्पादक

डॉ. उदय प्रताप सिंह

# अभिनव रामानंद : स्वामीरामनरेशाचार्य

सम्पादक
डॉ. उदयप्रताप सिंह

जगद्गुरु रामानंदाचार्य स्मारक सेवा न्यास
वाराणसी

पुस्तक नाम : अभिनव रामानंद : स्वामीरामनरेशाचार्य
सत्प्रेरक : जगद्गुरु रामानंदाचार्य श्रीरामनरेशाचार्यजी महाराज


संस्करण : प्रथम, सन् २०१५ ई.
मूल्य : ५००/- (पाँच सौ रुपये मात्र)
प्रतियाँ : १००० (एक हजार)
प्रकाशक : जगद्गुरु रामानंदाचार्य स्मारक सेवा न्यास, वाराणसी
वितरक : श्रीमठ पञ्चगंगा, काशी (वाराणसी)
दूरभाष : (०५४२) २४०२२३०
मुद्रक : डी.जी. प्रिंटर्स, वाराणसी. मो. ९१+९९३५४०८२४७
Email : rajkumarjaiswal2012@gmail.com

---

**ABHINAV RAMANAND : SWAMI RAMNARESHACHARYA**
***Edited by :*** **Dr. Udai Pratap Singh**

# विषय-सूची

## ।। सुमनस्सुमनोऽञ्जलिः ।।

प्रभुनाथ द्विवेदी

सीतारामं गुणातीतं सच्चिदानन्दरूपिणम् ।
वन्दे सदा सदाराध्यं विश्वात्मानं सनातनम् ।।१।।
कलौ रामावतारस्य रामानन्दजगद्गुरोः ।
धर्मविग्रहरूपस्य नतोऽहं पादकञ्जयोः ।।२।।
नौमि रामनरेशं श्रीरामानन्दं जगद्गुरुम् ।
श्रीमठकीर्तिसोपानं समारूढं दृढव्रतम् ।।३।।
समन्ततः समाजेऽस्मिन् भक्तानां हृदयेषु च ।
रामभावप्रसारार्थं नित्यं यो यतते सुधीः ।।४।।
देवोपमो विशालाक्षः शालप्रांशुर्महाभुजः ।
यथाकारस्तथा प्राज्ञः सद्गुणानां समाकरः ।।५।।
उदारः शिवसंकल्पो रामाय धृतजीवनः ।
प्रसक्तो रामभक्तेषु ह्यनासक्तो भवाप्लवे ।।६।।
शुभाननः प्रसन्नात्मा राघवाश्रयतत्परः ।
विद्वत्प्रियः स्वयं विद्वान् शास्त्रचक्षुर्विवेकवान् ।।७।।
सदाचाररतः श्रीमान् तपोनिष्ठो विचक्षणः ।
देशिको धर्मनीतीनां प्रेरकः पुण्यकर्मणाम् ।।८।।
आदर्शः सर्वसत्त्वानां नेता सत्पथगामिनाम् ।
विनेता मोहदृप्तानामनुनेता गुरुकर्मणाम् ।।९।।
रक्षितधर्ममर्यादो वर्धितवादिवैभवः ।
पोषितवैष्णवव्रात आदृतविद्वत्तल्लजः ।।१०।।
श्रीमान् रामनरेशोऽयं कीर्तितः स जगद्गुरुः ।
चिरं जीवतु धर्मात्मा सीतारामप्रसादतः ।।११।।
अस्यां वसन्तपञ्चम्यां षष्टिपूर्तौ शुभे दिने ।
श्रीवृद्ध्यै देशिकस्यास्य शुभाशंसा तनोतु मे ।।१२।।

---

पूर्व प्रो., महात्मा गांधी काशी विद्यापीठ, वाराणसी ।

# सम्पादकीय

'अभिनव रामानंद : स्वामीरामनरेशाचार्य' ग्रंथ का चिंतन विगत तीन वर्षों से चल रहा है। पर लगता है कि इस चिंतन की परिपक्वता इसी वर्ष पूर्ण होनी थी। जगद्गुरु रामानंदाचार्य श्रीरामनरेशाचार्य महाराज के पदप्रतिष्ठित होने का यह रजत-जयंती वर्ष पूर्ण हो रहा है और भौतिक जीवन की षष्टिपूर्ति का मंगलमय क्षण भी है। इससे अधिक इस ग्रंथ की प्रासंगिकता और उपयोगिता क्या हो सकती है?

वर्तमान आचार्यश्री ने रामानंद सम्प्रदाय को सक्रियता की दृष्टि से एक नया स्वरूप प्रदान किया है। गत् सात-सवा सात सौ वर्षों में यह सम्प्रदाय अनेक धार्मिक आंदोलनों को पराभूत करता अपना अस्तित्व सुरक्षित रखे हुए है। यह सम्प्रदाय की शक्तिमत्ता ही कही जाएगी। हिन्दी के प्रतिष्ठित कवि जयशंकर प्रसाद ने भारतीय संस्कृति के संदर्भ में सत्य ही कहा है कि 'ठहरा जिसमे जितना बल है।' साम्प्रदायिक मान्यतानुसार इस सम्प्रदाय के प्रथम आचार्य भगवान श्रीराम है जिन्हें परमाचार्य कहा जाता हैं। लोक में प्रवर्त्तन करने का श्रेय स्वामीरामानंद (१२९९-१४१०) को दिया जाता है। वर्तमान आचार्य का महत्त्व परमाचार्य, मध्यमाचार्य के उपरांत ही प्रतिष्ठित होता है। फिर भी गत पचीस वर्षों से ज.गु.रा. श्रीरामनरेशाचार्य ने सम्प्रदाय के विस्तार में जिन शाश्वत प्रवृत्तियों को व्यवहारिक धरातल पर आचरित किया है वह सम्प्रदाय के साथ समाज के लिए भी शुभंकर है। प्रतिवर्ष चातुर्मास महोत्सव का आयोजन, स्वजन (भक्तजन), हरिजन और गिरिजन बस्तियों में संस्पर्श यात्राएँ, भण्डारा-सहभोज, प्रवचन और विविध क्षेत्रों के महानुभावों को सम्मानित करना, क्षेत्रीय देवों का पूजन, प्राचीन आश्रमों के जीर्णोद्धार, कुम्भ इत्यादि पर पूर्ण प्रतिष्ठा के साथ उपस्थिति, शास्त्र चर्चा, अद्यतन सामाजिक समस्याओं पर विद्वत् संगोष्ठियों के माध्यम से संवाद स्थापित करना उनके कार्य करने के विशिष्ट एवं विविध आयाम हैं।

वर्तमान आचार्य ने अपने परिश्रम, प्रबंध कौशल, औदार्य, समदृष्टि और समुल्लासपूर्ण स्वभाव एवं अनुभाव से बड़े से बड़ा कार्य सम्पन्न कर लिया

है। चातुर्मास के अतिरिक्त अन्य दिनों में उनकी निरंतर रामभाव-प्रसार यात्राएँ होती रहती हैं। सांसारिक धन-वैभव नहीं पर आध्यात्मिक ऐश्वर्य इतना कि भौतिक संसाधन उनके चरण चुंबन करने लगते हैं। स्वामी जी प्रतिवर्ष एक विद्वान् को एक लाख रुपये का 'जगद्‌गगुरु रामानंदाचार्य पुरस्कार' प्रदान करते हैं। धार्मिक क्षेत्र में यह अपने ढंग का अद्वितीय पुरस्कार है। प्रतिवर्ष 'श्रीमठ संगीत समारोह' में पर्याप्त धन व्यय होता है। साहित्य प्रकाशन, आश्रमों में वटुकों के भोजन, वस्त्र, शिक्षा-शुल्क, गो-सेवा इत्यादि के माध्यम से सम्प्रदायाचार्य की समस्त प्रवृत्तियाँ सम्पन्न होती रहती हैं। पचीस वर्षीय सम्प्रदाय प्रमुख के रूप में उन्होंने चार श्रीराम शतमुखकोटि महायज्ञों का सम्पादन कर लिया है। उनकी प्रबल इच्छा है कि देश के चारों दिशाओं में चार भव्य श्रीराम मंदिरों का निर्माण हो। इस प्रकल्प का शुभारम्भ हरिद्वार में निर्माणाधीन 'अद्वितीय श्रीराम मंदिर' से हो चुका है। सभी प्रमुख तीर्थों में श्रीराम यज्ञ सम्पन्न करने की उनकी हार्दिक इच्छा है। इसके अन्तर्गत काशी, जबलपुर, चण्डीगढ़ व बक्सर में चार शतमुख कोटि श्रीराम यज्ञ सम्पन्न हो चुके हैं। उनके औदार्य एवं संकल्प शक्ति का इससे बड़ा प्रमाण और क्या हो सकता है कि रजतजयंती वर्ष २०१५ ई. में महाराजश्री ने अपने-अपने क्षेत्र के पाँच विशिष्ट विद्वानों को 'जगद्‌गुरुरामानंदाचार्य पुरस्कार' देने की घोषणा की है। यह अक्षर सेवी भी उस पंक्ति में सम्मिलित है।

पुस्तक में वर्तमान आचार्य के व्यक्तित्व के यही पक्ष मुख्यतः उभर सके हैं। माता-पिता का विवरण कुल-गोत्र, क्षेत्र, सहपाठी, गाँव-गिराव को पुस्तक में जान-बूझकर इसलिए छोड़ दिया गया है कि धर्माचार्य को पूर्वजीवन की सीमा में आबद्ध करना उचित नहीं। उसका कुल-भाई-बंधु, क्षेत्र, जवार, माता-पिता, शिक्षा-दीक्षा, स्वभाव-अनुभाव सब उसके भक्तों के व्यवहार और अनुगतों के आचार में समाहित हो जाता है।

ज.गु.रा. पदप्रतिष्ठा का रजत जयंती समारोह गत वर्ष श्रीरामानंदाचार्य जयंती से प्रारंभ हो वर्ष २०१५ के **रामानंदाचार्य जयंती** तक अनवरत संचलित होता रहा है। इसके अन्तर्गत, काशी, अयोध्या. जबलपुर, चण्डीगढ़, पटियाला, लुधियाना, मोहाली, कुरुक्षेत्र, सामाना, राजपुरा, इंदौर, भोपाल, होशंगाबाद जयपुर, सूरत, मुम्बई, अंकलेश्वर में विविध प्रकार के कार्यक्रम वर्ष पर्यन्त चलते रहे। इन नगरोपनगरों में प्रवचन, पूजन, पधरावणी, विद्वत्‌संगोष्ठी, दलित बस्तियों में क़ार्यक्रम तथा आदिवासी क्षेत्रों में विविध प्रकार के धार्मिक कृत्यों

द्वारा वर्तमान आचार्य ने पूरे भारतीय समाज को जोड़ने का अद्भुत प्रयास किया है। श्रीरामनरेशाचार्य का मानना है कि लोक से जुड़कर ही परलोक को समझा जा सकता है। अतः समाज के अंतिम व्यक्ति तक पहुँचा धर्माचार्य ही ईश्वर की सच्ची अनुभूति कर सकता है। इन भावों के संकेत, पुस्तक में स्थान-स्थान पर दिखायी पड़ेगें।

धर्म, न्याय और सामाजिक सौहार्द के लिए वर्तमान आचार्य ने रामावत सम्प्रदाय के माध्यम से व्यक्ति एवं व्यक्ति समूहों को जोड़ने का भगीरथ प्रयास किया है। गत पचीस वर्षों से सामाजिक सौमनस्य का धार्मिक आसव पिलाकर उन्होंने न जाने कितने मनुष्यों में रामभाव का प्रसार किया है। इस दौरान वे राजनीतिक षड्यंत्र या उसके अवसरवादी स्वभाव एवं प्रभाव से प्रवंचित भी हुए हैं– पर भगवान् शिव की तरह विषपायी बन दूसरे का दुख ही हरते रहे और उस प्रवंचना से वेपरवाह हो निरंतर धर्म के पथ पर अडिग बने हुए हैं। 'रामालय ट्रस्ट' की स्थापना से कुछ लोग उन्हें कांग्रेस का समर्थक तो कुछ कांग्रेसी उन्हें अपनी पार्टी वाला धर्माचार्य समझने लगे थे। कतिपय लोग मन ही मन पूर्वजन्म का सम्बन्ध जोड़ते हुए उन्हें अपना ही मानने लगे। तीसरे प्रकार के लोगों का एक प्रभावशाली वर्ग उन्हें अयोध्या में श्रीराम मंदिर का विरोधी तक कहने लगा। पर ये तीनों प्रकार के चश्में लोगों को अंधा ही बनाते रहे। साधु-संतों का यह राजनीतिकरण या वर्गीकरण धर्म के लिए मंगलमय नहीं कहा जा सकता है। स्वामीरामनरेशाचार्य तो निरंतर 'रामावत सम्प्रदाय' में रामावत बनकर धर्म का शाश्वत कार्य निष्पादित कर रहे हैं। जो राम को अहर्निश भज रहा है, जिसका जीवन 'मति रामहि सों गति रामहिं सो' तक घनीभूत हो गया है वह राम, राममंदिर और रामसंस्कृति का विरोधी कैसे होगा? लोगों के चश्मे पर चढ़ी कुहेलिका को छँटने का उचित अवसर आ गया है। यह अहमन्यता को समाप्त करने का, सौहार्द को बढ़ाने का, ईर्ष्याद्वेष को मिटाने का और रामभक्ति के मूल आचार्यपीठ को अपनाने की स्वर्णिम बेला है। पुस्तक के बहाने इस संतचरित्र के माध्यम से, रामभक्तों का आवाहन है कि आएँ मिलजुलकर पुनः राम अर्थात भारतीय संस्कृति का पुनर्स्थापन करें।

समता भरी दृष्टि के विस्तारक, उदारतापूर्ण जीवन शैली के प्रयोगकर्त्ता, प्राचीनता और आधुनिकता के समन्वयक, युगानुरूप लौकिक मान्यताओं के आग्रही, सबको साथ लेकर चलने का सामर्थ्य, शास्त्र और लोक समन्वित

अवधारणा के पोषक, परम्परा और वर्तमान के बीच सेतु की भूमिका का निर्वाह करने वाले वर्तमान आचार्य को 'अभिनव रामानंद' कहना अत्यंत सार्थक है। स्वामीरामानंद ने सबका रसग्रहण कर एक ऐसा आसव तैयार किया था जिसे रामभक्ति कहते हैं। उसी आसव का पान करने व कराने का वीणा उठाये वर्तमान आचार्य स्वामी रामानंद के अभिनव रूप हैं। इन्हीं विचारों को केन्द्रित कर पुस्तक की परिकल्पना हुई है।

पुस्तक में वर्णित वर्तमानाचार्य के बहाने यदि इन भावों का बोध अत्यल्प भी हो सका तो रजतजयंती समारोह की सार्थकता बढ़ेगी और मैं अपना श्रम सार्थक समझ सकूँगा।

पुस्तक की सम्पूर्णता में जिन विद्वानों ने अपने आलेखों से सहायता प्रदान की है मैं उनका आभारी हूँ। परब्रह्म श्रीराम और उनके प्रतिनिधि वर्तमान आचार्य उनके भवपंथ को सरल, निर्विघ्न और मंगलमय बनाएँ, यही कामना है। प्रूफ संशोधन में पुत्र अवनीकांत एवं पुत्री अवंतिका का सराहनीय सहयोग रहा है। उनका मार्ग भी इस संतचरित्र के माध्यम से मंगलमय होगा ऐसा विश्वास है। पुस्तक को सुन्दर साज-सज्जा देने तथा अल्प समय में छाप कर प्रस्तुत करने के लिए श्री राजकुमार जायसवाल डी.जी. प्रिंटर्स को विशेष धन्यवाद देना अपरिहार्य है। वह श्रीमठ से सम्बंधित कई पत्र-पत्रिकाओं का प्रकाशन कर चुके हैं। रामदरबार में उनकी यह सेवा निरंतर बढ़े– यही कामना है। सम्पादक तो निमित्त मात्र बनने में ही आह्लादित है। यह आह्लाद निरंतर बढ़ता रहे यही अभिलाषा है।

षष्टिपूर्ति, वसंत पंचमी
ज.गु.रा. श्रीरामनरेशाचार्यजी
२४/१/१५

उदय प्रताप सिंह
वाराणसी

श्री श्री जगद्गुरु शङ्कराचार्य महासंस्थानम्,
दक्षिणाम्नाय श्री शारदापीठम्, शृङ्गेरी
Shri Shri Jagadguru Shankaracharya Mahasamstanam
Dakshinamnaya Sri Sharada Peetham, Sringeri-577 139

Ref : S-18/3704 Camp Sringeri Date : 16.08.2014

# शुभकामना सन्देश

यह जानकर दक्षिणाम्नाय शृंगेरी शारदापीठाधीश्वर जगद्गुरु शंकराचार्य अनन्तश्री विभूषित श्रीश्रीभारतीतीर्थ स्वामी महाराजजी बहुत प्रसन्न हुए हैं कि काशी के श्रीरामानन्द पीठाधीश्वर स्वामी रामनरेशाचार्यजी के षष्टिपूर्ति और उनके रामानन्द पीठाधिपत्य के पच्चीस वर्ष पूर्ति के उपलक्ष्य में ''अभिवनारामानन्द श्रीरामनरेशाचार्य'' ग्रन्थ का प्रकाशन होने जा रहा है। श्रीस्वामीजी श्रीमहाराजजी से बीस साल पहले दिल्ली और काशी में भेंट किये थे। उनके सौजन्य और सरल स्वभाव से महाराजजी बहुत प्रसन्न हुए।

इस शुभ अवसर पर महाराजजी आशीर्वाद देते हैं कि श्रीस्वामीजी दीर्घायु होकर रामानन्द पीठ को सुशोभित करते हुये शिष्यजनों को मार्गदर्शन करते हुये पीठकी कीर्ति को और भी बढ़ावें और यह पुस्तक अच्छी तरह प्रकाशित होकर भक्तजनों को उपादेय होवे।

इति
टि. दक्षिणामूर्ति

पूर्वाम्नाय श्रीगोवर्द्धनमठ-पुरीपीठाधीश्वर श्रीमज्जगद्गुरु-
शङ्कराचार्य-स्वामी निश्चलानन्दसरस्वती श्रीगोवर्द्धनमठ-
पुरी-७५२००१, ओड़िशा, दूरभाषफैक्स-०६७५२-२३१०९४
निज सचिव-स्वामीश्रीनिर्विकल्पानन्दसरस्वती,
मो. ९४३७०३१७१६, ९४३७००४७९५
Tele-Fax 06752-231094, Ph.-231716, Mobile No. 9437031716; 9437004795
e-mail contact@govardhanpeeth org. website-ww.govardhanpeeth.org

Letter No. 991/GM/14 Dtd. 17.08.14

# सन्देश

श्रीहरिः

।।श्रीगणेशाय नमः।।

जन-गण-मन-अधिनायक श्रद्धेय श्रीरामानन्द-रामनरेशाचार्य-महाभाग मेधावी मनीषी हैं। इनका जीवनचरित मनोहर है। इनके अतीत तथा अनागत जीवनचरित के अवगाहन से द्रुतविलम्बित आह्लाद सुनिश्चित है। माना कि आत्मा की सच्चिदानन्दरूपताकी दृष्टि से आत्मायें और देहों की पाञ्चभौतिकता की दृष्टि से देहों में साम्य है: तथापि शास्त्रसम्मत भेद को स्वीकार किये बिना प्रकृतिप्रदत्त सर्व भेदों का सुमङ्गल उपयोग तथा निर्भेद आत्मस्थिति सर्वथा असम्भव है।

सनातन धर्म में फलचौर्य नहीं है। अतः अपने-अपने अधिकार की सीमायें स्वधर्मपालन के द्वारा सच्चिदानन्दस्वरूप सर्वेश्वर की समर्चा सर्वहितप्रदा है।

निश्चलानन्दसरस्वती
श्रीमज्जगद्गुरु-शङ्कराचार्य-श्रीगोवर्द्धनमठ-पुरी पीठ
श्रीकृष्णजन्माष्टमी, २०७१
१७.८.२०१४

**बालयोगी उमेशनाथ महाराज**
*राजकीय अतिथि मध्य प्रदेश शासन*
संस्थापाक : श्री क्षेत्र वाल्मीकि धाम, क्षिप्रातट, उज्जैन (म.प्र.)
दूरभाष : 094250-91108,
(0734) 2700274, 2701008

# शुभकामना सन्देश

आत्मीय आनन्द का विषय है कि अनन्तश्री विभूषित जगदगुरु रामानन्दाचार्य श्रीरामनरेशाचार्यजी के जीवन दर्शन, भक्ति, साधना और लोक मंगलपरक कृत्यों को केन्द्र में रखते हुए **अभिनव रामानंद : स्वामी रामनरेशाचार्य** ग्रन्थ प्रकाशित होने जा रहा है।

भारतवर्ष की पवित्र भूमि पर समय-समय पर मर्यादा पुरुषोत्तम श्रीराम, योगेश्वर श्रीकृष्ण, महर्षि वाल्मीकि, गुरु गोरक्षनाथ जैसे दिव्यात्माओं का प्रादुर्भाव हुआ जिन्होंने दीपक की भाँति जलकर समाज को सत्यज्ञान का प्रकाश दिया। इसी कड़ी में रामावतार स्वामी रामानंदजी ने आज से ७१९ वर्ष पूर्व **रामभक्ति** की अलख जगाई थी। वह शास्त्र एवं लोकमत को **समान** महत्व प्रदान करने वाले **प्रथम आचार्य** थे। संस्कृत के साथ हिन्दी, ब्राह्मण के साथ दलित, नर के साथ नारी के प्रति समानता का व्यवहार उनके क्रान्तिकारी कदम थे। भक्ति को सर्वसुलभ बनाते हुए उन्होंने सामाजिक न्याय, एकता, अखण्डता, समानता एवं **समरसता** का संदेश दिया।

उसी परम्परा का निर्वहन जगतगुरु रामानंदाचार्य श्रीरामनरेशाचार्य जी कर रहे हैं। **रामानंदाचार्य पद पर वर्तमान**

में वह एकमात्र आचार्य के रूप में प्रतिष्ठित हैं। आपके उदार जीवनदर्शन में स्वामी रामानंद की स्पष्ट छाप दिखाई देती है। आपके व्यक्तित्व में वह ओज व तेज है जो सम्पूर्ण विश्व के दुःख व क्लेश को हरने में समर्थ है। आप सतत 'परहित निरत' बने रहते हैं। दिव्य आभायुक्त प्रफुल्लित चेहरे की मन्द मुस्कान के साथ वाणी की मधुर मिठास ऐसी कि एक बार आपसे जो मिले, वह आपका ही होकर रह जाय है।

बहुमूखी प्रतिभा, शांति, नम्रस्वभाव के धनी होने के साथ ही स्वामीजी बढ़ते जातिवाद, ऊँचनीच का भेदभाव, पाखण्ड, अंधविश्वास, चारित्रिक पतन, अज्ञान आदि को इस धरा से मिटाकर मनुष्य में देवत्व व धरती पर स्वर्ग का अवतरण करने में निरन्तर लगे हुए हैं।

जैसे जल बहता-बहता निर्मल तो होता ही है साथ ही वह दूसरों को उज्ज्वल, पवित्र एवं शीतल बना देता हैं। वैसे ही कार्य जगतगुरु स्वामी श्रीरामनरेशाचार्य जी अपने चरित्र के प्रभाव से कर देते हैं। यह उनके जीवन का ६०वाँ बसन्त एवं रामानंदाचार्य पद प्रतिष्ठित होने का २५वां वर्ष है। इतनी लम्बी साधना के उपरांत वसुधा स्वयं को गौरवान्वित महसूस कर रही है। रजत जयन्ती समारोह के शुभ अवसर पर प्रकाशित ग्रंथ

"अभिनव रामानंद : श्रीरामनरेशाचार्य" के लिए मन से, वचन से, कर्म से हार्दिक मंगलमय शुभ कामनाएँ।

यह ग्रन्थ निश्चित ही अध्यात्म जगत एवं मानव समाज में धर्म, संस्कृति, संस्कार को इतना कुछ देगा कि भावी पीढ़ी का भाग्योदय होगा एवं आगामी पीढ़ियाँ आपकी ऋणी रहेगीं।

**मंगलाकांक्षी**
बालयोगी उमेशनाथ

महन्त रघुबीरदास

भगवन्नारायण ठाकुर द्वारा,
दरबार श्रीपिंडोरी धाम,
गुरदासपुर (पंजाब)-१४३५३१

# शुभकामना सन्देश

परम पूज्य जगद्‌गुरु श्री रामानन्दाचार्य पद प्रतिष्ठित स्वामी रामनरेशाचार्य जी महाराज के चरणों में सादर दंडवत प्रणाम करते हुए प्रभु के चरणों में प्रार्थना करता हूँ कि महाराजश्री का आशीर्वाद सदैव श्रीसम्प्रदाय पर बना रहे। जान कर प्रसन्नता हुई कि जानकर अतीव प्रसन्नता हुई कि महाराज श्री के पदप्रतिष्ठित होने का यह रजत जयंती वर्ष है। इस अवसर पर ''अभिनव रामानंद : स्वामी रामनरेशाचार्य'' ग्रंथ का प्रकाशन भी हो रहा है। इससे भक्तों को तथा वैष्णव समाज को महाराज जी के जीवन दर्शन से प्रेरणा एवं लाभ प्राप्त होगा। हमारी ओर से बहुत-बहुत शुभकामनाएँ।

आपका सेवक
महन्त रघुबीरदास

|| ॐ श्री रामदेवाय नमः ||

|| ॐ श्री सैनाय नमः ||

सैनाचार्य आश्रम

**अखिल भारतीय सैन भक्तिपीठ**

**जोधपुर (राजस्थान)**

(भारतीय पंजीयन अधिनियम 1956 के अधीन पंजीकृत संख्या 229/95)

पीठाधीश्वर : सैनाचार्य स्वामी श्री श्री 1008 अचलानन्दगिरीजी महाराज

# मंगलकामना संदेश

अत्यंत प्रसन्नता का विषय है कि मानवता के मसीहा तथा रामभक्तिके अनुपम एवं देदीप्यमान नक्षत्र के रूप में मानव-मन को आलोकित करने वाले रामावतार जतगद्‌गुरु रामानंदजी की भास्वर परंपरा के वर्तमान आचार्य जगद्‌गुरु रामानंदाचार्य श्रीरामनरेशाचार्यजी महाराज के सफलतम जीवन के ६० वर्ष पूर्ण होने एवं रामानंदाचार्य पद पर प्रतिष्ठापन के पच्चीस वर्ष पूर्ण होने के उपलक्ष्य में संपूर्ण वैष्णव समाज की ओर से आचार्यश्री के जीवन, तप एवं साधना केंद्रित ग्रंथ **अभिनव रामानंद : स्वामी रामनरेशाचार्य** का प्रकाशन किया जा रहा है। यह सर्वग्राह्य सत्य है कि साहित्य समाज के लिए निर्मल दर्पण के सदृश अपने स्वरूप को पहचानने में मददगार होता है। अज्ञान तिमिर की घनघोर डरावनी वेला में साहित्य रूपी ज्ञानज्योति अपनी प्रबल उपस्थिति से संपूर्ण वातावरण को आलोकित करती है। ऐसे में यदि वह साहित्य प्रेरणास्पद व्यक्तित्व के धनी, समाज सुधार के उत्कट अभिलाषी, देवभाषा संस्कृत एवं संस्कृति के प्रबल पहरेदार संत आचार्यश्रीरामनरेशाचार्य जी महाराज जैसे प्रेरणापुंज के जीवन, दर्शन एवं वैचारिक मंथन पर आधारित हो तो सोने में सुगंध का संयोग बनता है।

जगद्गुरु रामानंदाचार्य श्रीरामनरेशाचार्य जी महाराज का जीवन अपने आपमें न केवल सांसारिक मानव समाज के लिए वरन साधु-संतों के लिए भी अत्यन्त प्रेरणास्पद है। आपकी सादगी, सच्चाई, निष्ठा वैचारिक पवित्रता, ईश्वर में अगाध आस्था तथा मानवजीवन के परम लक्ष्य की ओर अनन्य उन्मुखता इत्यादि अनेकानेक विशिष्टताएँ हम सबको अपने मूल मार्ग से भटकने से रोकेंगी तथा सन्मार्ग की ओर अग्रसर करेंगी। अभिनंदनग्रंथ के प्रकाशन से संबंधित इस पावन कार्य के लिए मेरी कोटि-कोटि मंगल कामनाएँ। अपने हृदय की अतल गहराइयों से इस अभिनंदनग्रंथ की पूर्णता एवं परम श्रद्धेय गुरुवर आचार्य श्रीरामनरेशाचार्यजी महाराज के चरणों में शत्-शत् वंदन संप्रेषित करता हूँ।

परिवर्तन प्रकृति का सहज एवं शाश्वत नियम है। इसको दृष्टिगोचर रखते हुए वर्तमान परिवेश के लिए प्रासंगिक अचार-विचार एवं व्यवहार का लोकहितकारी ज्ञान करवाने की दिशा में **अभिनव रामानंद** का संप्रत्यय अतीव उपादेय साबित होगा, ऐसा मेरा मानना है। मुझे आशा ही नहीं पूर्ण विश्वास है कि यह अभिनंदन ग्रंथ बिखरते मानवीय मूल्यों के रक्षण, संस्कृति के संरक्षण एवं मानव-मानव में समता एवं सौहार्द का भाव भरने की दिशा में अनुकरणीय कदम सिद्ध होगा। अनन्त मंगल कामनाओं के साथ–

चरण चञ्चरीक
सेनाचार्य अचलानंद

**डॉ. महेश चंद्र शर्मा,** पूर्व सांसद
सदस्य, राष्ट्रीय कार्यकारिणी
प्रभारी, दीनदयाल समग्र

**भारतीय जनता पार्टी**
**Bharatiya Janata Party**

दिनांक : १८ दिसम्बर, २०१४

जगद्गुरु स्वामी श्रीरामनरेशाचार्य जी महाराज भक्ति परम्परा के अद्‌भुत रामानंदाचार्य हैं। वह न केवल सम्प्रदाय के सार्थक अधिष्ठाता हैं, भारत की आध्यात्मिक परम्परा के ध्वजवाहक आचार्य तथा साधु संस्था के स्वयंकेतु हैं। रामानंद केवल सम्प्रदाय ही नहीं एक स्वभाव भी है, जो सर्वसमावेशी होता है, अछूत-छूत एवं राग-द्वेष से विरत होता है, स्वामी रामनरेशाचार्य के सान्निध्य में इस स्वभाव को सहज ही अनुभव किया जा सकता है। जाति-पाँति पूछे नहीं कोई, हरि को भजै सो हरि को होई', इस उक्ति को जो अपने जीवन में धारण किये हुये है, ऐसे स्वामी रामनरेशाचार्य के श्री चरणों में दण्डवत प्रणाम।

शास्त्रों के ज्ञाता तो शास्त्री होते हैं, आचरण से ही व्यक्ति आचार्य बनता है, स्वामी रामनरेशाचार्य वस्तुतः आचार्य हैं। विद्या व्यक्ति को विनयी बनाती है, इसका साक्षात्कार हम स्वामीजी के सान्निध्य से कर सकते हैं। विद्वता जिनकी विनोद क्षमता को आहत नहीं करती, जो सदैव अपने ईर्द-गिर्द संस्कारक्षम लेकिन सहज वातावरण को बुन लेते हैं। बिना भय एवं संकोच के कोई भी व्यक्ति इनसे संवाद कर सकता है। मताग्रहों से दूर एक समन्वय दृष्टि के प्रतिनिधि हैं स्वामी रामनरेशाचार्य।

मुझे जो सहज स्नेह एवं आदर स्वामीजी ने दिया है, वह अप्रतिम है। उनके सान्निध्य की ललक सदैव बनी रहती है। रामानंदाचार्य पद प्रतिष्ठित होने के रजत जयंती वर्ष के उपलक्ष्य में प्रकाशन की योजना निश्चय ही अभिनंदनीय है। हार्दिक मंगलकामनाएँ। संग्रहणीय सामग्री के इस ग्रंथ की प्रतीक्षा रहेगी।

शुभम्!

स्नेहाकांक्षी

(महेश चन्द्र शर्मा)

11, अशोक रोड, नई दिल्ली-110 001, दूरभाष : 23005700 फैक्स : 23005787
11, Ashok Road, New Delhi-110001. Phone : 23005700 Fax : 23005787

# साधू ऐसा चाहिये...

**उदय प्रताप सिंह**

दिसम्बर १९९४ में कृष्णभक्ति साहित्य पर अंतर्राष्ट्रीय संगोष्ठी का आयोजन वृन्दावन में किया गया था। संगोष्ठी को सम्बोधित करने हेतु प्रो. भगवतीप्रसाद सिंह वृन्दावन जाने की तैयारी में व्यस्त थे। मैं अचानक उनके आवास (गोरखपुर) पर पहुँचा। कुशलक्षेम के उपरान्त वह स्वभावत: 'भगत-भगति भगवंत' की चर्चा करने लगे। उनके सम्पर्क में इस प्रकार की साहित्यिक चर्चाएँ सहजत: चलती रहती थीं। चलते-चलते उन्होंने कहा कि "२० जनवरी (१९९५) को काशी आना। वहाँ तुम्हें एक तेजस्वी संत और युवा वैरागी साधु का दर्शन होगा"। मैं मन ही मन गुरुदेव की आज्ञा स्वीकार कर भुड़कुड़ा (गाजीपुर) वापस आ गया। यद्यपि प्रो. सिंह का परिवेश सामंती था पर विचार और रहन-सहन के स्तर पर वह किसी भी संत से कमतर नहीं थे। उनकी दिनचर्या संत चरित्र के गायन से शुरू होकर भक्ति साहित्य के गहन अध्ययन तक समाप्त होती थी। विरुद्धों का यह सामंजस्य उन्हें एक दिलचस्प व्यक्तित्व प्रदान करता था। २० जनवरी काशी पहुँचने की मैं आतुरता से प्रतीक्षा कर रहा था कि अचानक समाचार मिला "प्रो. सिंह नहीं रहे।" मैं उस समय वृन्दावन और गोरखपुर से बहुत दूर भोपाल के एक साहित्यिक आयोजन में सहभागिता करने गया था। यह दुखद समाचार सुनते ही मैं हतप्रभ रह गया। उनकी मृत्यु के शोक में काशी जाने और युवा साधु से मिलने की तिथि ही भूल गया; पर कहा जाता है कि जाने वाले के अंतिम शब्द आत्मीय जनों के लिए 'धरोहर' बन जाते हैं। दुख की मनस्थिति में वे शब्द रह-रहकर टीस तो देते ही हैं, निर्दिष्ट मार्ग पर चलने की प्रेरणा भी प्रदान करते हैं।

ब्रह्म की तरह शब्द भी सनातन होते हैं। लिखने पर साकार और सुनने पर निराकार बन अन्तरतम में व्याप्त हो जाते हैं। प्रो. सिंह ने जिस साधु के दर्शन करने की आस जगायी थी, उसकी एक अनगढ़, अपूर्ण व अपूर्व छवि का निर्माण मेरे मानस में हो चुका था। एक वर्ष पश्चात् अकस्मात् गुरुदेव के शब्द कानों में पुन: गूँजने लगे– "तुम उस वीतरागी साधु से मिले या नहीं।" इससे प्रेरित हो मैं

डॉ. उदय प्रताप सिंह, एसो. प्रो. हिन्दी पी.जी.कालेज, भुड़कुड़ा, गाजीपुर (उ.प्र.)

दूसरे ही दिन 'श्रीमठ' पहुँच गया। पंचगंगा और बनारस की रहस्यमय गलियों से अपरिचित होता हुआ भी श्रीमठ पहुँचना मेरे लिए सर्वथा नवीन अनुभव था। पर इस बार उस संत का दर्शन नहीं हो सका। एक माह बाद दूसरी बार 'श्रीमठ' गया पर इस बार भी न वह साधु मिले और न जानकारी प्रदान करने वाला कोई व्यक्ति ही। मैं निराश और एक सीमा तक खिन्न हुआ पर करता ही क्या? सोचा यदि तीसरी बार उस साधु का दर्शन नहीं हो सका तो 'श्रीमठ' कभी नहीं जाऊँगा। बार-बार यही सोचता था कि गुरुदेव ने अंतस में ऐसी आग जला दी है जो बुझती ही नहीं। अतः खीझभरी मानसिकता से तीसरी बार 'श्रीमठ' पहुँचा। सीढ़ियों पर चढ़ते ही मेरे लिए एक चमत्कार जैसा घटित हो गया। जिस पंचगंगा की सीढ़ियों पर कभी कबीर को रामानंद मिले थे उसी पर मुझे 'मेरे रामानंद' मिल गये। लम्बी छरहरी काया, कौशेय वस्त्र और तेजस्विता की प्रतिमूर्ति सरीखे दिखने वाले साधु का चेहरा रामभक्ति की आभा से दमक रहा था। मन निर्भ्रान्त और चित्त शान्त-शान्त सा लग रहा था। बिना किसी परिचय के मैंने कहा कि "मैं प्रो. भगवतीप्रसाद सिंह का शिष्य हूँ। आपके दर्शन के लिए आया हूँ।" उन्होंने अत्यन्त आत्मीयता से कहा कि "आइये न बैठिये, आप तो डॉ. साहब के प्रतिनिधि ही हैं।" मेरे लिए अद्भुत अपूर्व था वह सम्बोधन और वह क्षण। मैं आत्मविभोर हो उठा। कृतकृत्य और भाव विह्वल हो उठा। ऐसी आत्मीयता ऐसे कदवाले व्यक्ति की जीवन में पहली बार मिली थी। मैं तय नहीं कर पा रहा था कि मेरे गुरुदेव बड़े हैं या यह 'जगद्गुरु' जिसका अभी-अभी दर्शन हुआ है। उस समय गुरु के प्रति गहन आस्था रखने वाली कबीरदास की साखी स्मरण हो उठी–

**गुरु गोविंद दोऊ खड़े काकै लागूँ पाँय।**
**बलिहारी गुरु आपणो गोविंद दियो बताय।।**

वर्षों बाद समझ सका कि गुरु अंतिम समय तक शिष्य की चिंता करना नहीं भूलता।

इस आत्मीयता के बाद मेरा 'श्रीमठ' जाना लगातार होता रहा। वे अपरिचित व अनजान गलियाँ अब सरल, सहज मार्ग बन चुकी थीं। महाराजश्री का 'दरसन-परसन' करते दो दशक कब बीत गए पता ही नहीं चला। इधर वर्षों से उनके चरणों में बैठकर कई प्रकार की महत्त्वपूर्ण चर्चाएँ होती रही हैं। कभी व्यक्ति, कभी साधु, कभी संस्कृति, कभी समाज तो कभी धर्म के वास्तविक स्वरूप पर। कहना न होगा कि उनकी सन्निधि और संस्पर्श से मनुष्यता का अंकुरण मेरे हृदय में होने लगा है। साधु का यही आचारगत प्रभाव समाज में

संस्कार उत्पन्न करता है। संस्कारवान नागरिक धर्म के सच्चे वाहक बनते हैं। वर्तमान आचार्य के सत्संग में धर्म-अधर्म का अंतर तो समझ में आता ही है, संत, साधु, वैरागी, और गुरु के वास्तविक अर्थ क्या हैं उनका बोध भी होता रहता है। संत के साथ रहने पर ही लिखित ज्ञान का प्रत्यक्षीकरण होता है। प्रेम, सद्भाव, उदारता, परदुख से द्रवित होना, परोपकार, स्वाभिमान, सत्य के लिए संघर्ष और मानवता के लिए सर्वस्व त्यागने वाले संत ही समाज की रीढ़ होते हैं। ये गुण ज.गु.रा. श्रीरामनरेशाचार्य के आचरण में प्रत्यक्ष देखे जा सकते हैं। उनकी निकटता में एक विशिष्ट प्रकार की शीतलता का आभास होता है और वाणी में माधुर्य का आसव घुला मिलता है। उनके साहचर्य में दिव्यानुभूति होती है। कबीर को संतों का यह साहचर्य इतना भा गया था कि वह बैकुंठ त्यागने को तैयार थे–

**राम बुलावा भेजिया, दिया कबीरा रोय।**
**जो सुख साधू संग में, सो बैकुंठ न होय।।**

सकारात्मक जीवनदृष्टि मनुष्य के सुखमय होने का प्रमुख आधार है। शक्ति, प्रतिभा, गुण और कुशलता के बावजूद प्राय: लोग नकारात्मकता और निषेधात्मकता के द्वंद्व में जीवन के मधुमय क्षणों से वंचित रह जाते हैं। छिद्रान्वेषण, ईर्ष्या, दूसरों को नहीं के बराबर मानने का दंभ, स्वयं को सर्वश्रेष्ठ मानने की अहमन्यता से मनुष्य परेशान है। ऐसे में संतों की कृपा ही मन की मलिनता का प्रक्षालन कर सकती है। ऐसे अनेक लोग हैं जो वर्तमान आचार्य के निकट बैठकर रामभाव से परिपूर्ण अनेक संकीर्णताओं को तिलांजलि दे पूर्ण मनुष्य बन चुके हैं। आज का संसार भौतिकता की भीषण आग में झुलसता जा रहा है। मनुष्य द्वारा निर्मित ठौर-ठिकाने नष्ट हो रहे हैं। सुरक्षा के लिए एकत्रित धन-दौलत मनुष्य को अधिक बेचैन बना रहे हैं। भौतिक प्रगति के जंजाल में फँसा मनुष्य तड़प रहा है। बचने का का कोई उपाय ही शेष नहीं। बिहारी ने इस सांसारिक मन को सही समझा था–

**को छूट्यो इहिं जाल परि कत कुरंग अकुलात।**
**ज्यौं-ज्यौं सुरझि भज्यौं चहत, त्यौं-त्यौं उरझत जात।।**

इन भौतिक संतापों की आँच में झुलसने से बचाने की औषधि श्रीरामनरेशाचार्य सरीखे संतों के पास है। साधु-संतों के आचार-विचार में निहित है। इसीलिए तत्वान्वेषी संतों ने वर्तमान संत को ही सतगुरु (ब्रह्म) कहा है। आकाश (संसार) तो जल रहा है। मनुष्य के हृदय में न्यूनताओं का अम्बार लगा हुआ है। रागद्वेष का पारावार फैला हुआ है। ऊँच-नीच की खाई गहरी होती जा रही है। पढ़े-लिखे स्वयं को विचारक कहने वाले जातीय संगठनों के सूत्रधार बन

रहे हैं। जाति-पाति का कीचड़ विकराल होता जा रहा है। बाहुबली बनकर दूसरे को मटियामेट करने की कुटिल चालें निरंतर चली जा रही हैं। ऐसे संताप से संसार को बचाने का नुस्खा मात्र संत के पास है। यदि संत न होगा तो संसार ही स्वाहा हो जाएगा। पुन: स्वामी रामानंद के शिष्य कबीर याद आते हैं और उसी परम्परा में वर्तमान आचार्य अधिक प्रासंगिक दिखने लगते हैं–

**आग लगी आकास में, झर-झर पड़े अंगार।**
**जो संत न होते जगत में, जल जाता संसार।।**

स्वामी रामनरेशाचार्य की विद्या की दुनिया बहुत बड़ी है। उनके तर्क की शक्ति प्रभावकारी है। उनके प्रबंधन का कौशल बेनजीर है। सामान्य से विशिष्ट जन तक को देखने की उनकी अंतर्भेदी दृष्टि अचूक है। चाहे गृहस्थ धर्म से विचलित होता कोई सामान्य मनुष्य हो या साधु कर्म से वंचित कोई साधु हो, अथवा ब्रह्मचर्याश्रम से भटका कोई वटुक हो, उसे शनैः-शनैः मूलमार्ग पर लाने का जो कौशल स्वामी रामनरेशाचार्य में दिखता है वह अन्यत्र दुर्लभ है। अन्य कई सम्प्रदायाचार्यों की तरह स्वामीजी अपनी साधुता किंवा आचार्यत्व में आत्ममुग्धता से बचते हैं। समाज को पटरी पर लाने की पूरी कोशिश करते हैं, साधु को अहंकार और भौतिक चाकचिक्य से अलग करते हैं, राजनयिक को नैतिक बनाने की चेष्टा करते हैं। विद्यानुरागी को अध्ययनशील बनाने का सौविध्य प्रदान करते हैं। विद्वान् की विद्वता बढ़े इसलिए उसे पूरा अवसर देते हैं। वर्तमान आचार्य का वैदुष्य से भरा व्यक्तित्व अकादमिक कार्य करने की प्रेरणा देता है। वर्ष में तीन-चार राष्ट्रीय संगोष्ठियों के माध्यम से विद्वानों के बीच रहना उन्हें बहुत प्रिय लगता है। विमर्श, तत्व चिंतन, विश्लेषण, शास्त्रचर्या, वाद-विवाद-संवाद उनके मन के विषय हैं। यात्राएँ करना, छोटे से छोटे सांस्कृतिक धार्मिक केन्द्रों पर जाना, उनके पुनरुद्धार का क्रियान्वयन उनकी साधुता के ही मापदण्ड हैं। औदार्य इतना कि 'जिसको न दे मौला उसको दे शुजाउद्दौला' जैसी कहावत चरितार्थ करते हैं।

स्वामी रामनरेशाचार्य में सत्य कहने का अद्भुत साहस है। शरण में आए हुए को अभयदान देने का दुस्साहस भी बेमिसाल है। धर्म, समाज, सम्प्रदाय, शास्त्र, साधु-जीवन और सनातन संस्कृति के प्रति उनकी आत्यंतिक निष्ठा है। जीवन में वह कभी संक्षिप्त मार्ग का अनुसरण नहीं करते हैं। विधिवत् कर्म सम्पादन उनकी जीवन शैली है। अपनी बेबाक सम्मति के लिए वे प्रसिद्ध हैं। कन्या भ्रूण हत्या और छुआछूत की समस्या पर उनके कई साक्षात्कार देश के प्रमुख अखबारों एवं पत्रिकाओं की सुर्खियाँ बन विचारों को आंदोलित कर चुके

हैं। समसामयिक प्रश्नों और समस्याओं पर उनकी शास्त्र सम्मत दृष्टि अन्यों से सर्वथा भिन्न और कालसापेक्ष्य होती है। कालवाह्य शास्त्रीय विधानों का परिष्कार वे उसी प्रकार सरलता से कर देते हैं जैसे स्वामी रामानंद पारम्परिक आचार्य होते हुए भी लोक को महत्व देते किया करते थे। रामानन्दाचार्य के बारह प्रमुख शिष्यों में अधिसंख्य निचले वर्ग से आते थे। सभी शिष्यों पर स्वामी रामानंद की समान कृपाभरी दृष्टि हुआ करती थी। उसी मार्ग का अनुसरण वर्तमान आचार्य भी करते हैं। बारह प्रमुख गद्दियों के वर्तमान श्रीमहंत आज परम्परानुमोदित स्वरूप में विद्यमान हैं। उनका मस्तकाभिषेक वर्तमान मूल आचार्य ही करते हैं। "जाति न पूछो साधु की खासानुरी पठान। जात-पात पूछे ना कोई। हरि को भजे सो हरि का होई।। सर्वे प्रपत्ते रधिकारिणोमताः" जैसे सर्वस्पर्शी वाक्यों को वर्तमान आचार्य चरितार्थ करने की अद्भुत कला जानते हैं। रामानंदकृत वैष्णवमताब्जभास्कर में वर्णित साधु के लक्षणों का परिपालन स्वामी रामनरेशाचार्य यथावत् करते हैं।

स्वामीश्रीरामनरेशाचार्य की मान्यता है कि धार्मिक लोगों का पतन अन्यों की अपेक्षा अधिक हुआ है। नकली धर्माचार्यों और मनगढ़न्त सम्प्रदायों ने शाश्वत सांस्कृतिक मनीषा को कलंकित किया है। योग के नाम पर भोग, आचार के नाम पर अनाचार, स्वसम्वेद्य ज्ञान के नाम पर मनोनुकूल धर्म की व्याख्या, त्याग के नाम पर सम्पत्ति का एकत्रीकरण, पहचान के नाम पर प्रदर्शनप्रियता, सामान्य वेशभूषा के नाम पर चमत्कृत करने वाले परिधान, तरह-तरह के अलंकरण, साधु-संगठन के नाम पर बाहुबलियों की जमात उन्हें धर्म के स्याह पक्ष लगते हैं। अतः वे कुम्भ या अन्य विशेष अवसरों पर निकलने वाले शाही जुलूसों को प्रदर्शन मानते हैं। अहमन्यता का धार्मिक लबादा बताते हैं। सामंती प्रवृत्तियों का द्योतक कहते हैं। यही कारण है कि वह ऐसे संगठनों और धर्माचार्यों को समय-समय पर ललकारते हैं और निर्भय होकर धर्म के सत्यपक्ष का स्थापन करते हैं। उनका धर्मवेष्टित स्वाभिमान सत्य पर चलने की प्रेरणा देता है। साधु संत के ये क्रियाकलाप और आचार-विचार समाज के लिए प्रेरक बनते हैं।

बहुत निकट से देखने पर वर्तमान आचार्य में स्वामी रामानंद की झलक दिखती है। स्वामी रामानंद को मानवीय गुणों और दैवी चेतना के कारण श्रीराम का अवतार कहा जाता है। उदारता, त्यागवृत्ति, कृपालुता, सहृदयता, मनस्विता, अभेद दृष्टि और मनुष्यता की पराकाष्ठा पर पहुँचा व्यक्ति ही देवत्व की ओर प्रस्थान करता है। त्रेता युग में श्रीराम के ये गुण उन्हें ईश्वरत्व तक ले जाने में समर्थ हुए थे। मध्यकाल में वही स्थिति स्वामी रामानंद की थी। नाभादास ने उन्हें

अनायास ही नहीं भगवान राम की तरह संसार के उद्धार का 'द्वितीय सेतु' कहा था। कहना है कि वर्तमान आचार्य में भी उन गुणों का अवतरण भरपूर मात्रा में दिखता है। रामानन्द सम्प्रदाय का विस्तार, उसकी लोकप्रियता, दिनानुदिन बढ़ती सर्वग्राह्यता इसके प्रमाण हैं। वर्तमान आचार्य ने श्रीमठ में स्वामी रामानंद की मात्र चरण पादुका से हरिद्वार में निर्माणाधीन अद्वितीय श्रीराममंदिर तक सम्प्रदाय विस्तार का सुदीर्घपथ प्रशस्त किया है। लाखों भक्तों में रामभाव का प्रसार, कई प्राचीन मंदिरों का कायाकल्प, नये आश्रमों का निर्माण, दशाधिक रामभाव प्रसार यात्राओं का सम्पादन, आचार्यत्व के पचीस वर्ष में पचीस दिव्य चातुर्मास महोत्सवों का संयोजन, अनेक राष्ट्रीय विमर्शों का प्रवर्त्तन, संस्कृति-संस्कृत और आधुनिक आर्य भाषाओं का सम्पोषण आपके अवतारी एवं लोकसंग्रही व्यक्तित्व के परिचायक हैं। बहुत मंथन करने पर ज्ञात होता है कि रामानंद सम्प्रदाय में कुछ ही व्यक्तित्व लोक प्रसिद्धि को प्राप्त कर सके हैं। वे ही प्रेरणा के पुंज भी हैं। स्वामीरामानंद, स्वामीभगवदाचार्य और स्वामीरामनरेशाचार्य उसमें अग्रगण्य हैं।

वर्तमान आचार्य के रामदरबार में भी भाँति-भाँति के पार्षद हैं। कोई रागदरबारी है तो कोई रामदरबारी और कोई दोनों का समन्वित रूप साहित्यानुरागी है। कोई तीनों से न्यारा अपनी न्यूनताओं में ही परेशान है। जिसकी जैसी मति वैसी उसकी गति। पर वर्तमान आचार्य की गुण ग्राहकता अद्वितीय व विलक्षण दिखायी पड़ती है। चाहे कोई कुटिल-कुचाली हो, चाहे स्वार्थ में आकण्ठ डूबा हो अथवा संकीर्णता का शिखर स्पर्श करता हो, सबको काटते, छाँटते गुणवान को आप अपना बना ही लेते हैं। व्यक्ति की यह अचूक पहचान वर्तमान आचार्य की विलक्षण प्रतिभा है। यह कोई लिखी-पढ़ी बात नहीं, देखा-सुना तथ्य है। कबीर के शब्दों में–

लिखा पढ़ी की है नहीं देखादेखी बात।
दूल्हा दुलहिन मिल गये फीकी पड़ी बरात।।

साधु-संत के ये गुण मन की मैल को धुल व्यक्ति को निर्मल बना देते हैं, तत्त्व को ग्रहण कर निःतत्त्व को सूपवत फटक दूर कर देते हैं। वैरागी साधु का यह स्वभाव समाज के लिए शुभंकर और गुणवान के लिए प्रेरणास्पद होता है। कबीर की साखी पुनः कौंधने लगती है–

साधू ऐसा चाहिये जैसे सूप सुभाय।
सार-सार को गहि रहे थोथा देय उड़ाय।।

●

# गुणग्राहक : स्वामीरामनरेशाचार्यजी

**देवर्षि कलानाथ शास्त्री**

सत्य और पाखंड, कथनी और करनी, लोभ और त्याग की अपार भूलभुलैया से सने हुए आज के युग में यदि किसी ऐसे धर्माचार्य को, ऐसे पीठाधीश को देखना हो जिसके हृदय में धर्म, समाज और देश तीनों के प्रति निष्ठा की त्रिवेणी बहती दिखती हो, जिसकी वाणी में संस्कृत, हिन्दी जैसी देश भाषाएँ और आधुनिक जगत् की नवीनतम जानकारी की प्रतीक अंग्रेजी– इन तीनों की त्रिवेणी बहती सुनाई देती हो तो उत्तर भारत की सन्त परम्परा के शिखर प्रवर्तक स्वामी रामानन्द के काशी स्थित प्रधान पीठ श्रीमठ के अधिपति स्वामी श्री रामनरेशाचार्य जी के दर्शन कर लीजिए। रामानन्द संप्रदाय समूचे देश में फैला है, रामभक्ति की सरिता समूचे देश में बह रही है, भगवाधारी साधु भक्ति की धारा बहाते घूम रहे हैं किन्तु इन सारे प्रयासों के बीच सन्तों के सन्देश का चरम लक्ष्य क्या होना चाहिए इसका ध्यान कम ही मठाधीशों को होगा। रामभक्ति के साथ इस देश की धरती का हित भी पोषित हो, प्रत्येक अंचल में आपसी सद्भाव पनपे इस हेतु देश के दूर-दूर के नगरों और उपनगरों में चातुर्मास्य कर स्वामी रामनरेशाचार्य जी ने उसके साथ सामाजिक समस्याओं पर समाजनेताओं और चिन्तकों की विचारगोष्ठियों और प्रवचनों की नयी परम्परा स्थापित की, भारतीय वैदुष्य परम्परा को पनपाने के उद्देश्य से प्रत्येक चातुर्मास के अवसर पर एक शिखर मनीषी को एक लक्ष-मुद्रात्मक **'रामानन्द पुरस्कार'** देने का क्रम प्रारम्भ किया, उत्तर दिशा में गंगा तट पर हरिद्वार में विशाल राममन्दिर की स्थापना की योजना चलाई और काशी में गंगा की लहरों के बीच चाँदनी में शास्त्रीय संगीत की पीयूषधारा बहाने वाले एक उत्सव का शुभारम्भ किया। ये सब योजनाएँ धर्म के साथ समाज को जोड़ने का एक अनुपम तरीका समझाती हैं और हमारे भारतीय धर्म में देश की धरती के लिए स्वामिभक्ति किस प्रकार

---

अंग्रेजी-संस्कृत के प्रसिद्ध विद्वान जयपुर।

पिरोई हुई है यह बात स्वयं आचार्यजी बड़े नायाब ढंग से समझाते हैं।

मैं उनकी एक मान्यता से इतना प्रभावित हुआ जिसे आजतक एक पल के लिए भी नहीं भूल पाता कि विश्व के कुछ धर्म शायद ऐसे हों जिन्हें इस धरती के अर्थात् अपने देश के पेड़-पौधों, नदी नाला, पशुपक्षियों से कोई लगाव न हो, इन सब को नीचे छोड़ कर परम पिता से जा मिलना ही उनका प्राप्तव्य हो पर हमारा धर्म, हमारे देश की इस धरती की नदियों को गंगा-यमुना को, यहाँ के पशु-पक्षियों को, गाय को माता समझता है, वे धर्म के साथ अविभाज्य रूप से अनुस्यूत हैं, सारा देश कुम्भ के मेले के लिए एक साथ अलग-अलग नदियों के तट पर मिलता है, वृक्षों की पूजा करता है, उन तीर्थों की यात्रा करता है जो उत्तर से दक्षिण तक, पूर्व से पश्चिम तक फैले हैं। हमारा धर्म राष्ट्र की धड़कनों में बसता है। यह हुई धर्म, समाज और देश की त्रिवेणी। स्वामी रामनरेशाचार्य जी के प्रवचनों में धर्म के साथ वर्तमान समाजनीति का संदर्भ इसी कारण आप हर बार पाएँगे।

सर्वप्रथम पन्द्रह वर्ष पूर्व जयपुर में ही मैंने उनके दर्शन किए थे क्योंकि उनका यह तरीका सुविदित है कि वे जिस नगर में जाते हैं वहाँ के जननेताओं आदि के अलावा विद्वानों से मिलना भी उनके कार्यक्रम में शामिल होता है। ऐसे कुछ अन्य धर्माचार्य भी होंगे जो ऐसा करते होंगे किन्तु श्रीरामनरेशाचार्य जी ऐसा अवश्य करते हैं। तब मुझे ज्ञात हुआ कि ये काशी के शिखर स्तर के संस्कृत विश्वविद्यालय में नव्य न्याय का विधिवत् अध्ययन मूर्धन्य विद्वानों से कर चुके हैं और नव्यन्याय की प्रतिपादन शैली जो वैदुष्य की कसौटी मानी जाती है इनकी रग-रग में रची-बसी है। इसके अतिरिक्त इनके भाषणों में अधुनातन जानकारी, देश विदेश की घटनाओं के संदर्भ जो सुनने को मिलते हैं वे आधुनिक भाषाओं और सामान्य ज्ञान पर इनका अधिकार प्रमाणित करते हैं। ये पंडितों के बीच नव्यन्याय की भाषा बोलते हैं, पत्रकारों के बीच उच्च हिन्दी, सामान्य जन के बीच सब तरह की भाषाएँ। भाषणों तक सीमित न रहकर उस प्राचीन परम्परा की स्वामी रामानन्द जैसे कालजयी सन्तों के सन्देशों की ग्रन्थाकार में अवतारणा की जाए यह योजना भी इनके मानस में चलती रहती है। तभी तो इन्होंने स्वामी रामानन्द के जीवन और सन्देश पर हिन्दी में उपन्यास लिखने को प्रेरित किया। साहित्यकारों को वह लेखन हिन्दी तक ही सीमित नहीं रहा, संस्कृत और अंग्रेजी में भी फैल गया। शंखनाद और काशीमार्तण्ड शीर्षक उपन्यासों में रामानन्दजी की जीवनी दो लेखिकाओं

ने हिन्दी में निबद्ध की, "पायसपायी" शीर्षक उपन्यास में राजस्थान के साहित्यकार डॉ. दयाकृष्ण विजय ने। इसका अंग्रेजी अनुवाद भी आचार्य जी ने प्रकाशित कर दिया है, संस्कृत अनुवाद भी। यह हुई संस्कृत, हिन्दी और अंग्रेजी की त्रिवेणी।

यह तथ्य तो इनसे परिचित सभी अनुग्रह भाजनों को सुविदित ही होगा कि देश के अनेक मूर्धन्य विद्वानों को इनका अत्यन्त आत्मीय स्नेहानुग्रह प्राप्त है। उनसे मिलकर, उनसे शास्त्रचर्चा कर इन्हें आनन्द मिलता है। संस्कृत, हिन्दी, अर्थशास्त्र, विज्ञान आदि के अनेक प्रोफेसर इनके स्नेह पात्रों की सूची में हैं। यह स्मृति आज मुझे कचोट रही है कि ऐसे विद्वानों में से कुछ हमें छोड़ गए हैं। उज्जैन के प्रो. राममूर्ति त्रिपाठी जो वरिष्ठ आचार्य, मूर्धन्य विद्वान् थे और इनकी सभी विद्वत्गोष्ठियों में सम्मिलित होते थे, दिवंगत हो चुके हैं। अन्य अनेक विद्वान् इनके सानिध्य में, हमारी अपनी परंपरा का योजनाबद्ध, व्यवस्थित परिचय प्रदान करने वाले साहित्य के विरचन, संकलन और प्रकाशन में लगे हुए हैं यह क्या कम सौभाग्य की बात है?

वन्दनीय स्वामी रामनरेशाचार्य जी में एक उल्लेखनीय विशेषता जो मैंने पाई वह यह है कि इनके व्यक्तित्व में, स्वभाव और आचरण में कोई पूर्वाग्रह, कट्टरता, दंभ, अलगाव या पीठाधीशत्व का रौब नहीं है। सबसे सहज भाव से मिलते हैं। कुछ पीठाधीशों में वह 'रिजर्वेशन' होता है, वह रौबदाब सा दिखता है जो पहले राजाओं, नवाबों आदि में होता था, फिर आई. सी.एस., आई.ए. एस. आदि पदधारियों में होने लगा, उन सबके लगभग कालातीत हो जाने पर कभी-कभी राज्यपालों या न्यायपालों जैसे पदधारियों में होने लगा, कभी-कभी तो पाँच वर्ष के सिंहासन पर बैठने वाले मंत्रियों में भी देखा जाने लगा था। मठाधीशों में तो ऐसी "गरिमा" या "महिमा" का मुखौटा होना ही चाहिए। आचार्य जी में वैसा बिलकुल नहीं है। स्वामी रामानन्द के अवतरण का यही तो अवदान है कि ऊँच-नीच का सारा भेद समाप्त कर सारी मानवजाति को एक आराध्य के समर्पित भक्त और उसकी संतान होने के कारण अपना भाई-बहन समझ कर निश्छल बर्ताव करें।

मैं तो सर्वदा यही मान्यता व्यक्त करता रहा हूँ कि रामानन्द संप्रदाय जैसे संघटनों में 'भंडारा' अर्थात् सबका सहभोज करने को जो शिखर स्तर की मान्यता और अनिवार्यता मिली हुई है, जो गुरुद्वारों के लंगरों में भी देखी जा सकती है उसका उद्देश्य यही तो है कि मध्यकाल में जो भेदभाव

आ गए थे, भाँति-भाँति की श्रेणियाँ बन गयीं थीं जिनसे समाज आहत हो चला था, उन सबकी समाप्ति का व्यावहारिक माध्यम ऐसे सहभोज, भंडारे आदि लंगर बन जाएँ। तभी सारा समाज एक जुट हो सकेगा, देश में एकता आएगी। आज तो साधुओं में भी जो श्रेणियाँ पैदा होने लगी हैं, "महामण्डलेश्वर", पीठाधीश आदि न जाने कैसे-कैसे मान सूचक पदनाम होने लगे हैं– जिन्हें 'ऑनरिफिक्स" कहा जाता है, जो एक 'हायरार्की' पैदा करते हैं– जो सोने के छत्रवाले "साधुओं" और चाँदी के चोबदारों से घिरे सन्तों को शाही रौबदाब पहना देते हैं। यही सिखाया था क्या शंकराचार्य जी ने हमें जो कहते थे– "सैवाहं न च. दृश्यवस्त्विति दृढ़ा प्रज्ञापि यस्यास्ति चेत् चाण्डालोस्तु, सतु द्विजोऽस्तु गुरुरित्योषा मनीषा यम।" (मनीषा पञ्चकम्)। अस्तु।

स्वामी रामनरेशाचार्य जी के सहज स्वभाव में आप वैसा अलगाव या दंभ नहीं पाएँगे। उन्होंने श्रीमठ की गरिमा को एकदम शिखर तक पहुँचा दिया है। गंगातट पर एक छोटे से परिसर रूपी श्रीमठ के आसपास के अनेक भवनों को उसके साथ जोड़ कर विशाल बना दिया है। उनके अति आदर शतश: शीर्षस्थ राजनेताओं, मंत्रियों, उद्योगपतियों आदि में देखा जा सकता है क्योंकि वे समाजहित को साथ लेकर चलते हैं किन्तु उनके व्यक्तित्व में कभी किसी ने इस बात का दंभ रंचमात्र भी न पाया होगा। वे दूसरे को समुचित सम्मान देकर जिस प्रकार आवर्जित करते हैं उस कारण अनेक विद्वान् उनके हाथों बेमोल बिके हुए हैं। मैं तो कुछ भी नहीं हूँ। फिर भी जो स्नेहानुग्रह उनका मुझे प्राप्त है उस कारण मैं भी उन बेमोल बिके हुए स्नेह-पात्रों में से एक मानता हूँ अपने आपको।

आज जब वे अपने जीवन के छह दशक पूरे कर रहे हैं, साधनापूत जीवन की षष्टिपूर्ति पर उन्हें सम्मानांजलि देते हुए हृदय प्रहृष्ट है। प्रमुख मठाधिपति के रूप में भी हम उनके यशस्वी कार्यकाल की रजत जयन्ती मना रहे हैं। उन्होंने गंगातट पर स्थित इस पीठ की कितनी श्रीवृद्धि की है, उसे कहाँ से कहाँ पहुँचाया है, सभी जानते हैं। इस रजत जयन्ती के अवसर पर उन्हें समर्पित है हमारी प्रणामांजलि।

●

# षष्टिपूर्ति पर शत्-शत् अभिनंदन

रमाकांत आंगिरस

भारतवर्ष के सांस्कृतिक इतिहासक्रम में वैष्णव भक्ति-परम्परा के योगदान का यद्यपि विशद् विवेचन हुआ है फिर भी परिवर्तन के प्रतिदिन बदलते परिवेश में बहुतकुछ कहने की अपेक्षा बनी रहती है। पाञ्चरात्रनामक वैष्णव आगम के चतुर्भुज रूप में विशिष्टाद्वैती श्री सम्प्रदाय ने इस देश के संवेदनशील चिन्तकवर्ग को भक्ति दर्शन का विमर्श देकर यह सिद्ध कर दिया था कि भक्तिदर्शन केवल व्यक्तिमुमुक्षु के लिए न होकर सम्पूर्ण लोकचेतना को उसके असमंजस भाव से छुड़ाकर सामंजस्य में जीना है। स्वयं भगवान् विष्णु हों, नरनारायण हों, श्रीराम हों, श्रीकृष्ण हों, हनुमान 'एवम् भीष्म या अर्जुन हों सभी अद्भुत उद्यम और पराक्रम की प्रतिमूर्तियाँ हैं। लोकजीवन में फैले वैषम्य के विरुद्ध निरन्तर संघर्ष करते हुए धर्मस्थापना की ध्वजा को उठाए रखने का संकल्प यह रामावत वैष्णवभक्ति का केन्द्रीय प्रस्थान है। क्षुद्र सत्त्ववाले चित्त से इस मार्ग का अनुसरण संभव नहीं वृहत् सत्त्व की प्राप्ति के लिए भगवत्प्राप्ति के शरणागत होना पड़ेगा।

बड़े आश्चर्य की घटना है कि जिस समय हमारे इतिहास के मध्ययुग में श्री रामानन्दाचार्य रामभक्ति के विश्वरूप की स्थापना कर गए थे उसके प्राय: कुछ बाद में ही दक्षिण भारत के ही शुद्धाद्वैती आचार्य वल्लभ श्रीकृष्ण को रसिक शिरोमणि सिद्ध करके उन्हें गोकुल की ग्राम चेतना से बाहर जाने ही नहीं देना चाह रहे थे। परिणाम स्वरूप रामभक्ति के वैरागियों पर सज्जनपालन और दुष्टदलन का सारा दायित्व आ गया। एक ऐसा जन-जागृति आन्दोलन खड़ा हो गया जिसने महाराष्ट्र गुजरात समेत सम्पूर्ण उत्तरभारत को आत्मसात् कर लिया। एक ऐसा रामराष्ट्र जिसमें हरिभक्ति के प्रबल प्रवाह में अर्थहीन जीवन की रूढ़ियाँ और जाति पाँति के कठिन बाँध भी मिट्टी के कच्चे किनारों की तरह बह गए। कबीर और तुलसी की वाग्धारा ने एक ऐसे नरराष्ट्र का

---

संस्कृत वाङ्मय के विख्यात विद्वान, चण्डीगढ़।

संकल्प खड़ा कर दिया जो अपने स्वरूप में न तो सेमेटिक या इस्लामी राष्ट्रभावना से ग्रस्त थी न ही पश्चिमी राष्ट्रों के नस्लवादी प्रभाव से आक्रान्त थी। वह निश्चित रूप से स्वदेशी स्वराज्य का सूर्योदय था। ऐसी राष्ट्रभावना "परस्परं भावयन्तः" अर्थात् आपस में एक दूसरे को पुष्ट करने वाली यज्ञभावना पर आश्रित थी। राम विश्वामित्र यज्ञ के स्वयम् संरक्षक थे। यज्ञ संस्कृति का नामान्तर ही राघव संस्कृति है जिसके पुरोधा श्री रामानन्दाचार्य आज से प्रायः ७१५ वर्ष पूर्व भारतवर्ष के प्रयाग स्थळ में आविर्भूत हुए। युग की आवश्यकता के अनुसार विकृत रूढ़ियों का अपाकरण और स्वस्थ लोक संस्थाओं के नवीकरण का दायित्व अपने पर लेकर भक्तिदर्शन को सक्रिय सामाजिक अर्थवत्ता के साथ अन्वित कर दिया जिसके परिणामस्वरूप वैष्णव चिन्तनधारा ने लोकचेतना को प्रत्यक्ष एवम् परोक्षरूप में संघर्ष के लिए जागरूक बना दिया।

वर्तमान में उसी परम्परा में ऐसा ही गुरु दायित्व का निर्वाह करने का स्वामी श्रीरामनेरशाचार्य महाराज ने बीड़ा उठाया है। परिस्थितियाँ और भी अधिक विषम हैं क्योंकि स्वतंत्रता के नाम पर निरंकुश व्यवहार प्रायः लोक जीवन के सभी वर्गों में व्याप्त हो रहा है। कुछ लोग श्रद्धा को विचारहीनता के साथ जोड़कर अधर्म को ही धर्मस्थापना समझने लगे हैं। दूसरी कोटि के लोग नास्तिकता को तर्कशीलता का गौरव मानते हुए उपभोक्तावादी जीवन शैली को लोक जीवन में संचारित करने में दिन-रात प्रयत्नशील हैं। और शासनतन्त्र लोक-व्यवस्था के प्रति तटस्थ है। ऐसी स्थिति में श्रीरामनरेशाचार्य महाराज द्वारा भारतवर्ष के प्रत्येक प्रान्तभाग में अपने चातुर्मास यापन कार्यक्रमों और निरन्तर वर्षभर राघव-संस्कृति के योग, यज्ञ, दान, तप आदि पावन कर्मों के संपादन द्वारा जो धर्मचक्र का प्रवर्तन कार्यक्रम चल रहा है वह निश्चय ही इस देश के विभिन्न धर्मों, मतों एवम् सिद्धान्तों के विकट अन्तराल के बीच श्रीरामसेतु के निर्माणकार्य जैसा विराट् कर्म है।

भारतीय संस्कृति के मौलिक जीवन मूल्यों के संरक्षण एवम् संवर्धन का अबतक का कार्य, आधुनिक आचार्यों एवम् उनके आन्दोलनों के द्वारा जो भी संपादित हुआ, वह किसी न किसी प्रकार से पश्चिमी जीवनदृष्टि से प्रभावित होकर ही अग्रसर हुआ है। किन्तु जो कार्य पंचगंगा घाट श्रीमठ के वर्तमान नेतृत्व में चल रहा है वह नितान्त निर्मल स्वयंभू जल जैसा है। गोस्वामी श्री तुलसीदास के रामचरितमानस वाली शैली, जिसमें लोकानुकूल समस्त परम्पराओं का शास्त्रीय सार भी रहे और साधारण जन का मंगल

भी निहित हो अर्थात् जहाँ पर लोक और शास्त्र विमुख होकर नहीं अभिमुख होकर प्रवाहित हों अथवा गोस्वामी जी के शब्दों में "कीरति भणिति भूति भल सोई सुरसरि सम सब कहँ हित होई" ऐसी ही सुरसरि गंगा के समान सबका हित संपादन करने वाली सारस्वत धारा का प्रवाह श्रीरामनरेशाचार्य महाराज द्वारा जो हो रहा है वह उनके व्यक्तित्व का श्रीरामकार्य के सम्मुख निश्छल समर्पण है जिसमें श्रीमान् मारुति जी की प्रेरणा का अभिनिवेश है।

वास्तव में रामानन्दी चिन्तनधारा के व्रत को जो पहचानते हैं उन्हें पता है कि यहाँ एक विलक्षण प्रकार का विरक्ति और अनुरक्ति का सामंजस्य है। रामकार्य के प्रति घोर अनुरक्ति और अपने व्यक्ति प्राणों के प्रति परमा विरक्ति। इसी ने मध्यकालीन समस्त धर्मसाधनाओं को प्रभावित किया और वर्तमान में स्वातंत्र्य संग्रामी महात्मा गाँधी जैसे सत्याग्रहियों को। आज भी भारतरत्न पं. भीमसेन जोशी और लता के समवेत स्वरों में गाए जा रहे भजन में उसी रामानन्दी जीवनदर्शन का संक्षिप्त सार को कानों-से सुनते हुए उसके वर्तमान प्रतिनिधि श्रीरामनरेशाचार्य के सान्निध्य का अनुभव कर रहा हूँ–

**राम का गुणगानकरिए, राम प्रभु की भद्रता का सभ्यता का मान करिए।। राम के गुण-गुणचिरन्तन, राम सुमिरन है रतन धन, मनुजता को कर विभूषित मनुज को धनवान् करिए, सगुणब्रह्म स्वरूप सुन्दर सुजनरंजन भूप सुखकर राम आत्मा रामआत्मा राम का ही ध्यान धरिए–**

इन्हीं शब्दों में श्रीरामनरेशाचार्य महाराज के सर्व सम्पूर्ति कर रामकार्य की निरन्तर अग्रसरता के लिए मंगलकामनाएँ। उनकी षष्टिपूर्ति का यह क्षण उनकी जीवनयात्रा का सुन्दरकाण्ड सिद्ध हो यह रामजी से अपेक्षा है।

●

# जगद्गुरुरामानन्दाचार्य-श्रीमद्रामनरेशाचार्याणां किमप्यद्भुतमाचार्यत्वम्

वेदप्रकाशः शास्त्री

प्राक् कालादेव प्रवर्तमाने स्थावरजङ्गमात्मके भूमण्डलेऽस्मिन् काले काले मधुरया वाचा सत्यपूतामृचमुद्गिरन्तो महर्षयः, धर्मतत्त्वमुद्भासयन्तः समर्चनीयाचारा धर्मनिष्ठा धर्मव्रतपरायणा धर्माचार्याः, अविकलया तत्त्वमीमांसया विद्वज्जनमनांसि समुल्लासयन्तो दर्शनशास्त्र निष्णाता दर्शनाचार्याश्च संबभूवुः। तैश्च सर्वैरेव जगत्कल्याणं हृदि निधाय यथोचितं कर्मजातं प्रकल्पितम् परं केचनाचार्याः स्वसुखपक्षं प्रक्षिप्य परसुखपक्षमेव हृदि संस्थाप्य परोपकाराय जीवन्ति, परोपकाराय गच्छन्ति, परोपकाराय पठन्ति, परोपकाराय प्रवदन्ति, प्रतिदिनं परोपकारायैव जीवितं प्रधारयन्ति। एवंविधानामद्भुताचाराणामाचार्याणामनुपमितायां मालायां मध्ये मणिरिव प्रभासते श्रीमद्रामनरेशाचार्यः।

श्रीमद्रामनरेशाचार्याणां जीवनं सोमरूपं विद्यते। यथा जनाः सोमं निपीय (सोममिति ज्ञानरसं भक्तिरसं) अमृता भूत्वा संसारे निर्भया सन्तो विचरन्ति तथैव श्रीमद्रामनरेशाचार्याणां मुखात् निःसृतं विद्यारसं ज्ञानरसं सोममिव निपीय अमृतविद्याविभूषिता भूत्वा आनन्दमनुभवन्ति। यथा पतितपावनीगङ्गा स्वक्रोडस्थान् सर्वान् मनुष्यान् पुनाति तथैवाचार्यप्रवराः स्वसमीपस्थान् भक्तजनान् जिज्ञासुपरस्परापरिपोषकान् ज्ञानरसवत्या विद्यया विभूषयन्ति पुनन्ति च। यथेन्दुं धवलवर्णं निशायां निरीक्ष्य शीतरश्मिजन्यं सुखं लभन्ते प्रकाशं प्राप्नुवन्ति जनाः, तथैव आचार्यप्रवरं काषायवस्त्रधारिणं समवलोक्य तत्सन्निधिञ्च संप्राप्य प्रवचनमाकर्ण्य ज्ञानस्यैश्वर्यं लब्ध्वा ज्ञानपिपासवो नितरां भवन्त्यानन्दिताः। महतां गुणगणनामनुसरन्तो विद्यावतां ज्येष्ठाः परगुणाख्याने स्वहृदयस्य विशालतां प्रकटयन्ति। महापुरुषाः स्वगुणनिदर्शने नापितु परगुणनिदर्शने भवन्ति समुत्सुकाः। प्रमुखानामाचार्याणां स्वरूपं मित्ररूपमाधत्ते। मितात् त्रायत इति मित्ररूपतामासाद्य ज्ञानाल्पतां निराकृत्य आचार्यः स्वशिष्याणां ज्ञानसद्भावे सद्विचारे सत्कार्ये

पूर्वोपकुलपतिः, गुरुकुल-काँगड़ी-विश्वविद्यालयः, हरिद्वारम्

चानल्पतां निदधाति। स्वाध्याये स्वभक्तान् नियोजयति पापाच्च निवारयति। श्रीमतां पुण्यवतां आचार्यप्रवराणां श्रीरामनरेशाचार्याणां जीवने वेदमन्त्रोऽयं प्रत्यहं प्रकाशते–

**सोमा पवन्त इन्दवो अस्मभ्यं गातुवित्तमाः ।**
**मित्रा स्वाना अरेपसः स्वाध्यः स्वर्विदः ।।**

(सामवेद, पूर्वार्चिकः)

स्मृतिकारेण "आचार्यो ब्रह्मणो मूर्तिरिति" निगद्य आचार्यस्य ब्रह्मरूपत्वं प्रतिष्ठापितम्। यः खलु ब्रह्मविद् भवति स एव भवत्याचार्यः। उक्तमपि ब्रह्मविद् ब्रह्मैव भवति। एतेन ज्ञायते यत् ज्ञानदृष्ट्या सर्वोत्तमः सर्वश्रेष्ठः सर्वमान्यश्च भवत्याचार्यः। यथा प्रतिदिनमुदेति सूर्यः स चोदयनकाले निखिलमपि तामसं दूरं विधाय निखिलमपि जगद्वस्तुजातं प्रकाशयति, समस्तवर्णाश्रमस्थानां मानवानां प्राणिनां च सर्वेषां निद्रां समाप्य स्वस्वकर्मजाते प्रयोजयति। आचार्यो विद्याभानुना समेषां निजचरणागतानां सर्वविधमविद्यान्धकारं निवारयन् विद्यामृतं पाययति वास्तविकं जीवनमार्गं निर्दिशति सार्वत्रिकमभ्युदयञ्च समुदीर्य सुखं प्रयच्छति ग्लानिमपहरति दैन्यं निन्दति पुरुषार्थं च प्रवर्धयति। वेदविनिःसृते समग्रशास्त्रचये पदे-पदे विद्यते समर्चनीयचरणानामाचार्याणां महत्त्वम्। तत्र आचार्याणां प्रोद्भूतमद्भुतमनश्वरं दैवीसम्पद्द्वयं निगद्यते। एकं दिव्यं धनं वित्तं वा विद्यानाम्ना व्यपदिश्यते द्वितीयं च दिव्यं धनं तपोनाम्ना निगद्यते। आचार्यः सर्वात्मना तपस्तप्त्वा निगूढं पापं प्रहन्ति विद्यया च अविनश्वरं परमात्मामृतमश्नाति। अतएव शुद्धाचारैस्तपोःपूतैरनूचानैः शास्त्रेषु प्रोच्यते–

**तपो विद्या च विप्रस्य निःश्रेयसकरं परम् ।**
**तपसा किल्विषं हन्ति विद्ययाऽमृतमश्नुते ।।**

मनु. १२-१०४

निर्वचन-प्रकार-प्रकटननिपुणेन प्रज्ञावतामग्रिणा श्रीमता यास्काचार्येण वेदप्रयुक्तम् आचार्यपदं यया विशिष्टया प्रतिभया प्रभाषितं नूनमेव तद्वैशिष्ट्यावहम्। आचार्य आचारं ग्राहयति, आचिनोत्यर्थान्, आचिनोति बुद्धिमिति वा। जगद्गुरुश्रीमद्रामानन्दाचार्यश्रीमद्रामनरेशाचार्यैः बहूनां स्वभक्तानां सेवकानां समुपासकानां जीवनं शुद्धाचार-सदाचार-रमणीयाचारचर्यया रमणीयं कृतम्। नैकविधानां परिचितानां चरणसेवासमर्पितजीवनानां सुश्रवणभावनया सत्सङ्गमुपागतानां जिज्ञासूनां शिष्यकल्पनां श्रोतॄणां मनसि नवीना नवीना अर्थाः सम्प्रकाशिताः। स्वचरणसरोजमधिश्रितानां सारस्वतपुत्राणां स्वशिष्याणां

समधिगतमन्त्राणां ब्रह्मविद्यास्नातानां ब्रह्मवर्चसां आध्यात्मिकचिन्तनपवित्रा पावमानी सुमतिराविष्कृता। श्रीमद्भिः समाराधितसरस्वतीप्रदत्तवरप्रसाद-प्रसन्नवदनैराचार्यश्रेष्ठैः श्रीरामनरेशाचार्यैर्ज्ञानयज्ञःसमारब्धः। सर्वान् भौतिकान् यज्ञान् ब्रह्मज्ञानयज्ञः समतिशेते। ब्रह्मज्ञानयज्ञस्याधिष्ठातृपदे राजमानाः सर्वजनप्रशस्या नमस्याश्च सन्ति श्रीमदाचार्य-प्रवराः श्रीरामनरेशाचार्याः। यज्ञं सफलयितुं स एव प्रभवति यं जनाः सर्वात्मना प्रशंसन्ति, यं विविधाः प्रपञ्चप्रकाराः कदापि न विकलयन्ति, यं कामक्रोधसमुत्थितानि व्यसनानि न व्यथयन्ति, महाधिकारसम्पन्नो नृपतिरपि प्रयुक्तेनापि प्रबलेन बलेन मनागपि यं प्रचेतसं न व्याकुलयति, यं सर्वे वर्णाः सश्रद्धया धिया ध्यायन्ति, यं मधुवृष्टिकरं पर्जन्यमिव मन्यन्ते जनाः, यं सर्ववर्णाश्रमप्रमुखकर्मोपदेष्टारं यथोचितं नियोक्तारं च कवीश्वरमिव भक्तजनाः अभिनन्दन्ति। अस्मिन् ब्रह्मयज्ञानुष्ठानाधिष्ठातृगुणगणनाक्रमे श्रीमतां श्रीरामनरेशाचार्याणां नाम समेषां जिह्वाग्रे राजते। वेदे यज्ञसञ्चालकस्य गुणान् गणयन् मन्त्रो विद्यते, स मन्त्रो मान्याचार्याणां जीवने प्रतिबिम्बतो विभाति। यथा–

**नराशंसः सुषूदतीमं यज्ञमदाभ्यः। कविर्हि मधुहस्त्यः ।।**

• ऋग्वेद ५.५.२

आचार्याणां जिजीविषा नात्मने अपितु परात्मने सर्वात्मने वा प्रभवति। आचार्या ब्रह्मवर्चसो अर्चनीयाचाराः सन्तः केवलं ब्रह्मवादिनीं परम्परामेव जीवन्ति जीवयन्ति च। सोमं परोपकारं परहितम् उमया सहितं च सोमं सदा ध्यायन्ति अत एव भवन्ति सोमिनः। आचार्याणां वाचि चतसृणामपि विद्यानां निःस्यन्दः परमात्मगुणगीतानां मधुरो रसः प्रतिक्षणं रामनामोच्चारणरसश्च प्रवहति। सर्वास्ववस्थासु सर्वेषु कालेषु सर्वेषु देशेषु ब्रह्मज्ञानमेव वर्धयन्ति विद्वज्जनशिरोधार्या आचार्याः। अध्वरदीक्षायां सुदक्षाः, धर्मरहस्योद्घाटने प्रवीणाः प्रतिष्ठावन्तो भवन्त्याचार्याः। ब्रह्मविद्यां प्रवदतां तपोधनानां सत्यवादिनां प्रज्ञावतां-चाचार्याणां बुद्धौ सर्वं हस्तामलकवद् विभाति नहि किमपि भवति तेषामविदितम्। आचार्याणामैषमः प्रभावः प्रमुखतया वेदमन्त्रे विद्यते। वेदमन्त्रोऽयं श्रीमतां रामनरेशाचार्याणां जीवने फलितो विभाति—

**ब्राह्मणासः सोमिनो वाचमक्रत ब्रह्म कृण्वन्तः परिवत्सरीणम्।**
**अध्वर्यवो धर्मणः सिष्विदाना आविर्भवन्ति गुह्या न केचित् ।।**

ऋग्वेद ७.१०३.८

ज्ञाननिधयो ज्ञाननेत्राश्च भवन्त्याचार्याः। ते स्वज्ञानाग्निना परेषां ज्ञानाग्नि समेधयन्ति। विशिष्टाः खल्वाचार्या ऋतमेव शंसन्ति। ऋतशंसकान् तान् कदाचिदपि

कोऽपि ऋतेतरे प्रसङ्गे न प्रवर्तयति। आचार्या ऋते-परमात्मव्यवस्थायां श्रद्धां वितन्वाना ऋते सीदन्तीति व्युत्पत्त्यनुसारं भवन्ति ऋषिपदाभिधेयाः। आचार्याणां जीवनं सदैव ऋजुतामातनोति। तेषां मनसि सन्देहस्य विचारविरोधस्य कातर्यस्य दैन्यस्य कौटिल्यस्य च लेशोऽपि क्षणमपि न तिष्ठति। आचार्याः प्रकाशपुत्रा भवन्ति तेषां निखिलमपि जीवनं प्रकाशमयम्। यथा दिवि प्रकाशेतरस्य नास्त्यवसरः सूर्यस्य प्रकाशरूपत्वात् तथैव आचार्याणां जीवने नास्ति कदाप्यज्ञानतिमिरप्रवेशो दिवसपुत्रत्वात्। ब्रह्मचर्यव्रतपरिपालकानां ब्रह्मविद्यानिष्ठावताम् आचार्याणां वृत्राश्चासुराश्च सुजेया भवन्ति न भवन्ति दुर्जेयाः। आचार्या ब्रह्मविद्याबलेन आत्मरसं पायं पायं अङ्गिरसवतां प्रथमे हि भूत्वा विप्रज्येष्ठानां श्रेष्ठानां भवन्त्यर्चनीयाः। एवंविधा आचार्या यज्ञरूपस्य सर्वव्यापकस्य परमात्मनः परमानन्दपदं प्राप्तुं प्रभवन्ति। श्रीमद्रामनरेशाचार्याणां जीवनमिमे गुणाः वेदमन्त्रनिर्दिष्टाः समभिनिविष्टाः सन्ति। प्रस्तूयते मन्त्रः–

**ऋतं शंसन्त ऋजु दीध्याना**
**दिवस् पुत्रासो असुरस्य वीराः ।**
**विप्रं पदमङ्गिरसो दधाना**
**यज्ञस्य धाम प्रथमं मनन्त ।**

अथर्ववेद, २०.९१.२

तपोनिष्ठानां विद्यावदातचेतसां पापशून्यानां गुणाश्रयाणां सुकृतलोकमधिश्रितानाम् आचार्याणां शरीरे सप्तऋषयःप्रतिहिता भवन्ति। यथा–

**सप्त ऋषयः प्रतिहिताः शरीरे सप्त रक्षन्ति सदमप्रमादम् ।**
**सप्तापः स्वपतो लोकमीयुस्तत्र जागृतोऽअस्वप्नजौसत्रसदौ च देवौ ।।**

यजुर्वेद. ३४.५५

आचार्यश्रेष्ठाः श्रीमद्रामनरेशाचार्याः स्वयं स्वाध्यायरताः स्वयं धर्मचर्यापालितजीवनाः स्वयमार्षप्रवचनपरिपाटिपोषणनिपुणाः सन्ति। अत एवाधार्मिकानां जीवनं धर्मज्योतिषा प्रकाशयन्ति, उत्कृष्टसाहित्याध्ययनविमुखान् शास्त्रस्वाध्याये प्रेरयन्ति। शिष्यसेवकभक्तपरम्परामुपागतान् सर्वान् सुखयितुं मातरि पितरि गुरौ च देवभावमास्थापयितुं परमं उपदेशामृतं पाययन्ति। सरलं जीवनं रक्षितुं, कुटिलं मार्गं परित्यक्तुं, दिव्यं भावमाधातुं, देवप्रसादं ग्रहीतुं, देवताराधनाधिगतं वैभवं भोक्तुं, सरस्वत्यर्चनासमुद्भूतं दिव्यं मधुरसं पातुं, सुखकरे परोपकारे रन्तुं, यज्ञविधानमनुसंधातुं, दुःखहरं सुखप्रदं च सन्मार्गमन्वेष्टुमेव प्रतिदिनमुपदिशन्ति सत्योपदेष्टार ऋतावानाः सुकृतिनो

भद्रभावभासितान्त:करणा: श्रीमदाचार्यशिरोमणय: श्रीमद्रामनरेशाचार्या:।

श्रीमतां श्रीरामनरेशाचार्याणां तेजस्वितां वर्चस्वितां मनस्वितां सच्चिन्तनपरतां सदसद्विचारकुशलतां मतिमतां श्रेष्ठतां वाक्कलापरिष्कार-प्रवीणतां सकृन्नापि त्वसकृत्परीक्ष्य सूक्ष्मेक्षणकरणधुरीणै: प्रबुद्धैराचार्यप्रमुखै: समुचिते काले शिष्टपरम्परया सह श्रीमद्जगद्गुरुरामानन्दाचार्याणां प्रतिष्ठिते पदे श्रीरामनरेशाचार्याणां पुण्याभिषेक: कृत:। तत: प्रभृति जगद्गुरुश्रीमद्रामानन्दाचार्य इति विशिष्टपदालङ्कारेण समलङ्कृता: सन्ति श्रीमद्रामनरेशाचार्या:। जगद्गुरुश्रीमद्रामानन्दोपाधिसत्कृतानां श्रीमतामाचार्याणां श्रीमद्रामनरेशाचार्याणां सम्प्रति पञ्चविंशतिवर्षाणि सुखवर्षाणीव सुकृतवर्षाणीव च स्मृतिपथमुपनेयानि सन्ति। पञ्चविंशतिवर्षेषु श्रीमद्भिराचार्यरामनरेशाचार्यै: परं सुखकरं शिवकरमुल्लासकरं यन्महत्कार्यं प्रकल्पितं तदतीव रमणीयमस्ति। श्रीमतां धीमतां वरेण्यैराचार्यप्रवरै: काशीस्थसुप्रसिद्धश्री पीठाधीश्वरत्वमङ्गीकृत्य तत्परम्पराम-विरलतया परिपाल्य स्फीतं यश: समर्जितम्। विविधशास्त्रपारङ्गतविद्वज्जननगर्यां काश्यां वसतिं कुर्वाणैराचार्यप्रवरै: स्वकीयमपरिमितं सामर्थ्यं प्रकट्यदभिरनेकानि शोधसम्मेलनानि सम्पादितानि। निखिले भारते यत्र यत्र श्रीराममन्दिराणि प्राचीनानि जीर्णानि जातानि तानि सर्वाणि मन्दिराणि पूर्णतया प्राक्कल्पनया सह नवकल्पनया पुनरपि साधनास्थलानि भगवद्रामदर्शनयोग्यानि श्रीरामकथाश्रवणपवित्राणि श्रीरामभक्ताश्रयपदानि च विधाय समुद्धृतानि संरक्षितानि च। समग्रे भारते चत्वारि कुम्भस्थानानि विद्यन्ते, तेषु सर्वेषु कुम्भस्थानेषु पूर्णकुम्भावसरे अर्धकुम्भावसरे च श्रीमद्भि: जगद्गुरुश्रीरामनरेशाचार्यै: जगद्गुरुश्रीमद् रामानन्दाचार्याणां विजयपताकामुत्तोलयद्भि: कुम्भस्थानानि सार्थकानि विधाय स्वकीयमद्भुतं वैशिष्ट्यं प्रकाशितम्। दशोत्तरद्विसहस्रतमे ख्रिष्टाब्दे कुम्भस्थाने हरिद्वारे सम्पन्ने पूर्णकुम्भावसरे विविधानि सारस्वतसम्मेलनानि विविधेषु विषयेषु समायोज्य ये विद्वांस: सम्मानितास्तत्र आचार्यशिरोमणिभिरपि स्वतप:प्रभावेण विद्यावैभवेन च सर्वे विभाविता:। 'हरिद्वार-समग्र' नामकं पुस्तकं प्रकाश्य प्रशंसनीयं कार्यं सृष्टं श्रीमद्भि: आचार्यवर्यै:। एवमेव त्रयोदशोत्तरद्विसहस्रतमे ख्रिष्टाब्दे प्रयागराजे सम्पन्ने महाकुम्भावसरे विद्वद्गोष्ठी समायोजिता, कुम्भपर्वमाहात्म्यप्रचाराय (तीर्थराज प्रयाग और रामभक्ति का अमृत कलश) नामकम् अद्भुतं ग्रन्थरत्नं निर्मितमभिवन्द्यैराचार्यप्रवरै:। परमतत्त्वोन्मेषकराणि बहूनि ग्रन्थरत्नानि निर्मितानि विद्वद्जगत्यां स्वप्रभया चकासति। हरिद्वारे समुत्कृष्टस्य विशिष्टस्य श्रीराममन्दिरस्य विलक्षणया वास्तुशास्त्रदृशा निर्माणकार्यं समारब्धमाचार्यमहोदयै:। अस्मिन् वर्तमाने

वर्षे चातुर्मास्यानुष्ठानावसरे रामराज्यावधारणा विषये हरिद्वारे पवित्रे स्थाने विद्वद्गोष्ठीमायोज्य स्वतपस्वितया यशस्विता समर्जिता।

श्रीमद्रामनरेशाचार्यैः सम्प्रति जगद्गुरुश्रीमद्रामानन्दाचार्य-निर्मलपदप्रतिष्ठितैः पञ्चविंशतिवर्षेषु कस्य विदुषो मनसि स्थानं न लब्धम्, को भारतीयो राष्ट्रचिन्तने न नियोजितः, कस्य धनिकस्य हृदये दानप्रवृत्तिर्न परिवर्धिता, कस्य स्वसेवकस्य हृदये रामभक्तिरसो न प्रवाहितः, कः शिष्यः स्वाध्यायकरणाय न प्रेरितः, को नु खलु विद्वान् मधुरया वाचा समुचितेन सम्मानेन च विद्यावर्धनाय संरक्षणाय च न प्रेरितः, कः पतितः प्रभूताश्रयप्रदानेन नोत्थापितः, को निर्बलो भावबलेन सबलो न कृतः, को विद्याविहीनो विद्यार्जनाय न प्रेषितः, यद्-यद् करणीयं तद्-तद् कृतं क्रियते, यद्-यद् अनुष्ठेयं तद्-तद् अनुष्ठितं अनुष्ठीयते च।

यद्यपि जगद्गुरुश्रीमद्रामानन्दाचार्यपदेन विभूषिता बहवो खलु मान्या वन्दनीया आचार्याः सन्ति ये निष्ठया परम्परां पालयन्तः प्रतिष्ठामावहन्ति परं गुणगणनायां तपस्वितायां स्वभावसरलतायां समत्वभावनायां च जगद्गुरुश्रीमद्-रामानन्दाचार्यश्रीमद्रामनरेशाचार्याणां स्वरूपं किमपि विलक्षणमेवास्ति। अतो वक्तुं शक्यते यद् जगद्गुरुश्रीमद्रामनरेशाचार्याणाम् आचार्यत्वं नितरामद्भुतमेवास्ति। अन्ते च, आचार्याणामद्भुतगुणगणनायामग्रतमाय श्रीमते जगद्गुरु-श्रीरामनरेशाचार्याय नमो नमः।।

●

# जगद्गुरु श्रीरामानंदाचार्य की परम्परा और जगद्गुरु श्रीरामनरेशाचार्यजी महाराज

**कमलेशदत्त त्रिपाठी**

जगद्गुरु स्वामी रामानन्दाचार्य जी महाराज का आविर्भाव तीर्थराज प्रयाग की पुण्यस्थली में हुआ। समस्त आचार्यों का आविर्भाव दक्षिण भारत में ही हुआ है, किन्तु जगद्गुरु रामानन्दाचार्य जी उत्तर भारत से प्रकट हुए। चौदहवीं शताब्दी वैक्रमी के अन्त में श्रीसम्प्रदाय के प्रधान आचार्य श्री राघवानन्द जी काशी में विद्यमान थे। श्री रामानन्द जी की दीक्षा उन्हीं से सम्पन्न हुई। दीक्षा-प्राप्ति के अनन्तर जगद्गुरु रामानन्दाचार्य जी ने समस्त भारत का पर्यटन किया और इस देश की धार्मिक और सांस्कृतिक स्थिति को बहुत निकट से समझा। रामानन्दाचार्य जी महाराज उन आचार्यों में अग्रणी हैं जिन्होंने तत्कालीन परिस्थितियों के अनुसार सनातन धर्म की परम्परा में एक अभीष्ट मोड़ प्रदान किया। उन्होंने तत्कालीन हिन्दू समाज को अपने सम्प्रदाय प्रवर्तन के साथ एक नयी दिशा दी। यद्यपि सगुण उपासना और भक्ति की प्राचीन परंपरा चली आ रही थी और भक्ति के मार्ग ने आगमों की दृष्टि के अनुसार भगवत्प्राप्ति के लिए दीक्षा की अधिगति के अधिकार का विस्तार किया, किन्तु जगद्गुरु रामानन्दाचार्य जी ने आगे बढ़कर इस अधिकार विस्तार को समुचित सैद्धान्तिक और व्यावहारिक रूप प्रदान किया। मानिकपुर के शेखतकी के साथ उनका शास्त्रार्थ हुआ था। शेखतकी सुल्तान सिकन्दर लोदी का पीर था और रामानन्दाचार्य जी महाराज उनके समकालीन सिद्ध होते हैं। उनका वर्तमान होना वैक्रम संवत् १५४६ से संवत् १५७४ के बीच में अवश्य ही सिद्ध हो जाता है। आचार्य रामचन्द्र शुक्ल ने इन अट्ठारह वर्षों के काल-विस्तार के भीतर– चाहे आरम्भ की और चाहे अन्त की ओर रामानन्द जी का स्थितिकाल माना है। शेखतकी के साथ उनके मुठभेड़ को कबीर के शिष्य धर्मदास ने उल्लिखित किया है। आचार्य रामचन्द्र शुक्ल ने उस उल्लेख को उद्धृत किया है–

भारतीय वाङ्मय के सुख्यात विद्वान काशी, वाराणसी (उ.प्र.)

**शाह सिकन्दर जल में बोरे, बहुरि अग्नि पर जाये।**
**मयमत, हाथी आनि झुकाए सिंह रूप दिखराये।**
**निर्गुण कथैं अभय पद गावें, जीवन को समझाये।**
**काजी पंडित सबे हराए पार कोउ नहीं पाये।**

आचार्य शुक्ल ने यह भी कहा है कि वैरागियों की परम्परा में आचार्य रामानन्द जी के साथ शेखतकी के वाद-विवाद की घटना को माना जाता है। अत: आचार्य का समय लगभग निश्चित है।

आचार्य रामानन्दाचार्य जी तत्त्वत: आचार्य रामानुज के बाद की पन्द्रहवीं पीढ़ी में हुए। रामानुजाचार्य जी महाराज का परलोकवास संवत् ११९४ में हुआ। एक पीढ़ी के लिए १४ वर्ष का समय मानकर पन्द्रह पीढ़ी के इस पूरे काल को लगभग ३०० वर्ष माना है और इस प्रकार आचार्य जी का समय भी वही ठहरता है जिसे आचार्य शुक्ल ने सुझाया है। श्रीरामार्चनपद्धति में आचार्य ने अपनी पूरी गुरु परम्परा दी है और इस प्रकार तत्त्वत: रामानुजाचार्य जी के मतावलम्बी होकर भी आचार्य रामानन्दाचार्य जी ने अपने उपासना पद्धति में अपनी विशिष्ट अभीष्ट रूप को भी स्थान दिया। दशरथसुत राम की उपासना रामानुजाचार्य की परम्परा में स्वीकृत थी। रामानन्द जी ने भगवान् विष्णु के अन्य अवतारों में से राम रूप को ही विशेष लोक-कल्याणकारी मानकर एक शक्तिशाली सम्प्रदाय का प्रवर्तन किया। रामानुज सम्प्रदाय में दीक्षा का अधिकार केवल द्विजों को था। किन्तु रामानन्दाचार्य जी ने दीक्षा के लिए सभी जातियों के स्त्री-पुरुष के लिए द्वार खोल दिया। उन्होंने मनुष्यमात्र को सगुण भक्ति का अधिकारी माना और इसके लिए रामायण और महाभारत की परम्परा का अनुगमन करते हुए सप्रमाण अपने सिद्धान्त की स्थापना की। यहाँ यह भी उल्लेखनीय है कि इसका यह अर्थ नहीं है कि वे वर्णाश्रम धर्म के विरोधी थे। शास्त्रानुसार वर्णाश्रमधर्म को मानते हुए भी शास्त्रीय परम्परा के अन्तर्गत ही श्रीराम की भक्ति के लिए मानवमात्र को दीक्षा का अधिकार प्रदान कर उन्होंने उपासना का मार्ग ही विस्तरित नहीं किया, एक ऐसी सामाजिक क्रांति के द्वार भी खोल दिये जिससे तत्कालीन हिन्दू समाज के लिये एक बहुप्रतीक्षित मार्ग का आरंभ हुआ, जिसे उनके शिष्य कबीरदास, रैदास, सेन नाई और गांगरौणगढ़ के राजा पीपा आदि ने स्वीकार कर एक अत्यन्त शक्तिशाली धार्मिक और सामाजिक आन्दोलन का विस्तार किया।

श्रीरामानन्दाचार्य महाराज ने 'वैष्णवमताब्जभास्कर' और 'श्रीरामार्चनपद्धति' नामक दो संस्कृत ग्रन्थों का प्रणयन किया। इसके अतिरिक्त संप्रदाय में ब्रह्मसूत्र पर 'आनन्दभाष्य' और 'भगवद्गीताभाष्य' भी उनकी ही रचना माना जाता है। आचार्य शुक्ल ने इन दो ग्रन्थों को जगद्गुरु रामानन्दाचार्य के द्वारा विरचित होने की मान्यता के प्रति सावधान रहने को कहा है। इस दृष्टि से इन दो ग्रन्थों के गंभीर आलोडन की आज भी आवश्यकता बनी हुई है।

जगद्गुरु स्वामी रामानन्दाचार्य जी विनय और स्तुति के पद भी रचकर गाया करते थे। हनुमानजी की स्तुति में गायी जाने वाली आरती उन्हीं की रचना मानी जाती है। कुछ लोग आचार्य रामानन्दजी को अद्वैत वेदान्तियों के ज्योतिर्मठ का ब्रह्मचारी स्वीकार करते हैं। इसके विषय में शुक्ल जी का अभिमत है कि हो सकता है वे कुछ दिन तक ज्योतिर्मठ के ब्रह्मचारी रहे हों और वहीं वेदान्त का अध्ययन किया हो और बाद में श्रीरामानुजाचार्य जी के सिद्धान्तों की ओर आकृष्ट होकर उसे ही अपना लिया हो।

दूसरी ओर शुक्ल जी ने ऐसी भी प्रसिद्धि का उल्लेख किया है जिसके अनुसार उन्होंने १२ वर्ष तक गिरिनार पर्वत या आबू पर्वत पर योग साधना की लेकिन 'श्रीवैष्णवमताब्जभास्कर' और 'श्रीरामार्चनपद्धति' में जो मार्ग हैं वह विशुद्ध वैष्णवभक्ति का ही मार्ग है। आचार्य शुक्ल ने इस पर कहा है कि उनकी योग साधना विषयक प्रसिद्धि का रहस्य खोला जाना भी आवश्यक है।

भक्तिकाल में जगद्गुरु रामानन्दाचार्य जी के १२ शिष्य बताये गये हैं। वे हैं अनन्तानन्द, सुखानन्द, सुरसुरानन्द, नरहर्यानन्द, भावानन्द, पीपा, कबीर, सेन, धना, रैदास, पद्मावती और सुरसरि। हमारे अपने समय में प्रसिद्ध विद्वान् आचार्य राममूर्ति त्रिपाठी ने आचार्य रामानन्द जी की शिष्य परम्परा पर विशेष रूप से कार्य किया है जिस पर और अधिक कार्य किये जाने की आवश्यकता है। जगद्गुरु रामानन्दाचार्य ने सम्प्रदाय की गंभीर दार्शनिक पृष्ठभूमि को स्थापित करते हुए चिदचित् विशिष्ट परतत्त्व श्रीराम की भक्ति का मार्ग प्रशस्त किया। अपने ग्रंथ वैष्णवमताब्जभास्कर नें उन्होंने स्वशिष्य सुरसुरानन्द जी के नौ प्रश्नों का विस्तृत उत्तर दिया है। यह उत्तर श्रीरामतारक मंत्र की व्याख्या, तत्त्वोपदेश, अहिंसा के महत्त्व, प्रपत्तिमार्ग, वैष्णवों की दिनचर्या और षोडषोपचार पूजन का निरूपण करता है। उन्होंने अर्चावतार के चार भेद स्वीकार किये– स्वयंव्यक्त, दैव, सैद्ध और मानुष। जातिभेद क्रियाकल्पादि की अपेक्षा न करने वाले भगवान् की शरण में जाने का उन्होंने उपदेश दिया–

**परां सिद्धिमकिंचनो जनो द्विजातिरिच्छञ्छरणं हरिम् व्रजेत।**
**परं दयालुं स्वगुणानपेक्षितक्रियाकलापादिकजातिभेदम्।।**

शरणागत भक्त को गुरु एवं परमभक्त की कृपा प्राप्त होनी चाहिए। इसीलिए गुरु की कृपा के साथ-साथ भगवान् श्रीराम के परम भक्त श्री हनुमानजी की कृपा प्राप्त करने के लिए आचार्यप्रवर ने हनुमान जी की स्तुति की जिसका उल्लेख किया जा चुका है।

श्रीवैष्णवमताब्जभास्कर में उपरिलिखित जिन प्रश्नों का उत्तर दिया गया है उसे सूत्र रूप में एक ही श्लोक में कह दिया गया है–

**तत्त्वं किं? किञ्च जाप्यंरघुपतिशरणैर्वैष्णवैर्ध्यानमिष्टम्,**
**मुक्तेः किं साधनं सत्सुमतिमतिमतो धर्म एकोऽस्ति कश्च।**
**धर्माणां वैष्णवास्ते गुरवरकतिधा लक्षणं किञ्च तेषाम्**
**कालक्षेपः किमाप्यं कथमुरुशुभदं कुत्र कार्य्यो निवासः।।**

इस श्लोक में सार रूप में पूछा गया कि तत्त्व क्या है? भगवान श्रीराम की शरणागति स्वीकार करने वाले वैष्णवों को क्या जपना चाहिए? उनके लिए इष्ट ध्यान क्या है? उनके मुक्ति का उत्तम साधन क्या है? अनेक धर्मों में प्रशस्त और विद्वानों की बुद्धि से परिगृहीत एक धर्म कौन सा है? उसके कितने भेद हैं, उनका लक्षण क्या है? उन वैष्णवभक्तों को कालक्षेप कैसे करना चाहिए? मोक्षप्रद किस साधन की प्राप्ति उन्हें करनी चाहिए और उनको कहाँ निवास करना चाहिए? श्री वैष्णवमताब्जभास्कर इन प्रश्नों का उत्तर देते हुए निरूपण करता है और कहता है कि एक ही सूक्ष्म चिदचित्विशिष्ट ब्रह्मतत्त्व, अचित्, चित् और ईश्वर भेद से त्रिविध हो जाता है। अचित् प्रकृति नित्य, अज्ञ, अचेतन, परम कारणभूत और अविकृत एवं विश्वयोनि है। वह नानावर्णात्मिका, अजा, त्रिगुणात्मिका सत्त्व, रज और तमस का आश्रय, अव्यक्त शब्द से वाच्य, स्वतंत्र व्यापारशून्य, परार्थ अर्थात् भगवदधीन रहने वाली तथा महत् तत्त्व और अहंकार आदि को उत्पन्न करने वाली है। जीव नित्य है, उसका आदि और अन्त नहीं है, वह चेतन है, सतत ईश्वराधीन है, सूक्ष्म से भी सूक्ष्म, शरीर से बद्ध और मुक्त आदि भेदों से अनेक प्रकार वाला, भगवान् की व्याप्ति से युक्त शरीर में रहने वाला, स्वकर्मानुसार फल भोगने वाला है और भगवान् उसके सदा सहायक हैं। मैं कर्त्ता और भोक्ता हूँ ऐसा अभिमान करने वाला जीव तत्त्वजिज्ञासुओं के जानने योग्य है।

विश्व जिससे उत्पन्न होता है, जिससे रक्षित होता है और जिसमें सब

कुछ लीन हो जाता है, जिनके तेज से सूर्य और चन्द्र आदि निरन्तर प्रकाशित होते हैं, जिनके भय से वायु बहता है, पृथ्वी नीचे सुतल में नहीं चली जाती, जो ज्ञाता है, साक्षी है, कूटस्थ है, एक है, अनन्त शुभगुणों से समन्वित है, अज्ञेय है और विश्व का धारण करने वाला है, वही ईश्वर है। यह ईश्वर ही देवताओं और विद्वानों के आराध्य हैं और शरणागत की रक्षा करते हैं। योगीजन उनके चरणकमल को प्राप्त करते हैं। समस्त वेदों के द्वारा उनका माहात्म्य वर्णित है। वे नित्य हैं, सर्वशक्तिमान् हैं, निष्पाप हैं, अजर हैं, वाणी और मन के अगोचर हैं और भगवती सीतासहित वे ही श्रीराम ईश्वर हैं।

द्वितीय प्रश्न के उत्तर में श्रीराम मन्त्र का रहस्य वर्णित करते हुए उसके स्वरूप को समझाया गया है। इस राममन्त्र के स्वरूप का विस्तृत विवेचन श्री वैष्णवमताब्जभास्कर सूत्रात्मक पद्धति से ही कर देता है। यह मन्त्र ही तारक मन्त्र है और भगवान् शिव इसका स्वयं उपदेश करते हैं। तारक मन्त्र के साथ-साथ रामद्वय मन्त्र के भी अर्थ का निरूपण श्री वैष्णवमताब्जभास्कर में किया गया है। इसी प्रकार वैष्णवमताब्जभास्कर में चरममन्त्र निरूपण में साथ-साथ ध्यान के स्वरूप का निरूपण किया गया है और तैलधारावत् अविच्छिन्न चिन्तन को ही ध्यान बताया गया है जिसमें भगवती सीता और लक्ष्मणसहित द्विभुज भगवान् राम के चिन्तन का विधान किया गया है। चतुर्थ प्रश्न के उत्तर में मुक्ति के साधन पर विचार किया गया है और मुक्ति के साधन स्वरूप मार्ग का विस्तृत विवेचन किया गया है। इसमें वैष्णवों के आचार और व्रतादि का विस्तृत विवरण है। पंचम प्रश्न के उत्तर में वैष्णव धर्म के मूल तत्त्व का कथन करते हुए अहिंसा का तथा अर्चावतारादि का विवेचन है। षष्ठ प्रश्न के उत्तर में वैष्णवों के भेद का निरूपण करते हुए प्रपत्ति-मार्ग के अनुसार भक्तों के स्वरूप एवं भेदों का विवेचन किया गया है तथा मुक्तों के भेद का निरूपण किया है और भागवत और केवल भेद से आत्मानुभूति परायण और दुःखभावनैकपरायण भक्तों का भी निरूपण किया गया है। सप्तम प्रश्न के उत्तर में वैष्णव के लक्षण का निरूपण है और अष्टम प्रश्न के निरूपण में वैष्णवों के निवासयोग्य स्थान का विवरण दिया गया है। नवम प्रश्न के उत्तर में वैष्णवों को किस प्रकार कालयापन करना चाहिए, इसको बताया गया है और अन्त में वैष्णवमताब्जभास्कर का समापन प्राप्य परतत्त्व के निरूपण से होता है।

जगद्गुरु आचार्य श्रीरामनरेशाचार्य जी महाराज आचार्य जगद्गुरु

रामानन्दाचार्य जी महाराज की परम्परा में आज स्वामी रामानन्दाचार्य जी महाराज विद्यमान हैं। संप्रदाय के रक्षण, पोषण और प्रसार में उनकी बहुत बड़ी भूमिका आज दिखाई पड़ती है। उन्होंने विधिवत् काशी में शास्त्रों का अध्ययन करते हुए सतत साधना में लीन रहकर आचार्यपद को प्राप्त किया है। आचार्य बदरीनाथ शुक्ल जैसे महान नैयायिक से उन्हें न्याय की शिक्षा मिली है। उनके व्यक्तित्व में वैदुष्य के साथ-साथ भक्तों के ऊपर उनकी अपार कृपा बनी रहती है और जगद्गुरु रामानन्दाचार्य जी की परंपरा में ही वे सनातन धर्म की रक्षा में निरन्तर सन्नद्ध और समकालीन हिन्दू समाज के कल्याण के लिए अत्यन्त श्रेयस्कर मार्ग का विस्तार करने में जागरूक रहते हैं। सम्पूर्ण भारत में उनकी अनुग्रह यात्रा चलती रहती है किन्तु काशी के पंचगंगा घाट स्थित श्रीमठ में उनका निरन्तर स्थायीरूप से रहने का प्रसाद इस काशी नगरी को प्राप्त है।

काशी नगरी के धार्मिक परिवेश और संस्कृति में उनकी उपस्थिति का अनुभव निरन्तर होता रहता है। हाल के वर्षों में उन्होंने शारद महोत्सव के अवसर पर पंचगंगा घाट पर संगीत के विराट् कार्यक्रम का आयोजन किया है जिससे काशी की संस्कृति को और भारतीय संस्कृति को पोषण मिल रहा है। सामाजिक और सांस्कृतिक रूप से सचेत धर्माचार्यों के मध्य वे अग्रणी धर्माचार्य हैं जो सामाजिक सद्भाव की दिशा में निरन्तर सक्रिय रहते हैं।

जगद्गुरु रामानन्दाचार्य की परंपरा में श्री रामनरेशाचार्य जी महाराज का महत्त्व हमारे समकालीन परिदृश्य में इसलिए और भी बढ़ जाता है कि जब हम देखते हैं कि पिछले दो सौ वर्षों में उपनिवेशवादी शक्तियों में हिन्दू समाज के विघटन के लिए भयंकर षडयन्त्र किये हैं और इस समाज को जातिभेद में बाँटने के उपक्रम को शिखर पर पहुँचा दिया। ऐसी परिस्थिति में जगद्गुरु रामानन्दाचार्य जी के संदेश को दूर-दूर प्रसारित करते हुए न केवल उपासना के मार्ग को सुदृढ़ करने की आवश्यकता है, बल्कि दलितों और नारीवर्ग को विशेष रूप से उनका गौरव प्रदान करने के लिए आचार्य जगद्गुरु रामनरेशाचार्य जी के उपदेशों के प्रसार और उस पर आचरण की आवश्यकता है। हमें दृढ़ विश्वास है कि भगवती सीता और भगवान् राम के अनुग्रह से हमें उनका सतत सान्निध्य प्राप्त होता रहेगा और वे सनातन धर्म की प्रतिष्ठा की अपने उद्देश्य में निरन्तर आगे बढ़ते चले जायेंगे।

●

# लोकनायक श्रीरामनरेशाचार्य

**बलदेव वंशी**

प्रत्येक युग में आर्त्त मानवता के त्राण हेतु कृष्ण अवतार लेते हैं। 'संभवामि युगे युगे' के कथनानुसार भारतीय चिंतन धारा इस तथ्य को सिद्ध-पुष्ट करती आयी है। कृष्ण के युग द्वापर से ही नहीं आदि-अनादि काल से हम इसे चरितार्थ पाते हैं। अत: वेद काल से ही यह परम्परा ऋषि-मुनियों के लोकनायक हो कर उपस्थित-अवतरित होने के रूप में चरितार्थ रही हैं। वैष्णव परम्परा में राम, कृष्ण हुए, तो बाद में हम बुद्ध-महावीर को गोरखनाथ को पाते हैं।

इसी लोक परम्परा की अगली कड़ी के रूप में हम स्वामी रामानंद जी को पाते हैं, जिन्होंने दलित, उत्पीड़ित वर्ग को तथा समूचे नारी वर्ग को अपने स्नेह, सम्मान के समान आसन पर बैठाया और आत्मिक-सामाजिक न्याय की गरिमा से मंडित किया। अपने समय के अति क्रांतिकारी निर्णय एवं संकल्प को कार्यान्वित करने के लिए दिशा-दिशा एवं वर्ग-वर्ग के, भिन्न कार्यों से सम्बद्ध आस्तिकों को अपना शिष्य बनाया। कबीर, रविदास, धन्ना, सेन आदि पुरुष संतों के साथ दो नारी संतों को हम रामानंद जी के शिष्य-प्रकाश वृक्ष में सुशोभित पाते हैं।

वर्तमान में एक भव्य श्रीराम मंदिर के लोकार्पण के समय जगद्गुरु रामानंदाचार्य पद प्रतिष्ठित आचार्य जी को हम दलित-उत्पीड़ितों के साथ हुए अन्तिम-अन्याय के लिए प्रायश्चित करते हुए पाते हैं तथा भव्य राम मंदिर के चारों द्वार खोलने के आदेश देते हुए देखते हैं। यह नव मानवता के धरती पर विकसित होने के चरण के रूप में स्थापित होने का युग है जो उन्हें लोक नायक प्रतिष्ठापित करता है।

अत: इसे हमने सृष्टि के आरंभ की घटना से उठाया है। फिर सतयुग, त्रेता, द्वापर के संदर्भ-संकेतों को स्पर्श करते स्वामी रामानंद के युग तक आये हैं। प्रत्येक युग में राम ने लोक नायक की भूमिका निभायी है। त्रेता के राम की भाँति स्वामी रामानंद की लोकोन्मुखी भूमिका है जो सम्पूर्ण समाज

---

भारतीय संत वाङ्मय के विद्वान, फरीदाबाद (हरियाणा)

को उसकी समग्रता में जाग्रत कर संगठित करती है।

इन्हीं रामानंद की गद्दी पर विराज रहे स्वामी रामनरेशाचार्य की भूमिका रूप में हम स्वामी रामानंद जी का अगला और वर्तमान चरण देखते हैं, जो दलित उत्थान और नारी स्वाभिमान के नये आदर्शों को ही स्थापित नहीं करते; प्रत्युत उच्च वर्गों की ओर से निम्न वर्गों के प्रति जाने-अनजाने किये गये अन्याय के प्रति क्षमा याचना भी करते हैं तथा भारतीय समाज का एक भव्य भवन, महामानवीय एकत्व आत्मीय स्वरूप भी खड़ा करते हैं।

**महामानव मंदिर**

(महा मानव मंदिर बनकर तैयार हो गया है। रामनवमी का दिन है। इस मंदिर को लोक को अर्पित करने, राम के विग्रह की प्राण-प्रतिष्ठा का मुहूर्त निकट आ रहा है। आचार्य रामनरेशाचार्य के मन में तूफान उठ रहा है। विचारों का तूफान। संस्कारों की टकराहटों का तूफान। भावनाओं का तूफान। सूर्योदय भी होने वाला है। आचार्य रातभर सो नहीं सके। झंझावातों में घिरे रहे। धीरे-धीरे उनके चेहरे की रेखाएँ दृढ़ होने लगीं। आँखों में एक अपूर्व चमक जगी जो आलोक में बदलती गयी। मानो वह कोई बड़ा, अपूर्व महान निर्णय लेने वाले हैं और उनकी दृष्टि युग-युगों के पार देखती हुई कलियुग से द्वापर, त्रेता, तक फैलती गई है। सृष्टि-आरंभ के निरभ्र, निर्धूम आकाश की ब्रह्मवेला में पहुँच कर थक गयी है। अब आचार्यश्री के चेहरे पर हल्की-सी स्मिति रेखा उभर आयी है। सारा तनाव जाता रहा। लगता है सारे तूफान धीरे-धीरे सीमित हो रहे हैं। झंझावात थम रहे हैं। मानों कोई बड़ा स्पष्ट निर्णय ले लिया गया है। आंतरिक वैचारिक द्वन्द्व,तेज झंझावातों की संगीत-ध्वनियाँ भी अब शांत, संतुलित, मधुर-मदिर ध्वनियों में परिवर्तित हो गयी हैं।

महामानव मंदिर के द्वार पर, जो पूर्व दिशा में खुलता है, लोगों का महा जमाव भी हजारों की संख्या में लहरें ले रहा है। आज महा मानव मंदिर में प्रवेश का दिन है। युगों-युगों के बने अवरोध टूटेंगे। सबको ही उनके राम के, महामानव के दर्शन होने हैं। सब जाति, वर्ण, सम्प्रदाय, धर्म के लोगों को निर्धन, धनी, दानी व कंगाल को समान रूप से आज राम की गोद में बैठने का अधिकार मिलने वाला है।

गयी रात। गहरे ऊहापोह में पड़े रहे आचार्य जी की मंदिर का एक ही द्वार खोला जाए और वह भी सवर्णों के लिए ही या सभी द्वार सबके लिए, सर्वजन के लिए। अब इस द्वन्द्व और संघर्ष से बाहर निकल चुके

हैं। मंदिर में प्रात:कालीन देव-जागरण की ध्वनियाँ, घंटियाँ-घड़ियाल बजते रहे हैं, तभी आचार्य श्री अपने कक्ष से बाहर निकले। ऊपर की ओर आकाश को निहारा। फिर सधे कदमों से सीढ़ियाँ चढ़ते हुए प्रथम तल पर पहुँचे ही थे कि द्वार पर एकत्रित भक्तजनों ने उन्हें देखते ही, जय श्रीराम के जयकारों से आकाश गूँजा दिया। आचार्यश्री कुछ क्षण एकत्रित जन समुदाय को देखते रहे। फिर स्वयं भी–

**आचार्य श्री–** (पूरे ऊँचे स्वर में) जय सियाराम ( का उद्घोष करते हैं।)

**जन समुदाय–** (उत्तर में और भी जोश में) (जय श्री राम! जय श्री राम! जय श्री आचार्य जी! जय हो! जय हो!

**आचार्य श्री–** महा मानव मंदिर के सभी द्वार खोल दो। (इतना सुनते ही जन समुदाय तुमुल नाद करते हुए जय श्रीराम! जय श्री आचार्य! कहते हुए भीतर की ओर दौड़ कर प्रवेश करता है। मंदिर की घंटियाँ, घड़ियाल, शंखनाद ऊँचे ध्वनि में बजने लगते हैं। लोगों की भीड़ बड़े जोश में 'जय सिया राम' और 'जय श्री आचार्य' के नारे लगा रही है। उन्हें आचार्यश्री के साथ खड़े प्रबंधक और संत शांत रहने को कहते हैं।)

**प्रबंधक–** शांत हो जाओ, भाईयो। आचार्य श्री को सुनें।

**संत अनंतानंद–** शांत हो जाएँ। शांत हो जाएँ। (थोड़ी देर बाद धीरे-धीरे लोग शांत हो जाते हैं)

**आचार्य श्री–** (भक्तों, यह दिन धरती पर पुण्य भूमि भारत की और सभी भारतजनों की विजय का दिन, विजय उत्सव है। जिस मंदिर में आप खड़े हैं इसका नाम ही मानव मंदिर है। धरती पर निवास करने वाले सभी देशों, धर्मों, संप्रदायों के लोगों का यह मंदिर है। आज भारत में हिन्दुओं के इस मंदिर के द्वार सब मानवों के लिए खुल गए हैं। आज से मानवता का इतिहास पुन: एक करवट ले रहा है। हिन्दू धर्म करवट ले रहा है। हिन्दू धर्म जो वास्तव में एक विशाल मानव धर्म है, उसने सभी के लिए अपनी बाहें फैला दी हैं। अब से पुनः एक महामानव-युग का प्रारंभ होता है। हिन्दू, मुस्लिम, सिख, ईसाई, जैन,बौद्ध, पारसी, सभी के लिए अपना प्यार-उपहार बाँटने के लिए हिन्दू धर्म ने अपने हृदय एवं बाहें फैला दी हैं। राम केवल घट-घट वासी हिन्दुओं के नहीं, सभी के हैं। सबके लिए हैं।

**सामूहिक–**(इतना सुनते ही) पुनः जय-जयकार होने लगती है।

**जयकारा–** जय सियाराम, जय आचार्य श्री।

**प्रबंधक–** (उन्हें पुनः शांत रहने को कहते हैं)– शांत! शांत! भाईयो। अभी आचार्यश्री कुछ और महत्वपूर्ण घोषणाएँ करने वाले हैं। (भीड़ शांत होने पर आचार्य श्री पुनः)–

**आचार्यश्री–** (चेहरे पर उभर आये पसीने को पोंछने के बाद भक्तों! प्रेमियों! इस महा मानव मंदिर में खड़े हुए हम सब का यह धर्म बन जाता है कि हम संकल्प लें और विश्वभर के सभी मानवों तक यह संदेश पहुँचायें कि हम सच्चे मानव ही नहीं महा मानव बनकर दिखायेंगे। अपने आज तक के सारे भेदभाव, शत्रुताभाव भुलाकर एक ईश्वर की, एक अल्लाह, एक गॉड की संतान बनकर सबको समान, सबको अपना मान-सम्मान से गले लगाएँगे। (पुनः पुनः जयकारों की गूँज सुनाई देती है– जय सियाराम, जय आचार्य श्री... किन्तु तुरन्त ही स्वयं शांत हो जाती है। आचार्य श्री जयघोष थमने की प्रतीक्षा में कुछ क्षण रुक कर, पुनः)

**आचार्यश्री–** एक और अंतिम बात मुझे विराट् मानव समाज से यह कहनी है कि सब जीवों में राम का निवास हैं। हिन्दू मानवों में तो बोलते हँसते गाते हुए राम के दर्शन करते हैं, ऐसा मानते हुए उनसे अन्य बंधुओं के प्रति दलितों, आदिवासियों, धर्मेतर लोगों के प्रति किन्हीं भूलों, भुलावों, भ्रमों के कारण यदि कोई अत्याचार, अन्याय हुए हों तो हम खुले सच्चे और राममय मन से उनसे क्षमा माँगते हैं। (इतना सुनते ही भीड़ में पुनः अपूर्व उत्तेजना व्याप जाती है। अनेक लोगों की आँखों से अविरल अश्रुधाराएँ बहने लगती हैं। जय-जय तुमुलनाद पुनः आरंभ हो जाता है। जय सियाराम! जय आचार्य श्री के साथ कुछ लोग एक दूसरे से बातें करते हुए)

**लोग–** ऐसा तो कभी किसी महात्मा ने नहीं कहा!

**एक स्वर–** अरे क्षमा याचना कर दी!

**दूसरा स्वर–** अरे ऐसी महानता!

**तीसरा स्वर–** ऐसी उदारता!

**चौथा स्वर–** हमारे तो सारे घाव भर गए!

**पाँचवाँ स्वर–** आज तो सचमुच महामानव के दर्शन हो गए! (साथ ही साथ 'जय सियाराम', 'जय आचार्य श्री' का घोष)

आज मैं चारों दिशाओं में युवा वाहिनियों को रवाना करता हूँ कि सोये हुए को जगाएँ। जागे हुए को खड़ा करें और खड़ा हो गये लोगों को देश की, समाज की समानता, एकता, स्वतंत्रता की दिशा में चलने को प्रेरित

करें। (तभी युवकों की तीन टोलियाँ हाथों में केसरिया रंग का ध्वज लिए गीत गाती हुई मंच पर एक परिक्रमा करती हुई सामने की ओर मंच से नीचे उतर कर जनता में विलीन हो जाती हैं। चौथी टोली मंच पर गाती हुई परिक्रमा करती रहती है। इतने में पीछे की ओर पर्दा गिरता है और साथ ही भजन के बोल उभरते हैं।

**सामूहिक गीत**– (गुरुनानक देव द्वारा रचा गया शब्द)

**ईश्वर अल्ला एक उपाया ईश्वर के सब बंदे**
**एक नीर ते सब जग उपजिया कौन भले, कौन मंदे।...**

(इसी गीत का अंत होने से पूर्व ही नाटक मंडली के कलाकार जलते-जगमगाते दीपक लेकर पंक्तिबद्ध होकर मंच पर आते-पंक्ति से जुड़ते जाते हैं। शेष कुछ लोग जले हुए दीपक सभागार में आगे की दो-तीन पंक्तियों में खड़े लोगों को थमाते जाते हैं। तभी गीत समाप्त हो जाता है। इसके साथ ही पूरे सभागार में बत्तियाँ रौशन हो जाती है) गीत गूँजने लगता है–

**देश धर्म के नाम आज फिर देनी है कुर्बानी,**
**गाँव-गाँव कूँचे-कूँचे में गूँजे संतों की बानी।**
**हिन्दू-मुस्लिम एक हो गए, ब्राह्मण दलित समान,**
**नारी-पुरुष वेद बाँचते, सबका सकल जहान।**
**जागो उठो चलो मिल जुलकर कटें सब कष्ट क्लेश,**
**आदेश हुआ है सबको अब फिर रामानंद-नरेश।**
**विश्वभाग्य-विधाता होवे, भारत देश महान,**
**समता न्याय शांति व्यापे, संतों का संविधान।**

●

# सन्त मिलन-सम सुख जग नाहीं

**विवेकी राय**

कहा गया है कि 'सन्तमिलन सम सुख जग नाहीं", सो, ऐसा ही दुर्लभ सुख एक दिन हमें मिल गया और वह भी दिल्ली जैसी महानगरी में। इसे मैंने माना, ईश्वर की महती कृपा मेरे ऊपर रही क्योंकि यह भी कहा गया है 'बिनु हरि कृपा मिलहिं नहिं सन्ता।' मेरे मित्र श्री वीरेन्द्रकुमार राय माध्यम बने। उन्होंने जगद्गुरु रामानन्दाचार्य स्वामी श्री रामनरेशाचार्य जी महाराज के अखिल भारतीय चातुर्मास महोत्सव की चर्चा की। वह दिल्ली के अशोक विहार-स्थित महाराज अग्रसेन भवन में गत २ जुलाई ०४ ई. से ही चल रहा था। अनायास उक्त चर्चा के साथ कई बातें स्मरण आ गयीं। प्रथम तो यह कि पूज्य महाराजजी के दर्शनों का सौभाग्य चार वर्ष पूर्व अपने गाजीपुर शहर में ही मिल गया था। उस समय जगद्गुरु रामानन्दाचार्य सप्तशताब्दी महोत्सव (२००० ई.) चल रहा था। इस उत्सव का उत्स श्रीमठ पंचगंगाघाट, काशी था जिसे श्री रामभक्ति-शाखा की लोकचेतना का गोमुख कहकर आख्यायित किया गया है तथा जहाँ से अपनी सुविचारित सुविस्तृत धर्मयात्रा क्रम में परम पूज्य स्वामीजी महाराज का यात्रामार्ग में पड़नेवाले गाजीपुर शहर में पदार्पण हुआ था।

इस स्मरण के साथ, इस यात्रा से जुड़ा एक कार्यक्रम स्मृति में उभरा, परम पूज्य स्वामी जी महाराज ने गाजीपुर के प्रमुख बुद्धिजीवियों और विद्वानों की एक विचारगोष्ठी आयोजित कर धर्म-चर्चा के साथ ही शहर के पाँच विशिष्टजनों को रामनामी दुपट्टे से आशीर्वादित करते हुए उन्हें श्रीमठ की ओर से संकल्पित सप्तशताब्दी महोत्सव की स्मृति में प्रशक्ति-पत्र प्रदान किया। इन अनुगृहीत लोगों में एक मैं भी था। मैं अपने को प्रशस्तियोग्य बुद्धिजीवी या विद्वान् नहीं मानता। हाँ, साहित्य की सेवा में अवश्य लगा रहता हूँ। परम पूज्य स्वामी जी महाराज ने मुझ साहित्यसेवी को जो सम्मान दिया, उसकी किन शब्दों में बड़ाई की जाय? 'बड़े स्नेह लघुन पर करहीं।' सगुण-

---

कथाकार, बड़ी बाग लंका, गाजीपुर, (उ.प्र.)

निर्गुण रामभक्ति परम्परा के इस मूल आचार्यपीठ श्रीमठ (पंचगंगा, काशी) की यह परम्परा ध्यानाकर्षक है। समय-समय पर विभिन्न देशव्यापी कार्यक्रमों के विशेष आयोजनों में विभिन्न परम्परित धार्मिक कार्यों के अतिरिक्त विद्वज्जनों की संगोष्ठी, उन्हें पुरस्कृत-सम्मानित करने के आयोजन और उनके अभिनन्दन आदि जैसे कार्यक्रम उक्त आचार्यपीठ की ओर से परमपूज्य स्वामी रामनरेशाचार्य जी महाराज के सान्निध्य में बराबर सम्पन्न होते रहते हैं। सो, उस धर्मयात्रा में गाजीपुर में वह एक धर्मचर्या-संगोष्ठी और सम्मानसभा आयोजित हो गयी। अद्भुत स्नेह मिला पूज्य महाराज जी का।

फिर वैसा ही परिदृश्य चार वर्षों बाद दिल्ली में अत्यन्त आह्लादकारी, विस्मयकारी रूप में उपस्थित हो गया। जैसा कि ऊपर लिख चुका हूँ, दिल्लीवाले दिन चातुर्मास महोत्सव की सूचना श्री वीरेन्द्र कुमार राय से मिली तो प्रसन्नता के साथ वहाँ पहुँचने और पूज्य महाराज जी के दर्शनों की योजना चटपट बन गयी और अगले दिन ८ अगस्त रविवार को हम लोग पहुँच गये। वीरेन्द्र जी के अतिरिक्त मेरे मार्गप्रदर्शक हाई कोर्ट के एक वकील श्री एल.बी.राय और सहारा इंडिया से जुड़े एक पत्रकार श्री कमलेश कुमार राय भी थे। महाराजा अग्रसेन भवन अभी कुछ दूर था कि अशोक विहार के उन स्थलों पर जहाँ से सड़क मुड़ती थी, दिव्य चातुर्मास-महोत्सव के बड़े-बड़े भव्य बैनर दिखायी पड़ने लगे। बैनर के नीचे से गुजरते समय गाड़ी में बैठे-बैठे दिव्यता की एक स्फूर्तिदायी अज्ञात अनुभूति हुई। संभवतः यह इसलिये हुई कि पूज्य महाराज के प्रति हार्दिक श्रद्धाभाव और भावात्मक लगाव था। तभी एक अटपटा विचार मन में आया, क्या साथ बैठे मित्रों के मन में भी ऐसी कोई दिव्यता की अनुभूति हो रही होगी? फिर समाधान भी मन ने ही कर दिया। यदि वैसा न होता तो दिल्ली जैसे अति व्यस्त नगर के ये विशिष्ट जन अपना आधा दिन का समय क्यों इस सन्तदर्शन कार्य के लिए व्यय करते? सभी तो आते नहीं। जिन के भीतर भाव है वही तो आते हैं।

मुझे एक घटना याद आयी। वृन्दावन के निधुवन में अपने एक मित्र के साथ घूम रहा था। बहुत पवित्रता और दिव्यता का रोमांचक अनुभव हो रहा था। हम लोगों से कुछ आगे-आगे श्वेत वस्त्र में एक बहुत संभ्रान्त महिला चल रही थी। मैंने अपने मित्र से कहा 'सुनते हैं कि अब भी इस वन में कभी-कभी विशेष कर रात में नित्य एक बार भगवान् श्रीकृष्ण की वंशीधुन बज उठती है। क्या ही अच्छा होता कि हम लोगों को भी सुनायी पड़ जाती। इस पर मेरे मित्र ने कहा 'वह सबको सुनायी नहीं पड़ती'। हम लोगों की

इस बातचीत ने उस देवी की चाल को कुछ धीमा कर दिया था। चलते-चलते ही उन्होंने कहा 'हाँ ठीक कह रहे हैं। वह वंशीधुन सबको नहीं सुनायी पड़ती। जब भगवान् श्रीकृष्ण थे तब भी वह सुनायी सिर्फ गोपियों को ही पड़ती थी, क्योंकि उनके भीतर भाव था।'

इस प्रकार भावसंसार की दिव्यता में डूबे हम लोग गन्तव्य तक पहुँचे। पूरे परिवेश में आध्यात्मिक ऊर्जा व्याप्त अनुभूत हुई। जहाँ नित्य पूजन-अर्चन, स्तोत्रपाठ, हवन, तर्पण, प्रवचन, स्वाध्याय, मंगलाशीर्वचन, विविध महोत्सव, भजन-कीर्तन और यज्ञ आदि कार्य सविधि सम्पन्न हो रहे हैं, वहाँ की हवा ही कुछ और है, पूरी तरह मन को बदल देनेवाली। कहाँ याद रहता है ऐसे स्थानों पर पहुँचकर संसार का प्रपंच? जो मन घर पर एकान्त साधना में खाली नहीं हो पाता वह ऐसे ऊर्जस्वित स्थलों पर पहुँचकर अनायास खाली हो जाता है। यह अपूर्व लाभ हमें मिल रहा था परन्तु हम लोगों को अपने खाली मन में प्रतिष्ठित पूज्य स्वामीजी महाराज का दर्शन करना तात्कालिक अभीष्ट था।

एक सक्षम अधिकारी सेवक भक्त ने कहा दर्शनों के पूर्व आप लोग प्रसाद ग्रहण कर लें। निर्देश उचित था। नीचे श्रद्धालु भक्तजन और साधुसन्तों के प्रसाद-ग्रहण का कार्यक्रम चल रहा था। साधुजन प्रसाद पानेवाले और साधुजन ही प्रसाद वितरित करनेवाले। पंक्ति में बैठे हम लोग भी साधु हो गये। वास्तव में वहाँ कोई असाधु नहीं था। रह ही नहीं सकता कोई असाधु वहाँ पहुँचकर। दिव्य सत्संग की व्याप्त सूक्ष्म तरंगों की छुअन से कोई कैसे बच सकता है? तन तृप्त, मन तृप्त। महाराजा अग्रसेन भवन-परिसर में इस दिव्य चातुर्मास महोत्सव-काल में प्रकटी नयी आध्यात्मिक दिल्ली को हार्दिक साधुवाद!

भवन के ऊपरी तल पर एक शान्त कक्ष में परम पूज्य स्वामी जी महाराज के दर्शन हुए। आनन्द आ गया। सर्वप्रथम उन्होंने प्रसाद ग्रहण करने के विषय में पूछा जो सम्पन्न हो चुका था। हाँ, उन्होंने जिस फूल झड़ती, मुस्कान, सुवासित और स्नेहसुधा-सिक्त वाणी में उक्त जिज्ञासा की थी उसने प्रसाद की तृप्ति में और वृद्धि कर दी। मगर इस वृद्धि की सीमा कहाँ थी? ज्ञानभक्ति-विग्रह स्वरूप सन्त के दर्शनों से तृप्ति कहाँ होती है? उनके सान्निध्य के सम्बन्ध में और अधिक समय की चाह बनी ही रह जाती है। कितने सौभाग्यशाली हैं विभिन्न प्रान्तों से आये वे श्रद्धालु भक्तजन जो संसार को अपने पीछे छोड़ दो मास के लिए इस महोत्सव में आये हैं और महाराजा अग्रसेन भवन में उतरे इस मुक्तक्षेत्र में अपूर्व स्वर्गसुख लाभ के भागीदार

हो रहे हैं। हम संसारी लोगों के पीछे यह एक विकट दुर्भाग्य लगा रहता है कि ऐसे अवसर मिलते भी हैं तो 'छन बन मन, छन सदन सुहाहीं' वाली मन:स्थिति बाधक बन जाती है। मगर इतना भी क्या कम था? 'एक घड़ी आधो घड़ी...।' थोड़े समय में ही भरपूर सत्संगसुख प्राप्त हो गया था।

पूज्य स्वामी जी महाराज को नीचे सुसज्जित विशाल कक्ष में नियमित प्रवचनकार्य सम्पन्न करने के लिए जाना था और हम लोगों को भी शीघ्र वापस होना था। वकील साहब के मुअक्किल उनके चैम्बर में प्रतीक्षा कर रहे थे और ऐसे ही हम सब लोग अपनी-अपनी समयसीमा में बँधे थे। असीम का मुक्त आनन्द यहाँ मात्र एक डेढ़ घंटे तक ही उठा सके थे। यह समय कितनी शीघ्रता से बीत गया, पता नहीं चला। इस बीच परमपूज्य स्वामी जी महाराज ने सबके परिचय के साथ कुशलक्षेम पूछ लिया। उनकी स्मरणशक्ति की असाधारणता तब प्रगट हुई जब उन्होंने वीरेन्द्रकुमार राय को देखते ही पहचान लिया– 'टेलीफोन निगमवाले वीरेन्द्र जी।' पिछळी बार क्षणभर का ही चलता फिरता परिचय था। चकित थे वीरेन्द्र जी। कृपाभाव परम पूज्य स्वामी जी महाराज का। वकील साहब और पत्रकार महोदय के साथ चर्चा हुई। कुछ योजनाओं और आगामी कार्यक्रमों की बातें उठीं। हर चर्चा और हर बात में लोकोपयोगी विधायक तत्त्व निहित होता था। कोई सीधे उपदेश न होकर भी आपका प्रत्येक शब्द उपदेश था। आपके सान्निध्य में बीता प्रत्येक क्षण मन के लिए कल्याणकारी प्रसाद था। इस अतिरिक्त समय में लाभान्वित होने के लिए कुछ और विशिष्ट बुद्धिजीवी भक्त वहाँ आ गये थे। अहोभाग्य सबके मुखमंडल पर विराजमान था। अन्त में अपने हाथों हम लोगों को मीठे-मीठे सेव का प्रसाद देकर परमपूज्य स्वामी जी महाराज ने अनुगृहीत किया और मुझे चार वर्ष पूर्ववाली संकोच की स्थिति में खड़ा कर दिया।

उन्होंने पहले तो मंत्रोच्चार के बीच दिव्य रामनामी दुपट्टा ओढ़ाकर अनुगृहीत किया। उसके बाद पुन: कृपाभाव उठा कि एक भव्य शाल मँगाकर उसके द्वारा आशीर्वादित कर कृतकृत्य कर दिया। इसे क्या समझूँ? नाम तो विवेकी है परन्तु उस रामनामी के लायक विवेक कहाँ है? विरति कहाँ है? शाल-सज्जित करके बिना कहे ही जैसे कहा, जाओ संसार में कुछ और साधना करो, लक्ष्य न भूले।

चरणों में शीश झुकाकर हम लोग वहाँ से चले तो लगा तन भर चल रहा है, मन वहीं रह गया है।

●

# एक शिखा शीतल

**देवेन्द्र दीपक**

वामपंथी विचारधारा ने समता का प्रश्न उठाया। वह समता हठात् और आरोपित थी। इसीलिए वह समता विदग्ध समता थी। भक्त शिरोमणि कबीरदास की वाणी में एक शब्द आया **'सीतल समता'** और रबिदास की वाणी में शब्द आया **'सुखदायी समता'**। ब्रह्म भाव से, अद्वैत विचार से अंकुरित समता शीतल समता है, शीतल है तो सुखदायी। सुखी रहकर सुख देना। सुख देने में सुखी होना ऐसी शीतल समता दुःख हरनी है।

शिखा में अपना ताप रहता है। उसमें प्रकाश होता है। लेकिन यदि शिखा का ताप यदि शीतलता दें, तो ऐसी शिखा शीतल ही होती है। यही कदाचित् विरुद्धों का सामंजस्य है। भारतीय चिति विरुद्धों के सामंजस्य में सिद्धहस्त है।

मेरे निकट **आचार्यश्री एक शीतल शिखा हैं, अग्नि शिखा भी, दीपशिखा भी। ताप अपने तांई, प्रकाश सबके लिए; दग्धता अपने तक सीमित, लेकिन शीतलता सबके लिए।** यही आचार्यश्री की विशिष्टता है। आचार्यश्री से मेरा आशय स्वामी रामानंदपीठ पर शोभित आचार्य श्रीरामनरेशाचार्य से है। प्रारम्भ में आचार्य और अन्त में भी आचार्य। आचार्यत्व को सहेजना बड़ा कठिन काम है। **धर्माचार्य को निरन्तर एक अन्तर्यात्रा से गुजरना होता है। वह दो आँखों से देखता है, लेकिन उसे हजारों-लाखों आँखें देखती हैं। उसका कुछ नहीं अप्रकट रहता।**

इस समय जब मैं यह लेख लिख रहा हूँ, मैं और मेरी कलम दोनों पर बड़ा दबाव है। विगत कई सप्ताह से आसाराम बापू और नारायण सांई को लेकर जो देखा-दिखाया जा रहा है, वह बड़ा दुःखद है। पहले भी ऐसे कई कलुष प्रसंग सामने आते रहे हैं। जीवन के सभी क्षेत्रों में कदाचार व्याप्त है। इस व्याप्य में बड़े-बड़े लोग शामिल हैं। आज विडम्बना यह है कि अग्रज

---

प्रसिद्ध कवि, लेखक और रंगकर्मी, भोपाल (म.प्र.)

अग्रणी नहीं रहे, वरिष्ठ वरेण्य नहीं रहे, प्रतिष्ठित प्रतिष्ठ नहीं रहे। शिखरस्थ को शीर्ष की चिंता नहीं। ऐसे में सभी दिशाओं से निराश मनुष्य अन्तिम अभिरक्षा और प्रबोधन के लिए धर्माचार्यों के पास जाता है। वहाँ भी उसे 'छद्म' मिलता है, तो 'पद्म' में उसकी आस्था टूट जाती है। कमलवत पर पानी की बूँद की तरह रहने का परामर्श झूठा लगता है। आपका तप भंग होता है, हमारा मोह भंग होता है।

भंग मोह लेकर मैं कहाँ जाऊँ? किस देहरी पर माथा टेकूँ? सूरज नहीं, तो सूरजमुखी किधर मुँह करे? सूरज नहीं तो कमल कैसे खिले? सचमुच मैं अन्यमनस्क हूँ। किंकर्त्तव्यमूढ़! एक भाव सीधे उभरता है– 'सब' लम्पट!

आचार्य श्री का जनता से कहना है– 'सब' की भाषा में सोचना बंद करो। न स 'सब' कल अच्छे थे, न आज' सब बुरे हैं। अच्छे-बुरे सदा रहते हैं, सब जगह रहते हैं, सब दिन रहते हैं। 'कुछ' ही नहीं, 'बहुत कुछ बिगड़ा है, लेकिन 'सबकुछ' नहीं बिगड़ा है। सब धान बाइस पसेरी वाली कहावत चरितार्थ मत करो। चिंता का विषय यह है कि असद् और अनैतिकता का अनुपात बढ़ रहा है। हम सबकी कोशिश यह होनी चाहिए कि यह अनुपात कम हो।

आचार्य श्री यह भी कहते हैं– आप में विवेक है। खरे खोटे की पहचान आप स्वयं करें। आप हमें अपनी कसौटी पर कसें। हाँ, अपनी कसौटी पर। दूसरे की कसौटी पर कसने के हेतु और प्रयोजन के बदलने की संभावना से कौन इंकार कर सकता है। ध्वन्यार्थ और फलितार्थ कैसे बदल दिए जाते हैं, यह सब जानते हैं।

'हिन्दू समाज में एक कहावत है– पानी पीजै छान के, गुरु कीजै जान के।' पानी छान कर पीओ। गुरु जानकर बनाओ। दीक्षित शिष्यों की संख्या के आधार पर अपने को मान्य कराने वाले धर्माचार्य कहानेवालों की बात मैं नहीं कहता, इतना समझो कि सच्चा धर्माचार्य नित्य अग्नि परीक्षा से गुजरता है।

आचार्य श्री अपने साधु समाज में कहते हैं– भगवे की लाज रखो। भगवा की प्रतिष्ठा हमारे हाथ में है। हमारा तप ही हमारी शक्ति है, हमारे आश्रम का वैभव हमारी ताकत नहीं है। जिस किसी से भगवा चोला सध नहीं पा रहा है, उसे घर वापस लौट जाना चाहिए।'

हरिद्वार समग्र के 'आचार्यमंगलाशासन' में आचार्यश्री ने कई महत्त्वपूर्ण बिन्दु उठाए हैं–

'वैसे तो पूरी दण्डी परम्परा यहाँ नगण्य है। यहाँ तो दण्ड रहित परमहंस

संन्यासी-संतों की उपस्थिति जोरदार है।'

–'हरिद्वार की अधिष्ठातृ जगदम्बा मायादेवी कल्याणकामियों की दृष्टि से ओझल हो रही है, क्योंकि धर्म म्यूजियमों का विकास जोरों पर है। यह चिंता का विषय है। शास्त्रीय पाण्डित्य भी अतीव क्षीणकाय है, जबकि यह नगरी शांकरी परम्परा गढ़भूता है। अधिकांश पीठाधिपति भागवत रामायण गाकर ही जीवन समृद्धि एवं मान एकत्रित करने में सम्पृक्त हैं।'

–'धार्मिक संस्थाओं का मूल आध्यात्मिक स्वरूप गौण होता जा रहा है जो चिंता का विषय है। मंदिर की अपेक्षा भक्त निवास प्रबलतया प्रस्तुत हो रहे हैं। सत्संग ध्वनि को भण्डारा गर्जना दबोज रही है। दम्भी संतों का वर्चस्व बढ़ता जा रहा है। अधिकांश राम की अपेक्षा काम प्रधान जीवन के पक्षपाती हो रहे हैं। सर्वश्रेष्ठ आध्यात्मिक केन्द्र आश्रमों धर्मशाला ही नहीं होटल का रूप लेते जा रहे हैं। निश्चित रूप से यह अर्थ एक काम का ही बढ़ता स्वरूप है जो अमृत पान से वंचित करते हैं।'

–'सोऽहम् के मुख्य आश्रम में (स्वामी अखण्डानंद के द्वारा प्रवर्तित) में रामकृष्ण, शिव परिक्रमा के आलय में हैं तथा अखण्डानंद एवं सच्चिदानंद गर्भगृह में विद्यमान हैं। सम्पूर्ण परम्परा पर एक परिवार का ही अधिष्ठातृव्य है। यह तो धर्म मर्यादा की महती क्षति है।'

'क्षरण' आज का सच बन गया है। धर्म का क्षेत्र भी इस क्षरण से अछूता नहीं है। आचार्य श्री इस क्षरण से क्षुब्ध हैं। शुभ पक्ष यह है आचार्य श्री इस क्षरण की चश्मपोशी नहीं करते। साथ-साथ निर्भीक होकर गर्हित की ओर संकेत करते हैं। 'तीर्थराज प्रयाग और रामभक्ति का अमृत कलश' (संपादक डॉ. उदयप्रताप सिंह) ग्रन्थ की 'मंगलाकांक्षा में आचार्य श्री का साफगोई देखिए–

'अत्यंत दुःख की बात है कि सनातन धर्म के विराट् स्वरूप अमृत कलश प्रदायक कुम्भ-मेला का स्वरूप लगातार विकृत एवं धूमिल होता जा रहा है। मेला में सम्प्रभुतासम्पन्न प्रेरणा-स्रोत संत, महंत एवं आचार्यगण ही अमृतकलश के बदले विद्वेश व युद्ध कलश प्राप्त करा देते हैं। उनमें स्वयं भी अमृत पिपासा की तीव्रता दृष्टिगोचर नहीं होती। सम्पूर्ण कल्याणमय व्यवहार दम्भ बादलों से घिरते जा रहे हैं।... कुम्भस्नान जो परम कल्याणप्रद है, उसे शाही स्नान बना दिया गया है। स्नान के धर्म आत्म कल्याण को शाही रूप प्रदान कर पूर्ण अवैदिकत्व तथा मुमुक्षत्व का सम्पादन एवं पूजा की मर्यादा का उल्लंघन है। पूज्य के पास पूजनक्रम में मुमुक्षु को अत्यन्त सादगीपूर्ण

एवं विनीत वेश में जाना चाहिए।'

आचार्य श्री स्वामी रामानंद के पीठाधिपति हैं। स्वामी रामानंद के समय भी धार्मिक और सामाजिक जीवन में अनेक विसंगतियाँ थीं। स्वामी रामानंद ने उनका विरोध किया और उसके बीच स्वस्थ सामाजिक जीवन के लिए एक राह बनाई। विसंगतियों से असहमति दर्ज कराना आचार्य का प्रमुख दायित्व है। इसी दायित्व की ओर संकेत करते हुए जयशंकर प्रसाद के चन्द्रगुप्त नाटक में चाणक्य कहता है– 'ब्राह्मण न किसी के राज्य में रहता है और न किसी के अन्न पर पलता है। स्वराज्य में विचरता है और अमृत होकर विचरता है।'

रामानंद सम्प्रदाय में प्राप्त होता है कि– 'जात-पात पूछे नहीं कोई हरि को भजै सो हरि का होई।' यह एक मंत्र है। एक सूत्र है। आचार्य श्री रामानंद सम्प्रदाय के इस आशय को याद ही नहीं रखते, उसे चरितार्थ भी करते हैं। अपने चातुर्मास में एक दिन वह अपने दलित शिष्यों के घर जाते हैं। इस बार उनका चातुर्मास हरिद्वार में था। आचार्य श्री उस क्षेत्र के अस्वच्छ धंधे में लगे सफाई कामगारों को एक दिन अपने चातुर्मास शिविर में बुलाकर भोग कराया। लोग आते गए, प्रसाद पाते रहे। आचार्य श्री स्वयं उनके बीच उपस्थित रहे और कुशल क्षेम पूछते रहे।

दो वर्ष पूर्व उन्होंने संत रविदास जयंती पर स्वामी रामानंद पीठ के तत्त्वावधान में काशी में पराड़कर भवन में एक समारोह आयोजित किया। उस समारोह में मैं भी एक वक्ता था। आचार्यश्री ने दलित समाज के संत-महात्माओं को आसन दिया। उनका अभिवादन किया।

मैं जानता हूँ मेरे कुछ दलित चिन्तक मित्र ऐसा प्रसंगों को एक स्वांग के रूप में देखते हैं। उनके लिए यह दिखावा है। हमें यह क्या नहीं समझना चाहिए कि शताब्दियों से चले आ रहे इस कलंक को धोने की हर पहल महत्त्वपूर्ण है। ऐसे प्रयासों को कमतर करके क्यों आँका जाए! हाँ, ऐसा भी जरूरी है कि ऐसे प्रयास आरोपित अथवा प्रचार भाव से न किए जाएँ। उनके पीछे आत्म प्रेरित वांछा होनी चाहिए।

विगत वर्ष इन्दौर में चातुर्मास के समय आचार्य श्री ने मेरी पुस्तक 'संत रविदास की रामकहानी' का विमोचन के अवसर पर देश-प्रदेश की अनेक विभूतियाँ उपस्थित थीं। साहित्य अकादमी के निदेशक डॉ. त्रिभुवननाथ शुक्ल, म.प्र. लोकसेवा आयोग के पूर्व सदस्य डॉ. प्रकाश बरतूनिया, शिक्षाविद्

डॉ. प्रेम भारती, देवपुत्र के संपादक कृष्णकुमार अष्ठाना, जयपुर के वरिष्ठ पत्रकार ज्ञानेश उपाध्याय, संत साहित्य के विशेषज्ञ डॉ. उदयप्रताप सिंह, वाराणसी, रसायनशास्त्र के प्रो. गुणवंत होल्कर आदि के चेहरे मुझे याद हैं। आचार्य श्री ने पुस्तक का लोकार्पण किया। पुस्तक की संक्षिप्त समीक्षा की। मेरा सम्मान किया। इतना तो हर कोई विमोचनकर्ता करता ही है। आचार्य श्री ने रु. ६०००/- दिए और पुस्तक की २५ प्रतियाँ खरीदी। ऐसा कितने लोग करते हैं? इस अवसर पर एक सुखद अनुभूति मुझे यह हुई कि शाम को कार्यक्रम में उपस्थित एक संत महात्मा को मैंने एक प्रति भेंट की। उन्होंने रात में उस पुस्तक को पूरा पढ़ा और अगले दिन सुबह जलपान पर मुझे साधुवाद दिया। एक लेखक के लिए सर्वोत्तम क्षण वह होता है जब कोई अपरिचित व्यक्ति उसकी कलम की प्रशंसा करता है।

स्वतंत्र देश में एक नारा गूँजा– रोटी, कपड़ा और मकान, माँग रहा है हिन्दुस्तान। हिन्दुस्तान को न पूरी तरह रोटी मिली, न कपड़ा और मकान ही। इनको पाने की चेष्टा में हलाकान भारत का नागरिक नैतिक मूल्यों के प्रति निराकार भाव से निश्चेष्ट है। 'गरीबी रेखा से नीचे की खोज पड़ताल की जाती है, 'नैतिकता की रेखा' से नीचे के विषय में कोई सोच नहीं।

आचार्यश्री रोटी, कपड़े और मकान की अनदेखी नहीं करते। वह पूर्ण पौष्टिक आहार की बाते करते हैं। आचार्य श्री लिखते हैं– 'सम्पूर्ण मानवता को पौष्टिक (अन्न, जल, वायु, तेज, आकाश, वस्त्र, आभूषण, शिक्षा, परिवेश, परिवार, राष्ट्र इत्यादि) आहार चाहिए,सतत चाहिए, सदैव चाहिए, अपने सम्पूर्ण विकास के लिए यह सार्वभौम सत्य है,परन्तु विडम्बना है कि यह भौतिक विकास के श्लाघ्ययुग में भी स्वल्प लोगों को ही प्राप्त है जिसके लिए हमें प्रयास करना चाहिए। यह हो भी रहा है, क्योंकि पौष्टिक आहार का कोई विकल्प नहीं है?

आचार्य श्री का धर्मशास्त्र समाज सापेक्ष है। यह स्वामी रामानंद का ही सुझाया हुआ पथ है। यही पथ स्वामी विवेकानंद ने अपनाया। समाज के लिए धर्म है, धर्म के लिए समाज नहीं है। आचार्य श्री प्रतिवर्ष चातुर्मास के अवसर पर एक विद्वत गोष्ठी आयोजित करते हैं। विद्वत गोष्ठी के लिए जो विषय वे चुनते हैं, उनमें समाज और राष्ट्र के लिए शुभ खोजने की चेष्टा रहती है। उन्होंने काशी में विमर्श का विषय रखा 'धर्म और युवा वर्ग।' सूरत में विषय रखा था 'सांस्कृतिक आक्रमण प्रतिकार के उपाय।' इन्दौर में

विषय रखा था 'मानव जीवन में धर्म की प्रासंगिकता' हरिद्वार में विषय रखे 'रामराज्य की अवधारणा और स्वामी विवेकानंद पर पूरे देश में सार्धशती के कारण विमर्श हो रहा है। सो इस विषय का चयन समीचीन था। राम राज्य की अवधारणा पर चर्चा क्यों?

मैंने आचार्यश्री जी से इस विषय के चयन के सम्बन्ध में पूछा तो डॉ. उदयप्रताप सिंह की ओर संकेत करते हुए आचार्यश्री ने कहा- 'हम तो रामकाज को महत्व देते आए हैं। रामराज्य की चर्चा भी तो रामकाज ही है। एक और बात भी है। रामराज्य एक आदर्श राज्य की संकल्पना है। हमारे राजनेताओं, शासकों, प्रशासकों के सामने यह आदर्श रहना चाहिए। इस आदर्श को सामने रखकर राज्य और केन्द्रीय सरकारें अपनी योजनाएँ बनाएँ और उनका निष्ठापूर्वक नियमन और कार्यान्वयन करें तो निश्चित कुछ न कुछ लाभ तो आम जन का होगा।

'वामपंथी या पूँजीवादी मॉडल को सामने रखने के बजाए हम रामराज्य के मॉडल को अपने सामने क्यों न रखें। यह हमारा अपना मॉडल है। महात्मा गाँधी ने भी इस बिन्दु को उठाया। महात्मा गाँधी के नाम पर सत्ता पाने वालों ने ही महात्मा गाँधी के मॉडल को बिना अपनाए ही निरस्त कर दिया।'

इस विषय पर अच्छी चर्चा हुई। यह भी विचार आया कि इस विषय का एक प्रस्ताव भारत सरकार और योजना आयोग को भेजा जाए।

मैंने कहा- यह एक बिडम्बना ही है कि हमने दिल्ली को कभी मास्को से जोड़ा, कभी बीजिंग से, कभी वाशिंगटन से, कभी लंदन से जोड़ा। हमने दिल्ली को अयोध्या से नहीं जोड़ा। दिल्ली को अयोध्या से जोड़ा होता तो कदाचित् हमारी यह दुर्दशा न होती। इन विषयों का चयन क्या कहता है? यही न कि स्थितियाँ क्यों बिगड़ रही हैं, उन्हें कैसे सुधारा जाए?

विद्वत् परिषद् की गोष्ठियों की विशेषता यह है कि आचार्यश्री पूरे समय स्वयं आसंदी पर रहते हैं। ध्यान लगाकर सबको सुनते हैं। वक्ता को कोई बीच में टोकता नहीं। अपना पक्ष रखने के लिए सब स्वतंत्र। बाद में आचार्यश्री अपना पक्ष रखते हैं- बिना किसी कटुता के।

आचार्यश्री की वाणी में विनम्रता और दृढ़ता का अद्भुत संगम है। उनका आभा-मण्डल व्यापक है। उनके परिचय और सम्पर्क का क्षेत्र बड़ा व्यापक है। सभी क्षेत्रों के लोग। सभी राजनैतिक दलों के लोग। सभी वर्गोंके लोग। वह हँसते-हँसाते खरी बात कह जाते हैं। उनके पास बैठना और चुपचाप

उन्हें सुनते रहना रंजन भी करता है और प्रबोधन भी।

आचार्यश्री को विद्वानों का संग-साथ पसंद है। आदान-प्रदान की मुद्रा में। वह विद्वानों का स्वयं खड़े होकर तिलक करते हैं। उत्तरीय पहनाते हैं। अन्तरंग आत्मीयता के साथ। पंगत में विद्वान् भोजन करते हैं, तो वह स्वयं खड़े रहकर व्यवस्था को देखते हैं। व्यक्तिगत रूप से पथ्य आदि के विषय में पूछते हैं।

आचार्यश्री नैयायिक व व्याकरणाचार्य हैं। व्याकरण का क्षेत्र भाषा तक सीमित नहीं है। पूरा जीवन व्याकरण से जुड़ा है। व्याकरण घटकों को बाँधता है, उन्हें स्थिर आसन देता है, उनकी सीमा तय करता है, उन्हें अर्थशक्ति से भरता है। आचार्यश्री व्याकरण बोध के साथ समाज रचना को देखते हैं और इसी दृष्टि से यथा आवश्यकता उसमें संशोधन के लिए अवकाश बचाकर रखते हैं।

आचार्यश्री के पास रामानंदीय प्रेम है। मैं भी उस प्रेम का एक पक्ष हूँ। मेरे नाम के साथ जातिसूचक शब्द नहीं जुड़ता। सूरत के चातुर्मास में ब्रह्माणों की पंगत बैठी। मुझसे कहा जाओ, बैठो। मैंने कहा मैं खत्री हूँ। आचार्य श्री ने कहा– नहीं तुम ब्राह्मण हो। मैं वहाँ तक सभा में कहा– मैं खत्री था, क्षत्रिय था और आचार्य श्री ने मुझे और मेरी पत्नी को ब्राह्मण बना दिया और मुझे दक्षिणा भी मिली।

मेरी एक सीमा है। मैं जब भी किसी देहधारी के विषय में सोचता हूँ या लिखता हूँ तो मुझे भवानी प्रसाद मिश्र की यह बात याद रहती है–
**'न तू, न मैं, न वे, निरापद कोई नहीं।'**

आचार्यश्री श्रीसम्पन्न हैं। अज्ञेय की 'भग्नदूत'की एक पंक्ति याद आती है– **क्या दूँ देव! तुम्हारी इस विपुल विभुता को मैं उपहार।**

मैंने इस लेख के प्रारम्भ में आचार्य श्री के लिए लिखा है– **एक शिखा शीतल।** इसकी दूसरी पंक्ति के साथ लेख समाप्त करता हूँ–

**शांत**

**सरस**

**भूतल**

●

# मानवता के ध्वजवाहक : स्वामीरामनरेशाचार्य

**रामबहादुर राय**

नाम सुना था। यश भी जानता था। लेकिन पहली बार स्वामी रामनरेशाचार्य का दिल्ली में ही दर्शन कर सका। उन दिनों स्वामी जी देश की राजधानी के अशोक विहार में चार्तुमास कर रहे थे। वही भेंट हुई। एक बौद्धिक विमर्श का वहाँ आयोजन था। जिसमें रहने और सुनने का अवसर मिला। उसमें अन्य विद्वानों के अलावा मुझे कुछ नाम याद हैं जो उस विमर्श में थे। जैसे जनसत्ता के संस्थापक संपादक प्रभाष जोशी, प्रोफेसर गिरीश्वर मिश्र, कलानाथ शास्त्री, डॉ. उदयप्रताप सिंह, डॉ. महेशचंन्द्र शर्मा (भाजपा) और जनार्दन द्विवेदी (कांग्रेस)। उस विमर्श के पश्चात स्वामी जी का प्रवचन सुना।

यह सितंबर, २००४ की बात है। यह संयोग था या सुयोग, इसके बारे में कहना कठिन है। उस समय मैंने लिखा था कि 'इस बार राजधानी दिल्ली में राजनीति के अधिमास का चातुर्मास से संयोग हो रहा है। संसद का बजट अधिवेशन राजनीति के अधिमास में हुआ। भारतीय मानस से कटी इस राजनीति के अदाकारों में कुछ ही हंस होंगे जो चातुर्मास का महत्व समझते हैं। इस वातावरण में स्वामी रामनरेशाचार्य ने राजधानी में डेरा डाला है। क्या यह भी एक संयोग है कि यूपीए सत्तारूढ़ हुई है। उनके चातुर्मास का इससे संबंध दिखता नहीं है। अगर संबंध होता तो उन्होंने लालकिले के आसपास डेरा डाला होता। उन दिनों चातुर्मास को जानने और समझने का अवसर मिला। भारत की धार्मिक-सामाजिक-सांस्कृतिक परंपरा को अपने-अपने ढंग से संत मनाते हैं। स्वामी रामनरेशाचार्य ने इसे नया रूप दे दिया है। चातुर्मास की एक धार्मिक व्याख्या है। यह चार महीने चलने वाली वह धार्मिक प्रक्रिया है जिसका संत अपनी रीति से निर्वाह करते हैं। उस समय मैंने देखा कि स्वामी रामनरेशाचार्य इसे आस्थावानों के उत्थान का आयोजन बना पा रहे हैं। धार्मिक क्रियाओं को गृहस्थ के लिए

---

राष्ट्रवादी चिंतक, वरिष्ठ पत्रकार, नई दिल्ली, सम्प्रति सम्पादक 'यथावत'

सहज बना रहे हैं। परंपरा और समसामयिक समस्याओं में वे सेतु की भूमिका निभा रहे हैं। इसके लिए उनके पास विद्या है, बल है और बुद्धि है। इसीलिए वे ऐसे मुहावरों का प्रयोग कर लेते हैं जो सहज ही समझ में आ जाए। यह सब देखकर मुझे यह अनुभव हुआ कि वे संतों की जमात वाली भीड़ से बिल्कुल अलग हैं।

तब से ही स्वामी रामनरेशाचार्य के कारण उस परंपरा को समझने की उत्सुकता मेरे मन में पैदा हुई। वह बनी हुई है। जो जान सका हूँ वह न तो पर्याप्त है और न आखिरी। लेकिन जब भी अवसर मिलता है तो स्वामी जी से मिलने और उन्हें सुनने के लिए तत्पर रहता हूँ। ऐसा ही बहुत लोगों के साथ हो रहा है और हुआ है क्योंकि वे स्वामी रामानंद की परंपरा के सार्थक वाहक बन गए हैं। यह एक सिलसिला चल पड़ा है। जब कोई संत अपनी राह स्वयं बनाता है तो उसे बने बनाए पैमाने से नहीं जाँचा जा सकता है। उसे जानने और समझने की प्रक्रिया अनुभवों के सोपान पर चढ़ने और उतरने की हो सकती है। इसमें अनुभव ही काम की बात है। कई बार अनुभव के पार भी जाना पड़ता है। वह भी एक अनुभव होता है जो व्यक्ति को आत्मा से जोड़ता है और भले काम में लगने की प्रेरणा देता है। स्वामी रामनरेशाचार्य यही करने में व्यग्र भाव से लगे हुए हैं।

यह बात कहना और उसे निशान लगाकर बताना इसलिए जरूरी है क्योंकि कई धर्मगुरु कहते सुने जाते हैं कि वही बड़ा संत है जो अपनी शिष्य परंपरा का विस्तार करता जाता है। जो ऐसा कहते हैं वे नहीं जानते कि नवजागरण का आधुनिक मंत्र क्या है। वे अनजाने में ऐसा कहते हैं और परिणाम में एक प्रतिस्पर्द्धा को जन्म देते हैं। स्वामी रामनरेशाचार्य ने ऐसी किसी प्रतिस्पर्द्धा को महत्वहीन बना दिया है। वे उसमें पड़ते तो बात दूसरी रहती। उससे अलग होकर उन्होंने एक नया मंत्र दिया है। वे न तो उसे किसी के कान में फूँकते हैं और न ही इसका दावा करते हैं। फिर सवाल उठता है कि वह मंत्र कैसे हुआ? वह मंत्र क्या है? मंत्र है भी या नहीं?

जो आप में सार्थक होने का भाव जगा दे, वही मंत्र है। इसके लिए कोई एक वाक्य या वाक्यांश हर किसी के काम नहीं आता। वह भले ही सूत्ररूप में हो पर होता कुछ अक्षरों का खेल मात्र। उन अक्षरों के खुलने से अगर आप का अंतरमन जो बंद पड़ा था वह नए झोंके से खुलने लगे या अचानक खुल जाए तो समझना चाहिए कि जीवन धन्य हो गया। धन्यता का यह बोध कैसे हो? यही

मूल प्रश्न है जिसे कई बार व्यक्ति एक ही जीवन में अनेक जन्म लेकर भी हल नहीं कर पाता। द्विज तो एक ही जीवन में दुबारा जन्म लेने वाले को कहते हैं। वह जाति सूचक नहीं, गुणवाचक है। भारतीय परंपरा में द्विज एक अवस्था है। एक प्रक्रिया है। एक पड़ाव है। द्विज होना अनंत यात्रा का एक क्रम है। वह अपने आप में लक्ष्य नहीं है। मंजिल भी नहीं है। वहाँ से यात्रा पुनः प्रारंभ होती है।

इसे स्वामी रामनरेशाचार्य अपने बचपन में ही समझ गए थे। उन्हें सहज बोध हो गया था। ऐसा विरले लोगों के साथ ही होता है। पहले उन्होंने पढ़ाई की। संस्कृत को माध्यम बनाया। साफ है कि वे शास्त्र को समझने के लक्ष्य से प्रेरित थे। आधुनिक शिक्षा की राह नहीं चुनी। वह अलग राह है। उसकी मंजिल भी अलग है। स्वामी रामनरेशाचार्य ने ज्ञान अर्जित करने का लक्ष्य रखा। उसी पर चलकर जहाँ उन्हें पथ मिला वह स्वामी रामानन्द का है। उनसे उस रामानन्द का प्रवाह पुनः फूटा है जो लगभग सूख गया था। एक प्रसंग से इसे अधिक समझा जा सकता है। वह यह है कि एक इतिहासकार से मैंने पूछा कि मुझे आप स्वामी रामानन्द को ऐतिहासिक संदर्भ में समझाइए। उन्होंने जवाब के बदले एक सवाल पूछ लिया। वह यह था कि कौन से रामानन्द? यह बड़ी उलझन है। आप पूछ सकते हैं कि इसमें उलझन कहाँ है? उलझन यह है कि रामानन्द और रामानन्दाचार्य में क्या भेद है? जब एक इतिहासकार सवाल कर बैठे तो उलझन बढ़ जाती है। स्वामी रामानन्द और रामानन्दाचार्य में अंतर शब्दों का ही नहीं है, संत और आचार्य के दो रूपों का ही नहीं है, यह भी है कि इस परंपरा से सुबुद्ध समाज भी अपरिचित जैसा है।

ऐसा क्यों है? विचित्र लग सकता है, लेकिन यह सच है। अयोध्या आंदोलन ने समाज में नवजागरण पैदा किया। इस नवजागरण में रामनरेशाचार्य का भी बड़ा योगदान है। प्रारंभिक चरणों में जिन संतों ने गाँव-गाँव में राम नाम की महिमा जगाई उनमें वे भी हैं। वे उन संतों में भी एक हैं जिनको मिलाकर रामालय ट्रस्ट बना था। यह बात अलग है कि वह ट्रस्ट अपने उद्देश्य में अनेक कारणों से विफल रहा। लेकिन स्वामी रामनरेशाचार्य की मनोदशा और संकल्प पर उसकी कोई छाया नहीं पड़ी। वे उससे उसी तरह उबर गए जैसे कि वह एक आई गई घटना हो। ऐसी घटनाएँ होती रहती हैं। उस घटना से उनमें नया उत्साह पैदा हुआ और वे बिना विचलित हुए अपने रास्ते पर चलते रहे। भटके नहीं। अयोध्या आंदोलन के प्रवाह में अनेक संतों को भटकते, सत्ता की राजनीति में

पड़ते और अधोगति को जाते हमने देखा है। ऐसे संतों को आदर्श नहीं माना जा सकता। इसीलिए उनके पग के कोई निशान नहीं हैं। वे दूसरों के रास्ते पर चलते हुए देखे जा सकते हैं जबकि रामनरेशाचार्य जिस पथ पर चल पड़े हैं आज उनके निशान बनते जा रहे हैं।

मेरी तरह सैकड़ों व्यक्ति इसके साक्षी हैं। मेरी भी उत्सुकता इसी कारण है। इसलिए उन्हें जानने और समझने का जो भी अवसर मिलता है वहाँ पहुँचने का प्रयास करता रहा हूँ। जब-जब भेंट हुई और वह सिलसिला बढ़ा तो उन धारणाओं की पुष्टि हुई जिन्हें मैंने सुनकर और कुछ पढ़कर बनाई थी। यहाँ एक स्पष्टीकरण आवश्यक है। मैंने जो धारणाएँ बनाई थी उनमें सराहना का भाव था और यह जानने की जिज्ञासा भी थी कि वे कितने सधे हुए ढंग से उस परंपरा को बढ़ा रहे हैं जिसने मुगलिया सल्तनत को अप्रभावी बना दिया था। इसे समझने से पहले यह जानना जरूरी है कि स्वामी रामनरेशाचार्य का एक क्रमिक विकास हुआ है। वे अचानक उस स्थान पर नहीं पहुँचे हैं जहाँ वे हैं। वे छठें दशक के आखिरी दिनों में 'रामनरेश दास' बने। मूल नाम और धाम छोड़ा। यहाँ से उनकी संन्यास और शिक्षा की यात्रा प्रारंभ होती है। बनारस में उन्हें अध्यवसायी छात्र के रूप में लोगों ने देखा है और उन लोगों से उनकी प्रशंसा सुनी जा सकती है। एक संन्यासी को शास्त्र में पारंगत होना चाहिए। इसी लक्ष्य से उन्होंने संस्कृत के माध्यम से शास्त्रों का न केवल अध्ययन किया, बल्कि परीक्षाएँ दी और उसमें उत्तम श्रेणी प्राप्त की। यह उनकी मेधा और लगन का प्रमाण है। शास्त्र के अध्ययन से पुस्तकीय विद्वता प्राप्त होती है। समाज से मान्यता मिलती है। यह सब एक प्रमाणपत्र का रूप ले लेता है। उसे अर्जित कर एक ऊँचे सोपान पर खड़े होने का सुख अनुभव किया जा सकता है।

लेकिन वास्तविक अनुभव तो वही होता है जो अपना होता है। अनुभव यानी अपना। शास्त्र भी एक अनुभव है। पर वह दूसरे का होता है। वह किसी का भी हो सकता है। शास्त्र का अनुभव गाँठ की पूँजी नहीं होती, प्रमाण होता है। 'रामनरेश दास' अध्ययन, अध्यवसाय और अध्यापन के अपने अनुभवों से तप कर निकले हैं। उसी क्रम में साधु और संतों ने उन्हें रामानंदाचार्य पीठ पर बैठाया। यह महत्तर दायित्व था। उनके सामने बड़ी चुनौती थी। किसी फलते-फूलते पीठ पर आचार्य होकर विराजना तो अलग बात है। वे उस पीठ पर बैठे जिसका सात सौ साल पुराना इतिहास है। उसका गौरव गुणगान होता है। उसके योगदान को

आदर पूर्वक याद किया जाता है। ११ जनवरी, १९८८ को रामानंद जयंती पर स्वामी रामनरेशाचार्य का रामानंदाचार्य पीठ पर पदाभिषेक हुआ। तब वह पीठ इतिहास की वस्तु थी और उपेक्षित थी।

उनके सामने कितनी बड़ी चुनौती थी? यह डॉ. शुकदेव सिंह के शब्दों में ही सुनिए-'लेकिन आश्चर्य की बात है कि स्वामी रामानंद का विशाल आनन्द मठ और श्रीमठ ऐतिहासिक रूप से प्राय: लुप्त हो गए। स्वामी रामानंद का वह विशाल वन, जिसमें हजारों संन्यासी रहते थे, सैकड़ों सूफी, पचासों संत, फकीर, जंगम, जोगड़े, नाथ-पंथी रहा करते थे, वहाँ लोगों के घर हैं, मस्जिदें हैं, तरह-तरह के पड़ाव हैं, गलियाँ हैं, दुकानें हैं। पंचगंगा घाट पर श्रीमठ के रूप में बहुत जरा सी पुण्य-भूमि बची हुई है।' पंचगंगा घाट वह पवित्र स्थान है जहाँ स्वामी रामानंद ने रहकर भक्ति, अध्यात्म और राष्ट्रीयता की धारा बहायी। वह काल बहुत विकट था। पंचगंगा एक प्रतीक है। धारणा है कि वहाँ पाँच नदियों का संगम है। डॉ. युगेश्वर के शब्दों में कहें तो 'पंचगंगा में पाँच गंगा की कल्पना है। पंचगंगा साधना और उपासना का अदभुत केंद्र है। भक्ति की पाठशाला है।' वे इसे इस तरह भी समझाते थे– प्रयाग में त्रिवेणी है तो काशी में पंचगंगा। पंचदेवों की उपासना है पंचगंगा। वेदांत की पाँच धाराओं का संगम है पंचगंगा, द्वैत, अद्वैत, द्वैताद्वैत, विशिष्टाद्वैत और शुद्धाद्वैत।

जो मठ उजड़ गया था, जो श्रीहीन हो गया था वह अब अपने गौरव गान की धुन सुन रहा है। उसकी स्मृति में अगर सराबोर नहीं है तो कम से कम यह कहा जा सकता है कि रोमांचित अवश्य है। यही जानने-समझने की प्रक्रिया है। जानना ही काफी है। वही पहला कदम होता है। एक-एक कदम चलकर ही कोई भी अपनी मंजिल पहुँचता है। जान लेने से प्रयास की प्रेरणा मिलती है। पराक्रम का भाव जगता है। यही नवजागरण होता है। सात सौ साल पहले स्वामी रामानंद ने उस समय जैसी जरूरत थी वैसी विधि नवजागरण की निकाली। स्वामी रामनरेशाचार्य उसे विस्मृति से बाहर कर रहे हैं। इस तरह श्रीमठ की सुबह हो गई है। यही वे समाज को सूचना दे रहे हैं। डॉ. शुकदेव सिंह सही कह रहे हैं कि 'यह सौभाग्य ही कहा जाएगा कि इन दिनों श्रीमठ की मूल गद्दी पर विराजमान स्वामी रामनरेशाचार्य भी रामानंद की प्रतिमूर्ति जान पड़ते हैं।'

प्रकृति और परिस्थिति में परिवर्तन एक नियम है। फिर भी मूल नियम नहीं बदलता। इसे इस तरह भी कहा जा सकता है कि रामानंद के बगैर कबीर नहीं हो

सकते थे। रामकृष्ण न होते तो स्वामी विवेकानंद का होना असंभव था। यही नियम गुरु-शिष्य परंपरा में है और रहेगा। इसका स्वरूप बदलता रह सकता है। उसी तरह जैसे परिस्थिति बदलती है और उसकी आवश्यकताएँ भी बदलती हैं। मुगलिया सल्तनत के समय जो चुनौतियाँ थीं वैसी तो नहीं, लेकिन आज उससे अधिक उलझी हुई परिस्थिति है। तब स्वामी रामानंद ने अपनी एक घोषणा से समाज की चेतना पर पड़ी राख को हटा दिया था। उन्होंने ईश्वर के सम्मुख सबकी समानता का विचार रखा। वह एक क्रांतिकारी चेतना थी। उसका एक रूपांतरण भक्ति में हुआ तो दूसरा शक्ति में हुआ। संत भक्ति के रास्ते चले और वैरागी जूझने के लिए मैदान में कूदे। इसका देशव्यापी असर हुआ।

स्वामी रामनरेशाचार्य ने इसे रेखांकित भी किया है कि 'आचार्य प्रवर स्वामी रामानंद का प्रयास केवल क्षेत्रीय नहीं था, जैसे वायु, आकाश तथा सूर्य क्षेत्रीय नहीं होते वैसे ही आचार्य प्रवर के समान विभूतियाँ भी क्षेत्रीय नहीं होती।' यह कथन स्पष्ट है। इसकी व्याख्या अनावश्यक है। इसे अपनाना आवश्यक है। स्वामी रामनरेशाचार्य ने 'श्रीमठ प्रकाश' पुस्तक की भूमिका में लिखा है कि 'अनेक साक्ष्यों से सिद्ध होता है कि श्रीमठ संसार के तत्कालीन आध्यात्मिक केंद्रों में सर्वश्रेष्ठ था। दुनिया के सभी भागों से साधक एवं जिज्ञासु श्रीमठ में आते थे तथा पूर्णता को प्राप्त कर लौटते थे।' इस पुस्तक का संपादन डॉ. विवेकी राय ने किया है। यहाँ यह जानने की उत्सुकता होगी कि स्वामी रामनरेशाचार्य के आने पर श्रीमठ में क्या रूपांतरण हुआ है। इसका वर्णन श्रीमठ की यात्रा के बाद एक फीचर में सुधी पत्रकार ज्ञानेश उपाध्याय ने किया है। उसका यह अंश यहाँ प्रासंगिक है– 'आक्रमण व विध्वंस के उपरांत कभी बस आचार्य रामानंद जी की पादुकाओं का स्थान ही शेष रह गया था, फिर कभी दो मंजिल की एक छोटी-सी इमारत बनी, लेकिन अब थोड़ी-सी जगह में पाँच मंजिली इमारत खड़ी है, भीतर-बाहर से पवित्र, प्रेरक, उज्ज्वल। विनाश व विध्वंस के अनगिनत प्रयासों के बावजूद श्रीमठ आज हमारे समय का एक बचा हुआ अकाट्य और महान सत्य है। ऐतिहासिक भारतीय संकोच का जीता-जागता उदाहरण है। हम आक्रमणकारी नहीं हैं, हम हो नहीं सकते। हम छीनते नहीं, क्योंकि छीनना हमारा स्वभाव नहीं है। हम खुद को बदलते-बनाते चलते हैं। हम दूसरों की लकीर छोटी नहीं करते, अपनी छोटी-सी सही, लेकिन जितनी भी लकीर है, उसे बचाते-बढ़ाते चलते हैं और चल रहे हैं। ठीक ऐसे ही चल रहा है श्रीमठ। लोग कहते

हैं कि मठों में बड़ा विलास और वैभव होता है, लेकिन सीधा-सादा श्रीमठ इस आधुनिक-प्रचारित तथ्य को सिरे से नकार देता है। श्रीमठ अपने भले होने की मौन गवाही देता है। अर्थात् अपने होने में श्रीमठ ने उसी सज्जनता, सादगी और सीधेपन को बचाया है, जिसे आचार्य श्री रामानंद जी ने बचाया था, जिसे कबीर ने पुष्ट किया और गोस्वामी तुलसीदास जी ने घर-घर पहुँचा दिया।' इसी श्रीमठ में स्वामी रामनरेशाचार्य से मिलने का मुझे २००९ के लोकसभा चुनाव में अवसर मिला था। वे जोधपुर से उसी दिन काशी पहुँचे थे।

जिस तरह श्रीमठ का पुनरुद्धार हुआ है उसी गति से बहुत थोड़े समय में ही पर्याप्त साहित्य का प्रकाशन हुआ है। इसके प्रेरक स्वामी रामनरेशाचार्य हैं। उनकी योजना में ही जगदगुरु रामानंदाचार्य की सप्त शताब्दी २००१ में मनाई गई। उस अवसर पर भी कुछ साहित्य छपा। जिससे एक जागरूकता पैदा हुई। ऐसे साहित्य का एक प्रभाव पड़ता है। पाठक की इतिहास दृष्टि सुधरती है। उससे भविष्य का रास्ता सूझता है। ज्यादातर मठों में बौद्धिक गतिविधियाँ शून्य रहती हैं। ठीक इसके विपरीत श्रीमठ ने हिन्दी में सुबोध सामग्री के प्रकाशन पर ध्यान दिया है। जिन चातुर्मासों में मुझे जाने का अवसर मिला वहाँ धार्मिक क्रिया कलापों के बीच बौद्धिक विमर्श और दो-एक पुस्तकों का लोकार्पण का कार्यक्रम भी था। २०१३ में प्रयाग के हरित माधव मंदिर में 'दुःख क्यों होता है?' वैष्णवमताब्जभास्कर (डॉ. जयकांतशर्मा), 'तीर्थराज प्रयाग और रामभक्ति का अमृतकलश (डॉ. उदयप्रताप सिंह) पुस्तकों का लोकार्पण हुआ। वह स्वामी रामानंद का जन्मस्थान है। हरिद्वार में 'अच्छा कैसे सोचा जाए?' पुस्तिका का लोकार्पण एक गोष्ठी में हुआ। ये दोनों पुस्तिकाएँ स्वामी रामनरेशाचार्य के प्रवचनों का संकलन है। इन्हें ज्ञानेश उपाध्याय ने संयोजित किया है। इन पुस्तिकाओं में स्वामी जी के विचार हैं। देश-समाज के सामने उपस्थित प्रश्नों पर उनका दृष्टिकोण है और एक वैचारिक निमंत्रण भी है, विचार विमर्श के लिए। इन्हीं दिनों अंग्रेजी में एक नई पुस्तक आई है। जिसका हिन्दी में शीर्षक होगा- भारत में मानवतावाद। इसके लेखक फर्नांडो ग्रेसिया हैं। मानवतावादी सक्रिय विचारक ग्रेसिया ने अपनी पुस्तक में भक्ति आंदोलन को मानवता के प्रचार-प्रसार की एक धारा के रूप में प्रस्तुत किया है। जिसमें स्वामी रामानंद के योगदान का सही परिप्रेक्ष्य में वर्णन भी है। स्वामी रामनरेशाचार्य को उसी कड़ी में देखा जाना चाहिए। वे राष्ट्रीयता और मानवता के ध्वजवाहक संत हैं।

# स्वामीरामानन्द से श्रीरामनरेशाचार्य तक

**अशोक कुमार सिंह**

वे संत, महात्मा या दार्शनिक महान् होते हैं जो अपने विचारों को हवा और पानी की तरह सहज बना देते हैं। अपनी उपलब्धि को जन-जन की उपलब्धि बना देते हैं। लगता है हम उनको युगों से जानते-पहचानते हैं। वे हमारी रगों में रक्त की तरह प्रवाहित होने लगते हैं। हमारी धड़कन बन जाते हैं। एक ऐसे ही महान् संत थे स्वामीरामानन्द जिनका प्रभाव हमारे आध्यात्मिक जीवन के साथ-साथ हमारे सामाजिक जीवन पर भी उतना ही दिखाई देता है।

सदियाँ बीत गईं, लेकिन जन मन में यह नाम रंचमात्र भी विस्मृत नहीं हुआ। कितने शासक आए, सल्तनतें आईं लेकिन इस महापुरुष की ज्योति तनिक भी धूमिल नहीं हुई। कोई तो बात होगी कि हस्ती मिटती नहीं हमारी। हमे गहराई में डूबकर इसका उत्तर खोजना होगा।

मैं समझता हूँ कि किसी भी आध्यात्मिक साधना का सबसे बड़ा गुण होता है अपनी संकीर्णता या सीमा का अतिक्रमण करना। उसे असीम तक पहुँचाना। उसकी आकांक्षा होतीं है कि वह इस भौतिकता या सांसारिकता को लाँघ जाय। लेकिन यह उसकी मजबूरी भी होती है कि बिना संसार के आलंबन के चेतना अपने को अभिव्यक्त ही नहीं कर सकती। इसलिए सांसारिकता और आध्यात्मिकता अन्योन्याश्रित हैं। अर्थात् कोई आध्यात्मिक मात्र आध्यात्मिक होकर रह ही नहीं सकता। उसके साथ एक सामाजिकता भी होती है। महान् आध्यात्मिक उपलब्धियाँ महान् सामाजिक परिवर्तन को जन्म देती हैं।

जब कोई पहली बार सुनता है– 'भक्ति द्राविड ऊपजी लाए रामानन्द' तब उसका ध्यान जाता है स्वामीरामानन्द पर। कौन थे ये रामानन्द, जिन्हें भक्ति का भगीरथ कहा गया है। क्योंकि लोकोक्ति बनाना कोई मामूली बात नहीं। इन्हीं बातों से स्वामी जी की महानता का पता चलता है। जब हम इस और गहराई में उतरते हैं तब एक दूसरी बात का पता चलता है। भक्ति

वरिष्ठ गीतकार और कथाकार, वाराणसी

द्राविड़ ऊपजी क्या भक्ति का जन्म द्रविड़ देश में हुआ? दिनकर जी ने अपनी प्रसिद्ध पुस्तक 'संस्कृति के चार अध्याय' में अनेक विद्वानों का उद्धरण देते हुए अपनी बात कहने का प्रयास किया है। एक प्रवृत्ति के रूप में भक्ति तो अनादि है। पूर्व वैदिक काल से चली आ रही है। मनोविज्ञान कहता है यह एक मूल प्रवृत्ति है। जब हम अपने को ही सब कुछ मान लेते हैं। हमारा अहंकार कसता है। उसमें अँकड़ आ जाती है तो अहंकार कहा जाता है और जब वही किसी आराध्य के चरणों में विसर्जित हो जाता है, समर्पित हो जाता है तब वह भक्ति बन जाता है। इसका मतलब है कि जिस द्राविड़ भक्ति की बात की जा रही है वह भक्ति इस भक्ति से कुछ विशेष रही होगी। उसी प्रकार विशेष जैसे सभी नदियों को गंगा कहा जाता है लेकिन भागीरथी तो विशेष नदी को ही कहेंगे। ऐसे ही जिस भक्ति का जन्म द्राविड़ देश में हुआ वह सभी भक्तिमार्गों से मेल खाते हुए भी एक विशेष लक्षणों वाली भक्ति है। निश्चित रूप से उसका जन्म दक्षिण में हुआ होगा जिसे जगद्गुरु रामानन्द द्राविड़ देश से दूसरे देश में ले आए। सवाल है तब स्वामी रामानन्द की वह भागीरथी किस प्रकार से अब तक प्रवाहित है?

इस बात को भुलाया नहीं जा सकता कि जगद्गुरु रामानन्द एक महान ज्ञानी और वैष्णवाचार्य थे। उनका सनातन धर्म के सभी शास्त्रों पर अधिकार था। 'ब्रह्मसूत्र' से लेकर ऐसी अनेक स्मृतियाँ थीं जिनके विचारों और प्रभावों से स्वामीजी भलीभाँति परिचित थे। किसी भी शास्त्रज्ञ के लिए इस दायरे से बाहर जाकर सोचना और प्रयोग करना एक समय तक लगभग असंभव जैसा कार्य था। ऐसे में स्वामीजी के लिए एक ऐसे मार्ग की खोज करना कितना दुष्कर हो सकता था। उसकी कल्पना की जा सकती है। इससे हटकर कहने के लिए बड़े तप, साधना और हैसियत की दरकार थी। लगभग अपने अस्तित्व को दाँव पर लगाने तक का खतरा उठाने की हिम्मत चाहिए थी। अब तक का द्राविड़ेतर प्रदेश अपने पूर्ववर्ती विचारों के आगे नतमस्तक था। किसी ने इस यथास्थिति से निकलने का साहस नहीं दिखाया। लगता है द्राविड़ देश की प्रेरणा या शक्ति पाकर स्वामी रामानन्द एक दिन वह कर दिखाये। अपना सब कुछ दाँव पर लगाकर यह घोषणा कर ही डाली। अब किसी के कान में पिघला शीशा नहीं डाला जाएगा। किसी की जीभ नहीं काटी जाएगी। सभी प्रपत्ति के अधिकारी हैं– **'जाति-पाँति पूछे नहिं कोई हरि को भजै सो हरि का होई।'**

वह सकरा दरवाजा जो द्विजों के लिए ही खुला था आज वैश्य, शूद्र, मुसलमान, स्त्री सबके लिए खुल गया। उस पर लिख दिया गया रैदास, कबीर, धन्ना, संत, सुरसुरी, पद्मावती, आओ सबका स्वागत करने के लिए यह रामानन्द बाँहे फैलाए खड़ा है। यह था तो अध्यात्म और भक्ति का द्वार लेकिन इस द्वार ने एक महान सामाजिक क्रान्ति को जन्म दिया। यही थी स्वामीजी की द्राविड़ भक्ति जिसके प्रेम ने समाज में किसी वर्ण या वर्ग को पराया या अछूत नहीं रहने दिया। कट्टर सनातनी समाज तमाशा देखता रह गया और यह भक्ति गंगा सारे बंधनों को तोड़कर इस धरती के सभी दलितों, पिछड़ों, वंचितों को कृतार्थ करती चली गई।

इस भक्ति को जनमन के और निकट लाने के लिए स्वामीजी ने गरुड़ पर सवार आकाशगामी, चक्रसुदर्शनधारी लक्ष्मी नारायण से प्रार्थना की। हे सत्यनारायण, लक्ष्मी नारायण अब तुम अपने राम रूप में जैसे सहज ही शबरी, केवट, कोलभीलों के घर आकर विराजते थे हमारे हृदय में भी विराजो! तुम सबके राम बनो।

उन्होंने अपना ठिकाना गंगा के पंचगंगा घाट पर बनाया। पंचगंगा वह स्थान है जहाँ माना जाता है कि गंगा, जमुना, सरस्वती, किरणा और धूतपापा नामक पाँच नदियाँ आकर मिलती हैं। मानो स्वामीजी संदेश देना चाहते थे कि द्राविड़ भक्ति वह भक्ति है जिसमें गंगा, जमुना, सरस्वती जैसी शास्त्रीय भी और किरणा तथा धूतपापा जैसी लोक विश्रुत अनाम भी मिले हुए हैं। पंचगंगा से आगे की भक्ति गंगा लोक से लेकर वेद तक जितने भी हैं किसी को छोड़कर नहीं आगे बढ़ेगी।

बहुत दिनों तक स्वामीजी की यह भक्तिधारा निर्वाध बहती रही। उसके इस संदेश से दिगदिगंत गूँजता रहा। लेकिन कुछ काल के बाद एक बार फिर उसी संकीर्णता ने जोर पकड़ा। उसका कोप भाजन बना पंचगंगा। एक युग का प्रवर्तन करने वाला यह जाग्रत आलोक केन्द्र धीरे-धीरे काशी में गंगा के स्थान पर सरस्वती की तरह अंत: सलिला बनता चला गया। परन्तु इसी के साथ एक बड़ी बात यह भी दिखाई देने लगी कि इसी के कोख से पैदा कई ऐसे सूरज-चाँद सितारों के प्रकाश से सारे देश का आकाश जगमगाने लगा। देश दुनिया की निगाहों से ओझल होता पंचगंगा लोगों की निगाहों के बजाय उनके हृदय में उतरता चला गया। जहाँ-जहाँ कबीर, रैदास, धन्ना, तुलसी, सेन की चर्चा पहुँची उनके साथ स्वामी रामानन्द और पंचगंगा

की सुगंध भी पहुँचती रही।

स्वामी जी के इस महान्, अनुपम, योगदान को न कभी भुलाया जा सकता है न मिटाया जा सकता है। वे अमर हैं और अमर रहेंगे। इन सबके बावजूद हम हाथ पर हाथ रखकर तो नहीं बैठ सकते। आज हम जिस मोड़ पर खड़े हैं उसने एक नये प्रकार की चुनौती हमारे समक्ष प्रस्तुत की है। स्वामी जी के समय जीवन के समक्ष जो चुनौती थी उसका समाधान एक धार्मिक या आध्यात्मिक चिंतन के द्वारा प्रस्तुत किया जा सकता था। लेकिन आज की समस्या का समाधान केवल धर्म की परिधि में नहीं आता दिखाई देता। आज हरएक को अपनी अलग पहचान चाहिए। सब एकाकी रहना चाहते हैं। संयुक्त कोई नहीं। हिन्दू, सिख, जैन, बौद्ध में घर बँट चुका है। दलित कह रहे हैं अब हमें भी अलग करो क्योंकि दलित और सवर्ण धर्म दोनों अलग-अलग धर्म हैं। कबीर अलग हैं, रैदास अलग हैं। कल तक अलग रहना मजबूरी थी। सामाजिक वंचना थी। स्वामी रामानन्द ने इस वंचना से मुक्ति दिलाई। आज हम इस बिखराव से कैसे बचें। यह एक बड़ा सवाल है। तब राम काज था समाज के छूटे हिस्से को जोड़ना आज का रामकाज है इस विखण्डन को रोकना।

इस विकट स्थिति में भी हमें पूर्ण विश्वास है कि ज.गु. रामानन्द ही हमारी आशा के केन्द्र हैं। क्योंकि उस महान परम्परा की मशाल जिस तेजस्वी संत के हाथ में है उसकी शक्ति पर इस पूरे देश को विश्वास है। वे सारे देश को जोड़ने के अभियान पर निकल पड़े हैं। पूज्य श्रीरामनरेशाचार्य में हर टूटे हुए को जोड़ लेने और हर रूठे हुए को मना लेने की अद्भुत प्रतिभा दिखाई देती है। वे 'राम काज' को 'आम काज' से अलग नहीं देखते। उनके निकट आकर अभेद्य राजनैतिक दीवारें भी भहरा जाती हैं। उनका प्रेम किसी को पराया मानता ही नहीं। उनके लिए कोई भी सीमा रेखा नहीं इसलिए कोई भी उनके लिए दूसरा हो ही नहीं सकता।

उनके प्रेम में वह ताकत है जिसके आगे आज नहीं तो कल हर विलगाव को पराजित होना होगा। वे स्वामी रामानन्द के उत्तराधिकारी ही नहीं मुझे उनके वरदपुत्र दिखाई देते हैं। क्षणभर उनके पास बैठना मन के हर कलुष को धो देना है। वे पारस हैं। प्रेम के पारस। जिसे छू दे चमक उठे।

●

# जगद्गुरु रामानन्दाचार्य श्रीरामनरेशाचार्य

**ब्रजेन्द्र कुमार सिंहल**

दक्षिण-भारत में भक्ति का शंखनाद आलवारों ने फूँका। आलवार अपने विचार अपनी मातृभाषा तमिल में व्यक्त करते थे जिनको उनके अनुयायियों ने तमिल वेद कहा। इनकी भक्ति भागीरथी भाषा रूपी भँवर में फँसकर तमिल देश तक ही सीमित रह गई। इस अवरोध को आचार्य रामानुज ने प्रस्थानत्रयी पर भाष्य रचकर समाप्त किया। भक्तिभागीरथी निर्बाध सम्पूर्ण देश में कलकल नाद करती हुई प्रवाहित होने लगी। रामानुजाचार्य की भक्तिभागीरथी को और बलवान बताया निम्बार्क, मध्व, विष्णु, बल्लभ, चैतन्य आदि ने।

सर्वाधिक वेगवान् बनाने वालों में अन्यतम नाम है– स्वामी रामानन्द का जो उत्तरभारतीय, महान् योगीराज थे। जिन्होंने इस धराधाम पर लम्बा जीवन जिया व हजारों की संख्या में वैरागी शिष्य बनाकर पूरे भूमंडल पर फैलाया। रामभक्ति का सघन-प्रचार प्रसार किया। देशभाषा में रचनाएँ लिखकर सामान्य जीवों को अध्यात्म पथ पथिक बनाया। इनके शिष्यों में प्रधानशिष्य थे– स्वामी अनंतानंद।

स्वामी अनंतानंत अधिकांशतः गुरु रामानन्द की सेवा में रहते हुए गुरुगद्दी श्रीमठ के अधिष्ठाता बने। इन्होंने भी भक्ति भगीरथ के बेग को मंद न होने दिया। उत्तरोत्तर बढ़ाते ही रहे। इन्हीं महाभाग के अनेक प्रभावशाली शिष्यों में से एक प्रधान शिष्य थे स्वामी कृष्णदास पयोहारी जिन्होंने नाथों को भगाकर गलता में रामावतसम्प्रदाय का झंडा फहराया।

इनके शिष्यों ने रामभक्ति भागीरथी की ऐसी धाराएँ चारों ओर विस्तारित की कि धीरे-धीरे काशी की श्रीमठ-परम्परा गलता में स्थापित हो गई। श्रीमठ प्रभावहीन होता चला गया। यह स्थिति वर्षों, दशकों तक नहीं, शताब्दियों तक चलती रही। श्रीमठ का वैभव, पुस्तकालय, जमीन आदि सभी काफी

---

संत-साहित्य के मर्मज्ञ विद्वान्, कई अज्ञात संतों के साहित्य पर महत्त्वपूर्ण खोज जयपुर।

सीमा तक विलुप्त होती गयीं। समय ने करवट बदली। रामावत सम्प्रदाय के अनेक महंतों, संतों, नागाओं, तपस्वियों, विद्वानों व सहृदय सेवकों ने सन् १९७७ में परमविद्वान्, सुलेखक, सुकवि कुशलवक्ता, आनन्दभाष्य को खोजकर विद्वत्वर्ग के समक्ष प्रस्तुत करने वाले स्वनाम धन्य भगवदाचार्य जी महाराज को श्रीमठ की आचार्यपीठ का रामानन्दाचार्य स्थापित किया। श्री भगवदाचार्य जगद्गुरु पीठ पर अधिक समय न रह सके। वे क्रूरकाल के हाथो सन् १९७८ में ही साकेतगामी हो गए।

इनके पश्चात् इन्हीं के शिष्य श्रीशिवरामाचार्य रामानन्दाचार्य की गद्दी पर अभिषिक्त हुए ये सन् १९८८ तक विराजमान रहकर साकेतगामी हुए। श्री शिवरामाचार्यजी भी परमविद्वान्, परम्परा पोषक, कुशल उपदेष्टा जगद्गुरु थे। एक बार इनका पदार्पण तीर्थराज पुष्कर में हुआ। उस समय अन्तर्राष्ट्रीय-रामस्नेहि-सम्प्रदायाचार्य श्रीस्वामी रामकिशोरजी भी पुष्कर में ही विद्यमान थे। चूँकि उक्त सम्प्रदाय का परम्परया सम्बन्ध अनन्तानंदजी से जुड़ता है। अत: जगद्गुरु शिवरामाचार्यजी को आचार्यजी ने अपने आश्रम रामद्वारा में आमंत्रित कर प्रवचनादि की व्यवस्था करायी। प्रसंगवश वहाँ उपस्थित विद्वान् रामस्नेही संतों ने गुरुपरम्परा का उल्लेख करते हुए रामानन्दाचार्य को भी रामानुज सम्प्रदाय के श्री राघवानन्दजी का शिष्य बताया। जगद्गुरु इस मन्तव्य से सहमत नहीं थे।

ज.गु.रा. श्री शिवरामाचार्य जी के साकेत गमन के पश्चात् श्रीरामनरेशाचार्य का इस पद पर अभिषेक हुआ। जगद्गुरु रामनरेशाचार्य का जन्म सन् १९५४ में बिहार प्रान्त के भोजपुर जिलान्तर्गत ग्राम परसिया में ब्राह्मणकुल में हुआ। जन्म नाम श्रीकृष्ण शर्मा था। वह दर्शनशास्त्र में आचार्य तक शिक्षा प्राप्त कर ११ वर्ष तक विद्यार्थियों को दर्शनशास्त्र भी पढ़ाया। सन् १९८८ में रामावत-सम्प्रदाय के वरिष्ठ महंतों, संतों ने आपको रामानन्दाचार्य पीठ पर विराजमान किया। सन् २०१४ में आपका आयुष्य ६० वर्ष व आचार्य पीठ पर बिराजे हुए को २५ वर्ष हो रहे हैं।

इस उपलक्ष में एक अभिनन्दन ग्रंथ प्रकाशित करने की श्रीमठ की योजना है। जगदुरु श्रीरामनरेशाचार्यजी से व्यक्तिश: मेरा तीन-चार बार मिलना हुआ है। आपका व्यक्तित्त्व महान् है; वाणी में ओज है तो प्रसाद गुण भी है। विद्वानों का आदरसत्कार करना आप भली-भाँति जानते हैं। आप स्वयं कुशलवक्ता होने पर भी बहुत अच्छे श्रोता भी हैं। विद्वानों के भाषणों को सुनकर उनसे पूर्वाग्रह मुक्त होकर चर्चा करना आपका स्वभाव है। जब आप

धाराप्रवाह प्रवचन देते हैं तब दर्शन के गूढ़ विषयों को भी सरल एवं सुस्पष्ट भाषा में समझाते हैं ताकि सामान्य श्रोता भी उन गूढ़ातिगूढ़ विषयों को समझ सकें।

आप काशी जैसी विद्वानों की नगरी में बिराजते हैं जहाँ शब्द व वाक्य तक पर भी तर्क-वितर्क होते हैं। ऐसे नगर में रहकर भी आप निरंतर विद्वानों द्वारा प्रशंसित हैं, अभ्यर्थनीय हैं। इसका तात्पर्य इतना ही है कि आप में विद्वता कूटकूट कर भरी है। आपके आचार्यत्व काल में रामावत-सम्प्रदाय का विस्तार व प्रचार-प्रसार दिनानुदिन बढ़ता जा रहा है।

जब मैं इलाहाबाद कुंभ में गया तब मुझे ज्ञात हुआ कि आचार्यश्री की श्रमसाधना से ही आद्य रामानन्दाचार्य की जन्मभूमि जो किन्हीं कारणों से अन्य लोगों के अधिकार में चली गई थी पुनः रामावत सम्प्रदाय में आ गई है और अब हरितमाधव भगवान की सेवापूजा रामावत संप्रदाय की अर्चापद्धति के अनुसार होती है। आचार्यश्री के समय में कई भवन, संस्थाएँ श्रीमठ से जुड़ी हैं और भविष्य में भी जुड़ेंगी ऐसी आशा है।

आचार्यश्री साहित्य प्रकाशन के क्षेत्र में सर्वाधिक सचेष्ट हैं और श्रीमठ से आपके अनेक सम्प्रदाय से सम्बद्ध ग्रन्थों का प्रकाशन करवाया है। सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण ग्रंथ 'वैष्णवमताब्जभास्कर' है जिसमें रामावत्-सम्प्रदाय का आचार-विचार दर्शन व्याख्यायित है।

मैं ऐसे महान् व्यक्तित्व के दीर्घायुष्य की कामना करता हूँ तथा अपना प्रणिपात निवेदन करता हुआ भगवान् श्रीराम की अखंड निश्चल भक्ति प्राप्त करने की कामना करता हूँ।

●

# कर्तृत्त्व से कृतकृत्य होना

**कौशलेन्द्र पाण्डेय**

पूज्यपाद श्री उड़िया बाबा को कल्याण के किसी अंक में पढ़ा था; शायद संत विशेषांक था यह। इसके अंतर्गत एक श्लोक के माध्यम से उन्होंने संत विषयक अपनी बात कही थी, यह कि प्रत्येक सम्प्रदाय में अच्छे से अच्छे संत होते हैं; हमे धर्म या सम्प्रदाय के पचड़े में न पड़कर उन्हें उनकी बहुविध उदात्तता की दृष्टि से वरीय एवं अनुकरणीय मानना चाहिए। यह भी व्यवस्था उन्होंने दी कि ऐसे संत की उत्तमता को किसी देश अथवा काल की सीमा से आबद्ध करना भी उचित नहीं, क्योंकि उनकी अनुकम्पा से ही वे अस्तित्वशील रहते हैं, प्रकारान्तरतः उनकी खूबियों का यदि हस्तामलक विवरण दिया जाये तो वे हैं निरपेक्षता, भगवत्परायणता, शान्तिप्रियता, अहंकारशून्यता, द्वन्द्वशून्यता, निष्परिग्रह और उनकी शान्त, निर्ममत्व एवं समदृष्टि वाली प्रवृत्ति! यथा : 'सन्तोऽनपेक्षा मश्वित्ता; प्रशान्तः समदर्शनः/ निर्ममा निरहंकारा निर्द्वन्द्वा निष्परिग्रहाः।।'' ज्ञानी और भक्त संत-महात्मा चमत्कार प्रदर्शन से दूर भी रहते हैं। हाँ, उनकी कृपा विशेष से उनके स्तर से किसी के प्रति कोई मनचाहा चमत्कार हो जाय तो हमें उसे उनकी दयालुता ही समझनी चाहिए। वस्तुतः संत अकिंचन होता है, नितान्त अकिंचन!

किसी पहुँचे हुए साधु को भी संत कहा गया है। आवश्यक नहीं कि वह विरक्त और त्यागी हो। गृहस्थ और कर्मयोगी महात्मा भी संत रूप में मान्य-सम्मान्य होते हैं। गोस्वामी जी के अनुसार तो नवनीत की मानिन्द मानस वाला व्यक्ति भी संत है, अगर वह ताप के बजाय किसी भी प्राणी की व्यथा को देखकर संवेदित हो यथा संभव या फिर यथापेक्षित उसकी मदद भी करे। वह उस व्यक्ति को भी संत की संज्ञा देते हैं जो दूसरे के हित में ही उसकी विवेक शून्यता का विरोध करते हुए उत्पीड़ित हो। यथा : ''उमा संत कै इहै बड़ाई। मंद करत जे करहि भलाई।' संत श्रीरामकृष्ण की तरह परमहंसी वृत्ति वाले भी होते हैं; अपनी विद्वता, विवेकशीलता एवं परीक्षा

वरिष्ठ साहित्यकार, पूर्व विक्रीकर आयुक्त मारुतिपुरम, लखनऊ

पटुता के कारण वह जगद्गुरु स्वामी शंकराचार्य, स्वामी राघवाचार्य, रामानन्दाचार्य और इन्हीं की परम्परा में सर्वश्री अनंतानन्द, पौहारी कृष्णदास, अग्रदास, सुरसुरानन्द, माधवानंद, गरीबानन्द, लक्ष्मीदास, गोपालदास, नरहरिदास और गोसाईं तुलसीदास प्रभृति कितने ही संत व्यक्तित्व तो अग्रिम पांक्तेय संत हैं। रामानन्दाचार्य जी के जिन प्रमुख शिष्यों के नाम इस सूची में नहीं सम्मिलित हो पाये, वे भी संत हैं क्योंकि उनमें भी संतों की उल्लिखित विशिष्टताओं का सम्यक् समावेश था।

काशी स्थित श्रीमठ के आदि आचार्य थे स्वामी रामानन्दाचार्य जी महाराज। हम उन्हें संत भी कह सकते हैं, विशालमना एवं मानव कल्याणकामी महासंत भी। ये पिता श्रीपुण्य सदन और श्रीमती सुशीला देवी के आत्मज रूप में अवतरित हुए। इनके बारे में तो लोकमान्यता भी है कि श्रीराम के आचरण वाले "रामानन्दः स्वयं रामः प्रादुर्भूतो महीतले।" एक, अन्य निकष पर भी इनके त्रेतायुगीन श्रीराम होने की मान्यता सर्वथा तथ्यस्वरूप है। सर्वसंज्ञान में है कि विजातीय तत्वों ने जब-जब वैदिक मान्यताओं और नीति, सदाचार और करुणा प्रभृति मानवीय मूल्यों पर आधारित भारतीय जीवन शैली पर प्रहार किया, जनजीवन को विषाक्त बनाने के कुत्सित प्रयोजन से हमारी पावन एवं पाप मुक्त परम्पराओं के विरुद्ध वातावरण सृजित करने का कुचक्र रचा, उनके समूलोन्मूलनार्थ जगन्नियंता का किसी न किसीरूप में प्राकट्य हुआ; कभी दाशरथि रूप में राम कभी वासुदेव कृष्ण। उन्होंने तो भक्त बालक प्रह्लाद की रक्षार्थ व्याघ्र और मानव का मिलाजुला रूप भी धारण किया, सृष्टि के त्रयताप निवारणार्थ वाराह और कछुआ बनने में देर नहीं की। जगद्गुरु स्वामी रामानन्दाचार्य का जन्म भी अनेकशः विद्रूप अपस्थितियों से भारतीय जनजीवन को निजात दिलाने के महत्योद्देश्य से हुआ। वह एक अत्यन्त विलक्षण युगान्तरकारी एवं भारतवासियों में नवचेतना के प्रवर्तक के रूप में आसृष्टि स्मरणीय रहेंगे। तथ्यतः वह धर्म, समाज के साथ-साथ भक्ति के स्वरूप के बारे में समान रूप से चिंतित थे। 'वे जिस सम्प्रदाय में दीक्षित हुए वह विष्णोपासक था। इस उपासना ने रामभक्ति से पूर्व ही कृष्णभक्ति की प्रेरणा को जाग्रत कर दिया था। जयदेव के गीत-गोविन्द ने तो कृष्णोपासना को अतिरिक्त ऊर्जा प्रदान की ही, समसामयिक कतिपय अन्य स्थितियों तथा उपासना पद्धति की सर्वस्वीकार्यता ने उसे उत्तरोत्तर गति दी। ऐसी स्थिति से निपटने के लिये प्रखर मेधा के धनी रामानन्दाचार्य ने विष्णु और श्रीकृष्ण के स्थान

पर एक ऐसे आराध्य की आवश्यकता का अनुभव किया जो देशवासियों के शौर्य, अलोभ, परिहार, सहिष्णुता और संघर्षशीलता जैसे मनोभावों को एक साथ स्पन्दित और उत्प्रेरित कर सके। तदनुसार उपयुक्तता की दृष्टि से श्रेष्ठतम याकि आदर्श विकल्प थे श्रीराम! स्वयं की व्यावहारिक दयालुता के आधार पर हिन्दुओं के इस्लाम के पक्ष में क्षरण को अंकुशित करने और हिन्दू-मुसलमान-सूफियों, शूद्रों एवं सत्तासीन व्यक्तित्वों को श्री सम्प्रदाय (रामावत) से जोड़ने के काम में इनका जननायक रूप भी दिखा, संत नायक का भी स्वामी जी ने हिन्दू नारियों की सुरक्षा के निमित्त अपने द्वादश प्रमुख शिष्यों में दो नारियों को भी स्थान दिया। प्रथम थी त्रिपुरा के पण्डित प्रभाकर शर्मा की आत्मजा पद्मावती तथा द्वितीय लखनऊ जनपदान्तर्गत 'परवम' ग्रामवासी पं. सुरेश्वर प्रसाद शर्मा की पड़ोसन 'सुरसरी' जिन्हें स्वामी जी ने दिव्यातिदिव्य शक्तियों से सम्पन्न करके दक्षिण भारत के आतताई सूबेदार मलिक काफूर को निर्णायक रूप से पराभूत करने का दायित्व सौंपा था। वे अंततः सफल भी रहीं। किसी प्रकार के भेदभाव एवं आंतरिक विवाद की किंचित्मात्र परवाह न करके उन्होंने कबीर को शिष्यत्व के साथ साथ महाभागवत की उपाधि भी प्रदान की हालांकि वह एक जुलाहा परिवार से सम्बन्धित होने के कारण मुसलमान थे। रैदास को शिष्य बनाने के अवसर पर स्वामी जी ने भारतीय स्तर पर सभी संतों का महाभोज आयोजित करके शेष वर्ण वाले हिन्दुओं से दलितों-अस्पृश्यों के प्रति सौमनस्य का भाव रखने तथा उन्हें समादरणीय समझने का सुस्पष्ट एवं साहसिक आह्वान भी किया। धन्ना जाट के मन में उसकी किशोरावस्था में ही, ईश्वरानुभूति कराई अनन्तर उसे अपना शिष्य भी बना लिया। राजस्थान में अरावली की उपत्यकाओं की गोद में अवस्थित गागरोनगढ़ के नरेश पीपा जी भी जगद्गुरु रामानन्दाचार्य के प्रभाव-परिवेश में आये -आजीवन रामोपासना को समुचित तरजीह भी दी।

एसेज ऐण्ड लेक्चर चीफली ऑन दि रिलीजन ऑफ हिन्दूज (वाल्यूम-I) में अंग्रेज जॉ. एच. एच. विल्सन ने एक स्थान पर स्वामी जी के आवासीय परिदृश्य को अनुवर्ती शब्दों में रेखांकित कियां था– 'श्री रामानन्द स्वामी के रहने का स्थान काशी के पंचगंगा घाट पर था। वहाँ उनके अनुयायियों का एक विशाल श्रीमठ काशी के पंचगंगा घाट पर था जिसे मुसलमान बादशाहों ने तोड़वा डाला। वर्तमान में उसी मठ के समीप एक पत्थर के चबूतरे पर उनकी चरण पादुकायें बनी हैं। काशी में रामानंद सम्प्रदाय के और भी बहुत

से मठ बने हुए हैं जिनमें उनके प्रख्यात अनुयायी रहते हैं जिनकी एक प्रधान पंचायत बनी है जिसका प्रभुत्व भारत के रामानन्दियों पर प्रधान रूप से है।''

अपनी साकेत वापसी के अवसर पर जन समुदाय को सम्बोधित करते हुए स्वामी जी ने सभी से यह अपेक्षा की थी कि उनके स्तर से लोक कल्याण के लिये खोले गये सभी मार्गों को यथावत् बनाये रखने में यथावश्यकता कुछ न कुछ नव्यता तो लायेंगे ही, उन्हें सार्वजनीन बनाने याकि उनके लोक प्रचार व प्रसार का निर्वाह अपने 'कर्त्तव्य' की तरह करेंगे जिससे उनका सातत्य बाधित न हो और श्रीमठ तथा रामानंद सम्प्रदाय की गतिविधियाँ पूर्ववत् स्पन्दनशील रहें। साम्प्रतिक जगद्गुरु (स्वामी रामनरेशाचार्य के अनुसार तो महाप्रयाण से पूर्व सर्वोपास्य आदि आचार्य ने समस्त शिष्यों एवं अपने भक्तों को एक आध्यात्मिक दृष्टि भी दी थी– 'भगवतस्मरण ही जीवन का सार है; इसके द्वारा जीवन परमशान्ति को प्राप्त कर धन्य-धन्य याकि कृतार्थ हो जाता है; आध्यात्मिक, आधिभौतिक और आधिदैहिक दुखों की निवृत्ति भी हो जाती है। परमानन्द सिन्धु श्रीसीताराम जी के नित्यधाम साकेत लोक को प्राप्त कर उनकी समीपता, नित्यलीलाओं के दर्शन एवं सेवा के माध्यम से कोई भी प्राणी दिव्यानन्द सिन्धु में गोते लगाता है। ऐसे वाक्यों से उन्होंने वासुदेव श्री कृष्ण की ''अनित्यसुखं लोकम्'' (अर्थात् अनित्य संसार नित्य सुखमय कैसे हो सकता है) की उक्ति को अद्यतनता प्रदान की है।

'श्रीमठ प्रकाश' कृति (प्रकाशन वर्ष २००१) मध्य प्रदेश सरकार के सूचना एवं प्रसारण मंत्रालय, भोपाल की प्रस्तुति है। इसके प्रणेता स्वामी रामनरेशाचार्य जी ने 'आचार्यशी:' शीर्षकान्तर्गत श्रीमठ की ऐतिहासिक पृष्ठभूमि आकार आदि का अपने पाठकों को आचमन कराते हुए उसके भविष्य की शुभता की पूर्व कल्पना की प्रक्रिया में कतिपय गतिरोधों का उल्लेख भी किया है। इनके अनुसार सम्प्रदाय के आदि आचार्य प्रवर ने अपनी परमोदात्त भावना से समाज के प्रत्येक वर्ग को श्रीराम भक्ति के परम मंगल महापथ पर चलाकर उसे परम कल्याण से जोड़ते हुए देश को विखण्डन से बचाया था, वर्त्तमान में भी वहीं आचार्य स्थितियाँ सर्वत्र दृष्टव्य हैं। हम सभी सम्प्रदाय एवं जातिगत भेदभाव से ग्रस्त हैं; समाज और सम्पूर्ण राष्ट्र के प्रत्येक निर्णय या प्रमुख निकष है जाति और धर्म। स्वामी जी के अनुयायी ही श्रीमठ की मौलिक छवि को तार-तार करने के लिये कटिबद्ध हैं। वे अपने उद्धारक पथ प्रदर्शक तथा अप्रतिम क्रान्तधर्मी अध्यात्म पुरुष के उल्लिखित निर्देशों की अनदेखी

कर रहे हैं जो कम चिन्ता की बात नहीं। पूज्यपाद श्रीरामनरेशाचार्य जी ऐसी विषम स्थिति जिसमें ब्राह्मण ही पारस्परिक कलह से ग्रस्त है, असवर्ण वर्ग तथा इतर धर्मावलम्बी भी श्रीमठ या कि श्रीसम्प्रदाय की लोकहितोन्मुखी परम्परा जनित कीर्ति को विस्मृत कर चुके हैं। आचार्यवर को तिमिराच्छन्न आसन्न विरूपताओं के शमन की दिशा में श्रीमठ कल और आज' विषयक सत्साहित्य प्रकाश स्तंभ-सा लगा। १८ जनवरी २००१ में डॉ. विवेकी राय के स्तर से सम्पादित कृति 'श्रीमठ प्रकाश' के अंतर्गत लोक विश्रुत लेखन धर्मियों में उल्लेखनीय हैं सर्वश्री राम कुमार दास, वैकुण्ठनाथ उपाध्याय, मारुति नन्दन तिवारी, राम मिलनदास शास्त्री, महन्त रामादास, भरत शर्मा, हरिशंकर, अर्जुन प्रसाद शुक्ल, मोहनलाल तिवारी (प्रो.) वासुदेव सिंह, रामचन्द्र सिंह, प्रेम नारायण सिंह, नाभा जी भक्तमाल, वेणी प्रसाद शर्मा, गंगा शरण शास्त्री, स्वामी योगिराज, वेंकटेश शर्मा, गंगा सागर राय, वैदेही कांत शरण, रामेश्वरानन्दाचार्य, मुरलीधर पाण्डेय, नागेन्द्रनाथ उपाध्याय, भोलाशंकर व्यास, माधवाचार्य, वेद प्रकाश गर्ग तथा कुछेक अन्य।

जगद्गुरु की प्रेरणा के फलस्वरूप विख्यात साहित्यधर्मी डॉ. उदयप्रताप सिंह के स्तर से सम्पादित "जगद्गुरु रामानन्दाचार्य : श्री सम्प्रदाय (रामावत) : विविध आयाम' भी ११ जून २०११ भी प्रकाशित हुआ। यह वस्तुतः श्रीमठ समग्र है। 'नमोऽस्तुरामाय' शीर्षकीय आशीर्वचनों में आचार्य प्रवर ने रेखांकनीय बात यह कही है कि आदि आचार्य का बारम्बार स्मरण किया जाना सर्वथा श्लाघ्य है। वह हिन्दी के प्रमुख उन्नायकों में अग्रगण्य हैं तो भी उन्हें खेद है कि डॉ. विवेकी राय के 'श्रीमठ प्रकाश के' बाद के पूरे एक दशक के अंतराल में उनके बहुआयामी वैराट्य विषयक चिन्तन, लेखन तथा प्रकाशन कम ही हो पाया; जो और जितना हुआ वह चिंतन के निकष पर अपस्तरीय और अप्रशस्य ही कहा जायेगा। अपने अभिमत के प्रस्तर द्वै के अंतर्गत तो उन्होंने सुसंस्कृत सधुक्कड़ी में लगभग एक दर्जन ऐसे विषयों को सार्वजनीन भी किया जिन पर अनिवार्यतः लिखा जाना चाहिये था; किन्तु चिन्तन गांभीर्य तथा शोधपरकता के साथ। प्रखर आचार्य ने उल्लिखित श्रीमठ समग्र के लगभग दो दर्जन विद्वानों की प्रशंसा की है कि उन्होंने पूर्ण तत्परता, संयम तथा अदम्य प्रयास के फलस्वरूप पूर्व पंक्तियों में इंगित लगभग सभी विषयों को आलेखबद्ध करके धर्म, समाज, राष्ट्र तथा मानवता का महान उपकार किया है, उनके मानस की तिक्ति का निर्मूलन भी। उन्होंने आलेखों की सर्वांगीण

स्तरीयता से उत्फुल्लित होकर लेखकों को रामानन्दीय आशीर्वाद से अभिषिक्त भी किया है। उनकी बहुत पहले से प्रबल कामना रही है कि श्री सम्प्रदाय (रामावत) तथा उसके प्रवर्तक श्री रामानन्दाचार्य से सम्बन्धित साहित्य प्रभूत मात्रा में सर्वसुलभ कराया जाय। इसकी पूर्ति सुनिश्चित करने के लिये उन्होंने 'श्रीमठ समग्र प्रकाशन' की एक महत्वाकांक्षी योजना भी निर्मित की है जिसके अनुसार अब श्रीरामानन्द सम्प्रदाय (रामावत) प्रवर्तक, सिद्धान्त, रामभक्ति का विस्तार, परवर्ती रामभक्ति की सगुण-निर्गुण परम्परा प्रभृति अन्यान्य विषयों को ध्यान में रखकर "श्रीमठ समग्र" का प्रकाशन निरंतर हो रहा है। उसके दो खण्ड डॉ. उदय प्रताप सिंह के संपादन में प्रकाशित हो चुके हैं।

प्रसंगानुकूल है कि श्रीमठ के आदि आचार्य की जन्मस्थली तीर्थराज प्रयाग स्थित हरित माधव मंदिर से लोकार्पित हुए बृहत्ग्रंथ 'तीर्थराज प्रयाग और रामभक्ति का अमृत कलश' के संक्षिप्तोल्लेख का। मेरी अपनी धारणा के अनुसार महाराज जी की सत्प्रेरणा से सर्वसुलभ हुए अनेक दृष्टि-दा मानक ग्रन्थों की श्रृंखला की ये भी एक अविस्मरणीय कड़ी है। इसके अनेक विषयान्तर्गत आलेख चाहे वह कुम्भ, कुम्भ के दौरान शाही स्नान, कुम्भ के सांस्कृतिक महत्व या फिर जगद्गुरु रामानन्दाचार्य प्राकट्यधाम /११६, प्रयागराज में आचार्य राज/ १२४, पंचगंगा और रामानन्दाचार्य/ १३३, रामानन्द की सार्वभौम विचारधारा/१३३, वैदिक आलेक में जगद्गुरु रामानन्दाचार्य की राष्ट्रीय चेतना/ १४० स्वामी रामानन्द की राष्ट्रीय चेतना : वर्त्तमान परिप्रेक्ष्य/ १४६ तथा अन्यान्य जो ग्रन्थ के पृष्ठ १५२, १६७, १७६, १८४, २५२, २६४, २९६, ३०९ और ३३६ पर सुलभ हैं। सभी पूर्णरूपेण सुविचारित होने के साथ-साथ रामानन्दी परम्परा को अद्यतन प्रासंगिकता से जोड़कर अनेक आयामी बनाते हैं। मानव, समाज और समष्टि के दुख से संवेदित होकर जो इनका कल्याण कामी हो, उनके भविष्य को उपयुक्ततम एवं आसृष्टि अविस्मरणीय शिल्प देने की निःस्वार्थ साधना करे, जन्मना एवं कर्मणा तत्वज्ञानी होता है वह। मुण्डकोपनिषद् के एक प्रसंग के अनुसार वृक्ष की एक शाखा पर बैठे दो पक्षियों में मादा पक्षी दूसरे से प्रश्न करती है– श्रेष्ठ मानव कौन है? तत्ववेत्ता पक्षी ने लोक श्रेयष्कर इस प्रश्न के उत्तर में कहा– मानव दो प्रकार का होता है– प्रथम जो कबन्ध मानसिकता का हो, तात्पर्यतः जो केवल स्वयं के लिये जिये, उसकी आँखें, कान, मुँह सभी पेट में ही होते हैं; वह कंठ से नीचे वाले अंगों को पोषित-संपोषित करते रहने में अपने

जीवन को सफल मानता है। द्वितीय वह जो अनपे कण्ठ से ऊपर के भाग को सम्पोषित करता है; स्वयं के मस्तिष्क को लोकहितोन्मुखी दिशा में प्रवृत्त करता है, परमार्थ ही जिसका व्यक्तिगत स्वार्थ है। यही श्रेष्ठ मानव रूप में मान्य है। वर्त्तमान जगद्गुरु, श्रीमठ के आदि आचार्य को अपने आदर्श स्वरूप ग्रहण कर चुके वह चाहते हैं कि सभी जाति, धर्म एवं सम्प्रदायानुलम्बियों, चाहे वे पीड़ित-प्रपीड़ित हों अथवा संत पीपा जी की प्रस्थिति के श्रीमठीय रामानन्दी परम्परा से जुड़ें, उसे प्रचारित-प्रसारित करें, नए-नए कबीर, रैदास, पद्मावती-सुरसरी तथा रामानन्दी चिन्तन से संबलित अन्यान्य नारी तथा पुरुष संत चिह्नित हों और व्यक्तिगत स्वार्थ के तहत वह (वर्त्तमान जगद्गुरु) स्वयं आत्मतुष्टि प्राप्त कर सकें तथा कीर्तिलब्ध हों– बस!

जगद्गुरु आश्वस्त तो हैं अपने तथा रामानन्दी परम्परा के प्रति निष्ठ सारस्वत साधकों तथा अनुयायियों से लेकिन शासकीय सोचजन्य अनेक नीतियाँ किसी न किसी तरह लक्ष्यप्राप्ति में आड़े आ सकती हैं। मुझे विश्वास है कि उनके निराकरण के और सामंजस्य स्थापित करने के निमित्त किन्हीं न किन्हीं युक्तियों पर वह पूर्व से ही चिन्तनशील अवश्य होंगे।

●
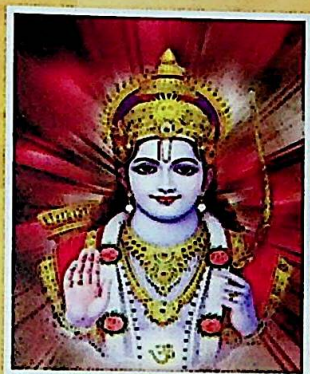
परमाचार्य श्रीराम जी
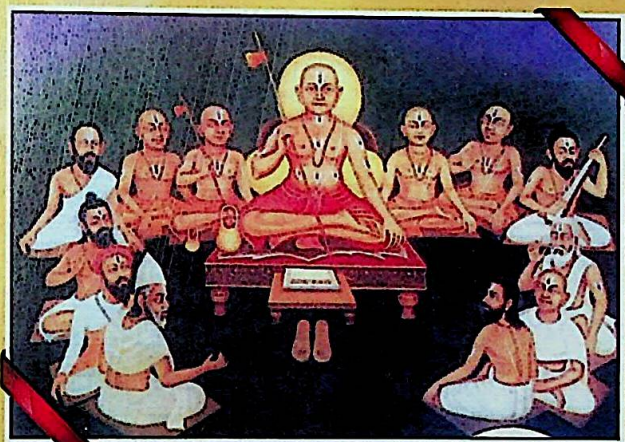
द्वादश आदित्यों (प्रमुख शिष्यों) के साथ जगद्गुरु श्री रामानन्दाचार्य जी महाराज
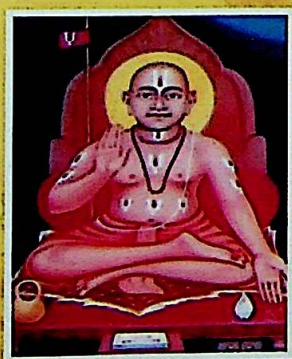
मध्यमाचार्य
ज.गु. रामानंदाचार्य जी
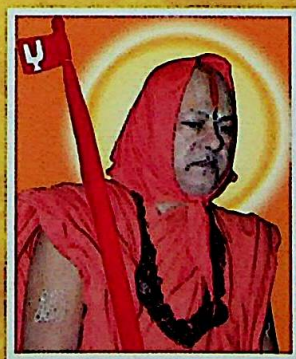
वर्तमानाचार्य
श्रीरामनरेशाचार्य

महाराज श्री विभिन्न मुद्रा में
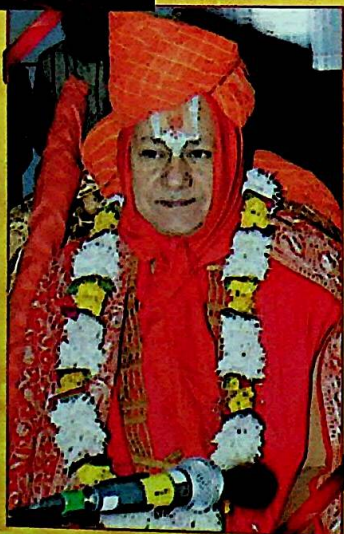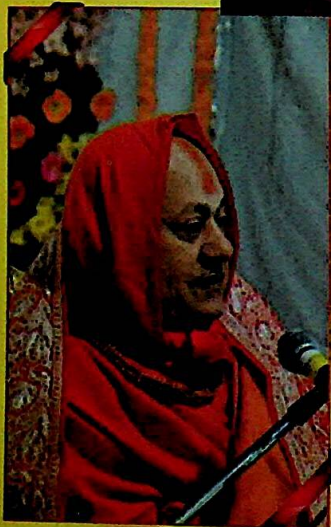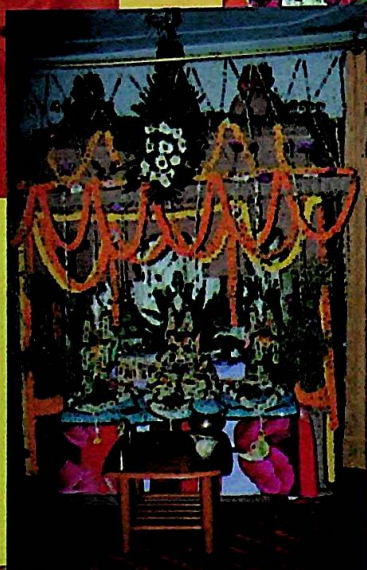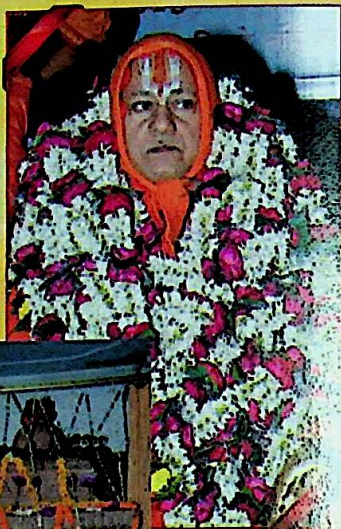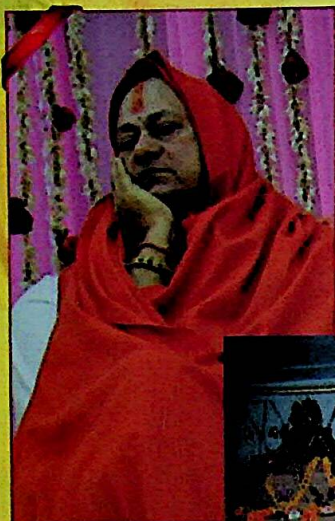
## महाराज श्री विभिन्न मुद्राओं में
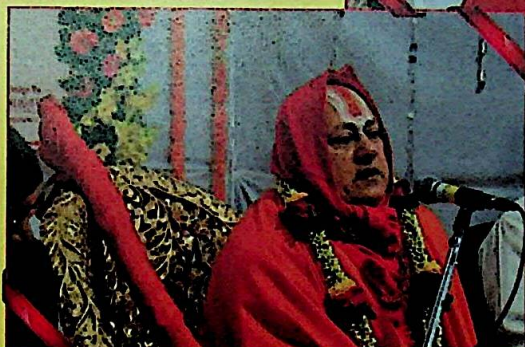
वर्तमानाचार्य स्वामी रामनरेशाचार्य जी प्रसन्न मुद्रा में

वर्तमानाचार्य स्वामी रामनरेशाचार्य जी प्रसन्न मुद्रा में
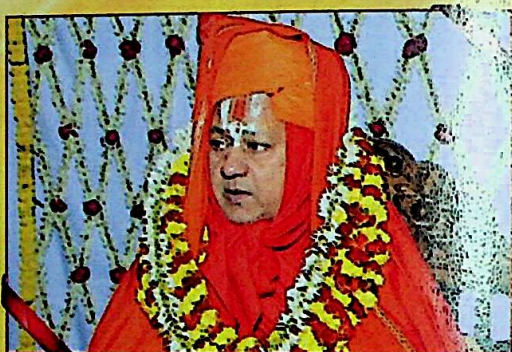
वर्तमानाचार्य स्वामी रामनरेशाचार्य जी प्रसन्न मुद्रा में

वर्तमानाचार्य स्वामी रामनरेशाचार्य जी प्रसन्न मुद्रा में

महाराजश्री अतीव प्रसन्नद मुद्रा में

महाराजश्री का चरणपूजन करते हुए सम्प्रदाय के वरिष्ठ संतगण
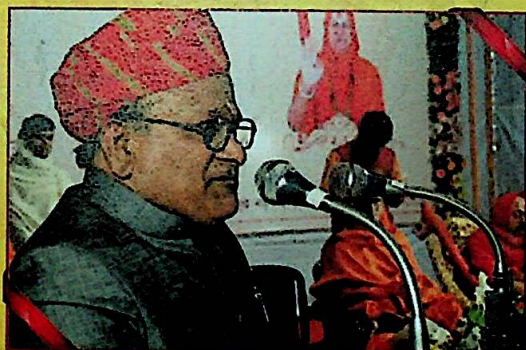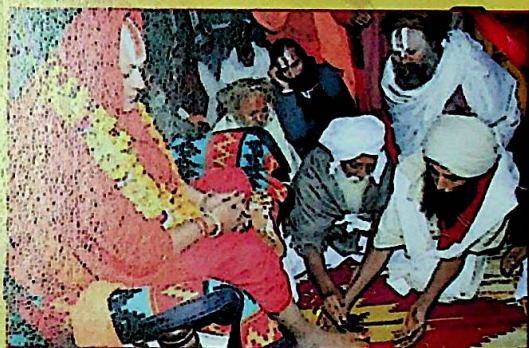
रामानंदाचार्य पुरस्कार प्राप्त विद्वानों की ओर से आभार व्यक्त करते हुए डॉ. उदय प्रताप सिंह

जगद्गुरु रामानंदाचार्य जयंती पर पूजन करते हुए रामरतन जी-जोधपुर.
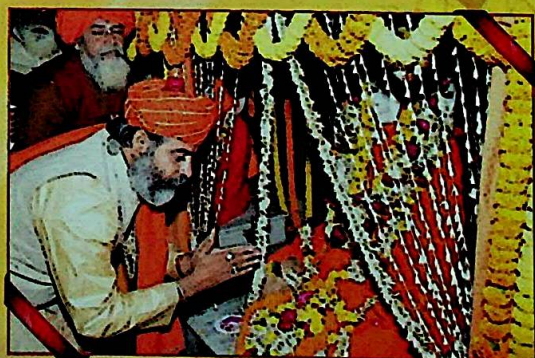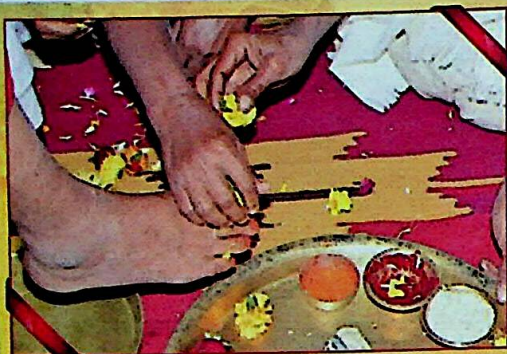
महाराज जी का चरण-
वन्दन करते भक्तगण

महाराज जी जगद्गुरु
रामानंदाचार्य जी का
पूजन करते हुए (श्रीमठ)
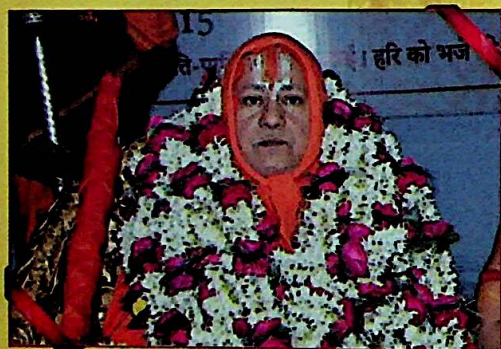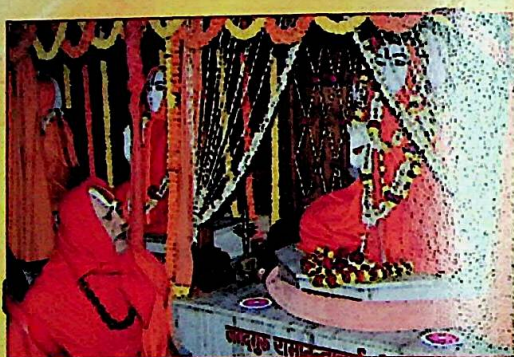
वर्तमानाचार्य स्वामी
रामनरेशाचार्य जी प्रसन्न
मुद्रा में

श्रीसम्प्रदाय के परमाचार्य
भगवान श्रीराम,
शक्तिस्वरूपा जानकी जी
एवं श्रीलक्ष्मण जी (श्रीमठ)
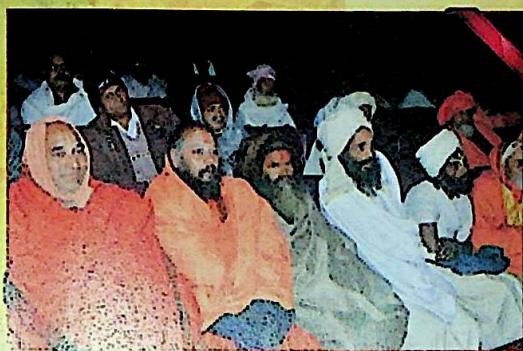
रजत जयंती समापन :
उपस्थित संतगण

रजत जयंती समापन :
उपस्थित श्रोतागण
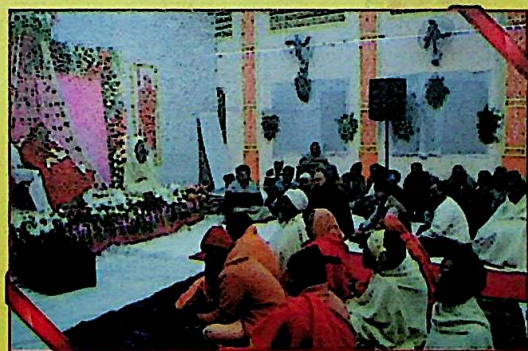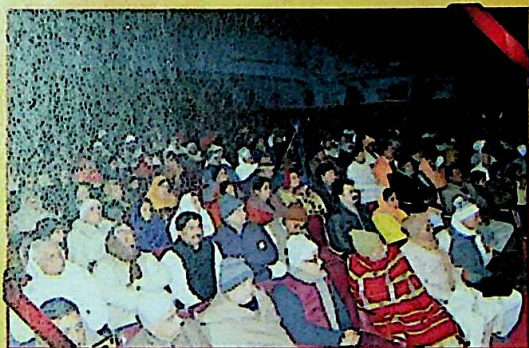
प्रवचन देते महाराजश्री

रसास्वादन करते भक्तगण

महाराजश्री, सेनाचार्य अचलानन्द गिरी -जोधपुर एवं अविमुक्तेश्वरानन्द-काशी के साथ.

वर्तमानाचार्य स्वामी रामनरेशाचार्य जी प्रवचन की मुद्रा में
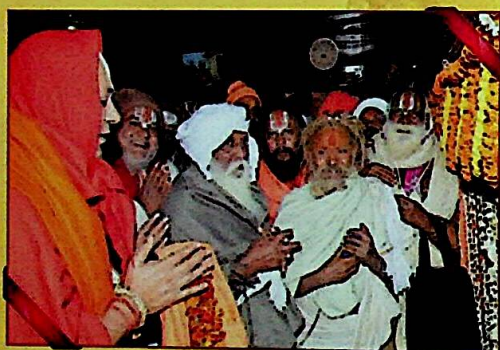
रामानंद संप्रदाय के संतों का सम्मान करते हुए महाराजश्री

रजत जयंती के अवसर पर पूवन करते महाराजश्री
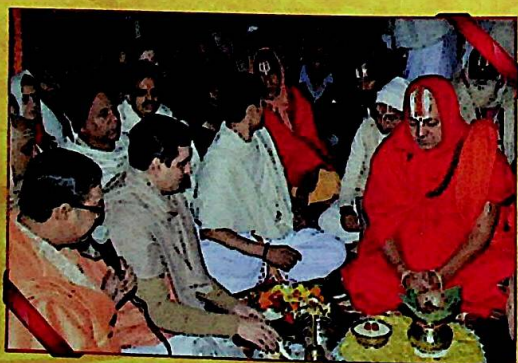
महराजश्री रामानन्दाचार्य पुरस्कार के अवसर पर डॉ. उदय प्रताप सिंह को तिलक करते हुए.

रामानन्दाचार्य पुरस्कार प्राप्त विद्वत्गण विनायक [illegible]श्वर बादल, आचार्य [illegible] शुक्ल व डॉ. उदय प्रताप सिंह

रामानन्दाचार्य पुरस्कार प्राप्त विद्वत्गण प्रमाण-पत्र के साथ महाराजश्री एवं सेनाचार्य अचलानंद गिरि जी

महाराजश्री द्वारा अभिनन्दित आचार्य वशिष्ट त्रिपाठी - काशी
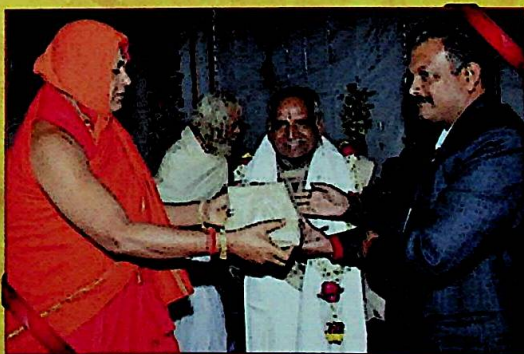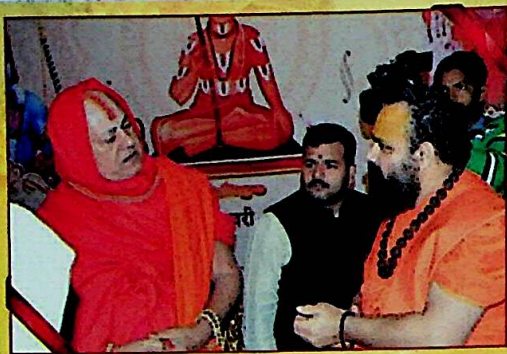
वार्ता के क्षण : महाराजश्री के साथ महामण्डलेश्वर भवानीनंदन जी यति.

संकट मोचन श्रीमहान्त को अभिनन्दित करते महाराजश्री.
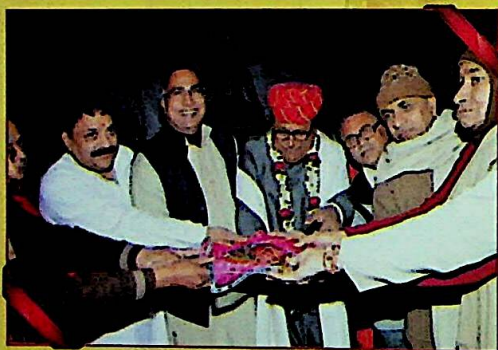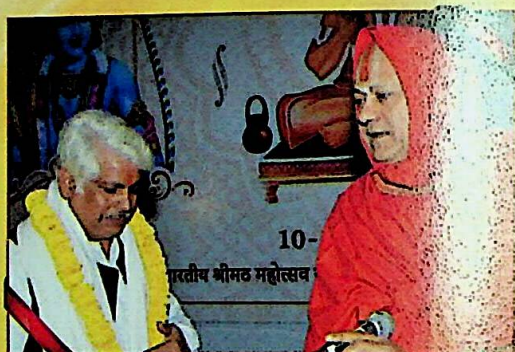
डॉ. उदयप्रताप सिंह को रामानंदाचार्य पुरस्कार की राशि एक लाख रु. प्रदान करते भक्तगण.

रामानंदाचार्य पुरस्कार के अवसर पर विनायक मंगलेश्वर बादल को तिलक लगाते महाराजश्री
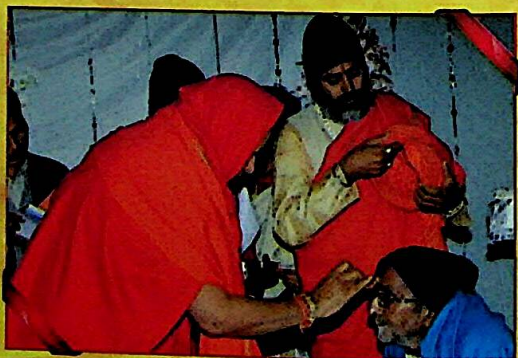
रामानंदाचार्य पुरस्कार प्रदान करने के अवसर पर महाराजश्री, सेनाचार्य, डॉ. महेश शर्मा, रेलराज्य मंत्री श्री मनोज सिन्हा, मंगलेश्वर बादल, रामयत्न शुक्ल व उदय प्रताप सिंह.

रामान[illegible] पुरस्कार ग्रहणो[illegible] आभार व्यक्त करते हु[illegible] रामयन्त शुक्ल
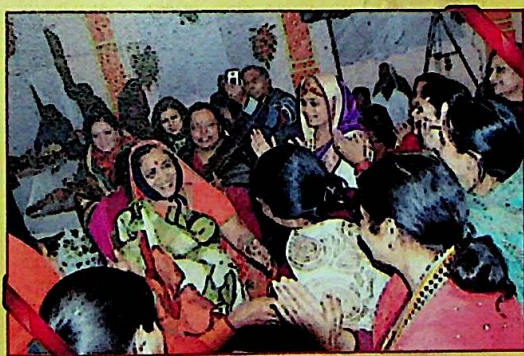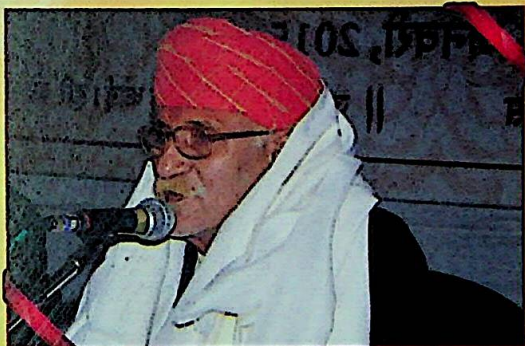
रजत जयंती के अवसर पर प्रसन्न मुद्रा में भक्तगण

नगर के प्रतिष्ठित विभिन्न क्षेत्रों के प्रतिनिधिगण
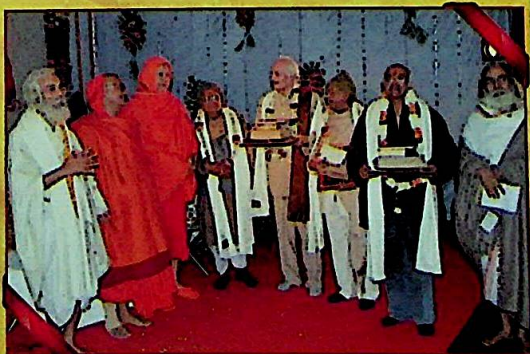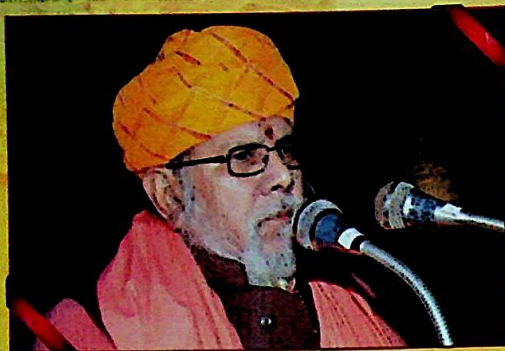
रजत जयंती के अवसर पर उद्गार व्यक्त करते हुए अन्नपूर्णा के श्रीमहांत श्री रामेश्वर पुरी जी - काशी

रजत जयंती के अवसर पर उद्गार व्यक्त करते हुए श्रीमहांत श्री रघुवीर दास जी - पंजाब
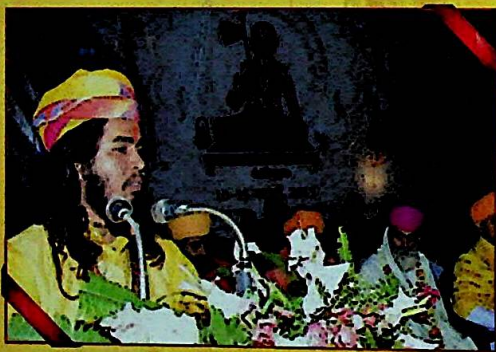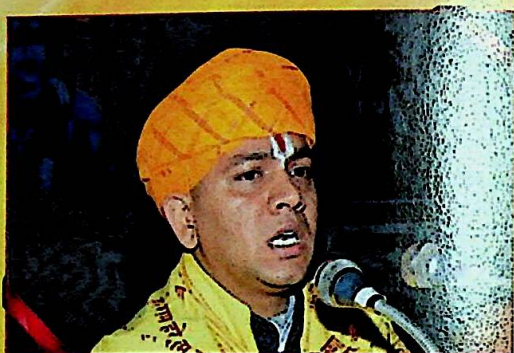
रजत जयंती के अवसर पर उद्गार व्यक्त करते हुए श्रीमहांत श्री सतुआ बाबा म.म. श्री संतोष दास जी - काशी

महाराजश्री को जोधपुरी पगड़ी बाँधते हुए रामरतन दास जी

रजत जयंती समापन समारोह पर भजन प्रस्तुत करती हुईं धनाश्री - मुंबई.

रजत जयंती के अंतिम दिवस पर प्रवचन सुनते संतगण
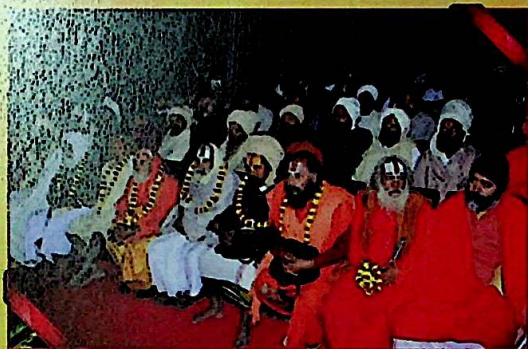
रजत जयंती में सहभागिता करते हुए महांतगण

वेदपाठ करते हुए विद्वानों का कुशलक्षेम लेते हुए महाराजश्री
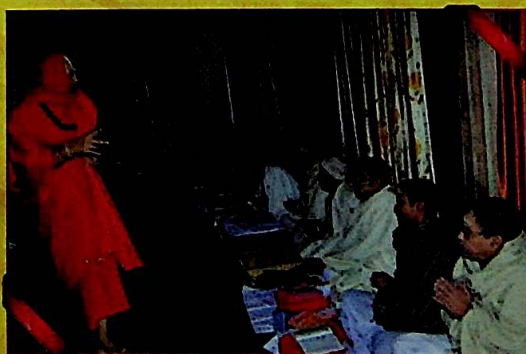
महाराजश्री की आरती करते हुए समुद्रायित भक्तजन

महाराजश्री की आरती करते हुए समुद्रायित भक्तजन

वसंतपूजा के अन्तर्गत चारों वेदों की एक-एक शाखा का पाठ करते पारंपरिक विद्वानगण

जगद्गुरु रामानन्दाचार्य जी का पूजन करते वर्तमानाचार्य श्री रामनरेशाचार्य जी महाराज
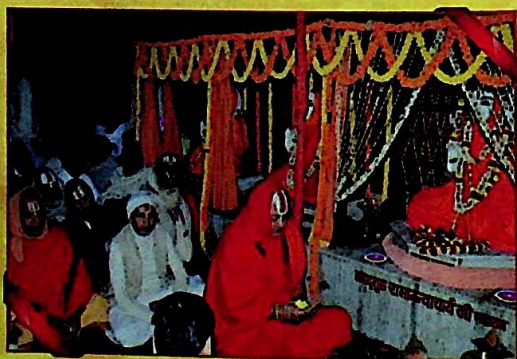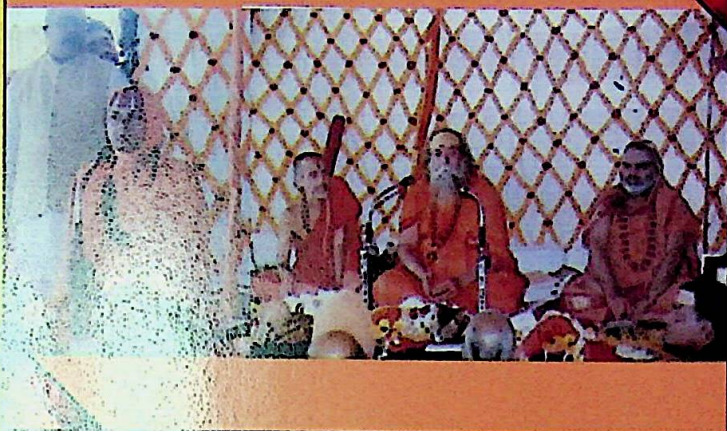
[illegible]मालय [illegible] की पहली बैठक के बाद चार महान आचार्य एक साथ ज.गु.रा. [illegible]नरेशाचार्य जी, ज.गु. श्रीमध्वाचार्य जी विश्वेश्तीर्थ, श्रीशंकराचार्य स्वामी स्वरूपानंद जी, शृंगेरीशंकराचार्य श्रीभारती तीर्थ जी श्रीमठ पंचगंगा काशी.
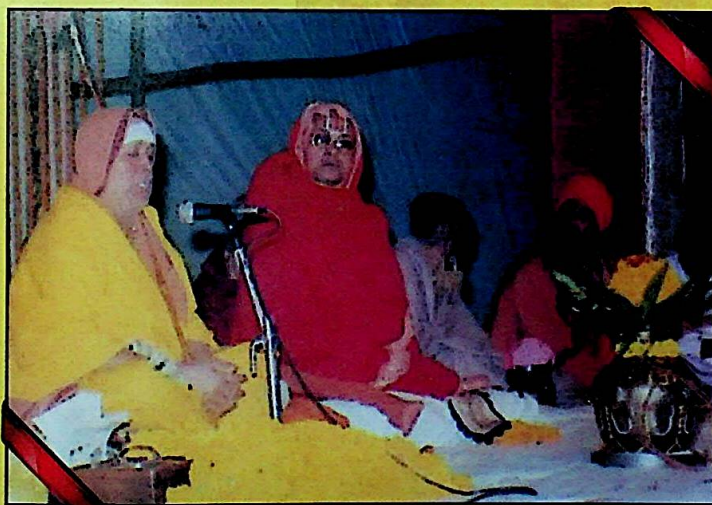
सप्तशताब्दी के समापन अवसर पर कांचिकामकोटि शंकराचार्य जयेन्द्र सरस्वती जी प्रवचन करते हुए साथ में आचार्यश्री
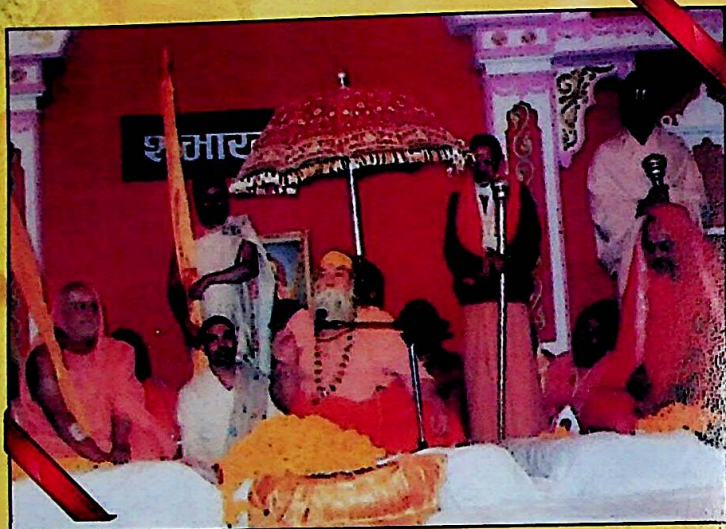
काशी में सप्त शताब्दी के समापन पर शंकराचार्य निश्चलानंद जी, शंकराचार्य स्वरूपानंद जी, श्री महाराज जी के साथ
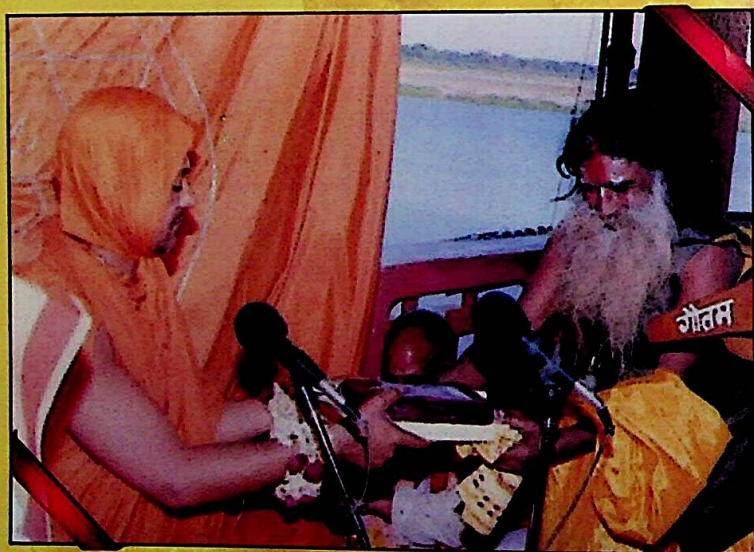
रामजन्म भूमि न्यास के अध्यक्ष परमहंस जी महाराजश्री को पुस्तक प्रदान करते हुए

# जगद्गुरुरामानन्दाचार्य श्रीरामनरेशाचार्य : स्वभाव एवम् अनुभाव

प्रभुनाथ द्विवेदी

आदिगुरुं श्रीसीतानाथं रामानन्दं जगद्गुरुम्।
वन्दे श्रीमद्रामनरेशमधुना श्रीमठपीठधुरम्।।
वन्दे धर्मदेशिकं प्रवरं रामभक्तिनिरतं सततम्।
रामभावपीयूषं वितरति साधु कृती यः स्वाभिमतम्।।
प्रसरति यस्य शुभदसन्देशो ग्रामे नगरे जने-जने।
संसारोऽयं राममयः खलु को भेदः स्वजने विजने।।
प्रेमदया करुणा कर्त्तव्या स्मर्तव्या सा रामकथा।
प्रचरतु विलसत्वखिलभूतले शुभावहा सद्धर्मप्रथा।।
विश्रुतरामनिष्ठसमुदारो रामनरेशो व्रती यतिः।
जीवतु चिरं धर्मरक्षायै तस्मै प्रहिता प्रणतिततिः।।

परम श्रद्धास्पद जगद्गुरु रामानन्दाचार्य श्रीरामनरेशाचार्य जी महाराज के सम्बन्ध में अपने विचार अभिव्यक्त करने का अवसर प्राप्त कर मैं स्वयं को अत्यन्त सौभाग्यशाली अनुभव कर रहा हूँ। रामभावैकनिष्ठ ज्ञानगरिष्ठ वरिष्ठ और विशिष्ट परम साधक सन्तशिरोमणि महाराजश्री के विषय में विविधवर्णों के विन्यास का प्रयास कर लेखनी को भी सारस्वत स्रोतप्रवाह में अवगाहन कर पवित्र होने का शुभ संयोग बना। 'क्व सूर्यप्रभवो वंशः क्व चाल्पविषया मतिः'– इस कविकुलगुरूक्त न्याय का अनुचिन्तन कर अन्तःकरण में भीति का उद्वेग होने पर भी आचार्यश्री के चरणों में प्रीति के कारण अपनी शुचि रुचि की प्रेरणा से ही प्रवृत्ति की वृत्ति बन रही है। अतः, क्वचित्स्खलन हो जाय तो क्षमा-याचना का अधिकारी बना रहूँ– यह विनम्र निवेदन है।

अद्भुत संयोग था उस पावन प्रसङ्ग का। उधर प्रयाग में महाकुम्भ के आयोजन की तैयारियाँ चल रही थीं और इधर काशी में भी परम पवित्र रामभक्ति

पूर्व प्रो., महात्मा गांधी काशी विद्यापीठ, वाराणसी।

के एक सद्धर्म महाकुम्भ का समारम्भ हो चुका था। जगद्गुरु श्रीरामनन्दाचार्य जी महाराज की ७००वीं जयन्ती (प्राकट्य सप्त शती) के भव्य आयोजन का उपक्रम परमश्रद्धेय स्वामी श्रीरामनरेशाचार्य जी की सन्निधि और संरक्षकत्व में अत्यन्त श्रद्धा और उत्साहपूर्वक आरम्भ हुआ था। आयोजन २००१ ई. में वर्षपर्यन्त सम्पूर्ण भारतवर्ष में होना था किन्तु केन्द्र तो श्रीमठ अथ च काशी ही था। एक दिन मेरे अभिन्न सुहृद् डॉ. श्रद्धानन्द ने मेरे समक्ष अपने साथ श्रीमठ (पंचगंगा) चलने का प्रस्ताव रखा जिसे मैंने सहर्ष स्वीकार कर लिया। यद्यपि मैं श्रीमठ और जगद्गुरु श्रीरामानन्दाचार्य के सम्बन्ध में सामान्यतः जानता था; किन्तु इससे पूर्व कभी श्रीमठ गया न था। इस पवित्र धाम और श्रद्धेय महाराजश्री के प्रथम पुण्य दर्शन का श्रेय मित्रवर डॉ. श्रद्धानन्द को ही है।

निश्चय ही वह दिन मेरे जीवन का एक अपूर्व अचिन्त्य शुभ दिन था। हम दोनों ही सीढ़ियाँ चढ़कर श्रीमठ के प्रथम तल पर पहुँचे तो वहाँ आसन पर पश्चिमाभिमुख विराजमान एक तेजस्वी महात्मा के दर्शन हुए जो समक्ष बैठे हुए कुछ महानुभावों से बातें कर रहे थे। डॉ. श्रद्धानन्द तो पूर्वतः वहाँ जाते रहते थे अतः इन्हें देखकर उन्होंने कहा– "आइए।" डॉ. श्रद्धानन्द ने उनका चरण स्पर्श किया और वहीं बगल में बैठ गये। मैंने भी सादर प्रणति निवेदन किया और डॉ. श्रद्धानन्द के पास ही बैठ गया। मन में अनुमान लगाया कि यही स्वामी जी श्रीमठपीठाधीश्वर हैं जिनकी महात्म्यचर्चा मेरे इस मित्र ने मार्ग में की है। एक स्वाभाविक स्मित पूज्य स्वामी जी के मुखमण्डल पर विराजमान थी। उन्होंने सहज स्नेहपूर्वक डॉ. श्रद्धानन्द का कुशल-क्षेम पूछा और मेरी ओर दृष्टि डालते हुए पूछा– "साथ में किसे लाये हैं?"

डॉ. श्रद्धानन्द ने संक्षेप में ही किन्तु मेरा पूरा परिचय स्वामी जी को दिया। पूज्य स्वामी जी बोले– "चलिए, अच्छा किया। रामानन्द परिवार में एक सदस्य और बढ़ा।" फिर उन्मुक्त हास्य के साथ बोले–"पूर्व जन्म में जरूर इनका मेरा सम्बन्ध रहा। देखिए, इसी से इनका और मेरा रंग कुछ मिलता-जुलता है। तभी तो सही समय से मिल गये।" उपस्थित लोग मेरी ओर देख कर हँस पड़े। मैं समझ गया कि स्वामी जी बड़े ही विनोदी स्वभाव के हैं और साथ ही अपरिचित व्यक्ति को भी अपना बना लेने की कला इन्हें खूब आती है।

इसके बाद सप्तशताब्दी के विभिन्न कार्यक्रमों के आयोजनों की चर्चा

पुनः आगे बढ़ी। स्वामी जी ने उस दिन विदा लेते समय मुझसे कहा कि इस अवसर पर कुछ ग्रन्थों का भी प्रकाशन होना है और उसमें मेरा सक्रिय सहयोग चाहिए। मैंने विनम्रतापूर्वक स्वीकार किया। उन्होंने एक वचन और लिया कि समय-समय पर होने वाली बैठकों में बुलाये जाने पर तो आना ही है, बिना बुलाये भी श्रीमठ में आते-जाते रहना है। मैंने "जी, अच्छा" कहा और अभिवादन करके डॉ. श्रद्धानन्द के साथ चल पड़ा। इतने स्वल्प समय की सन्निधि में ही मैं श्रद्धेय स्वामी जी से बहुत प्रभावित हुआ और मैंने अनुभव किया कि इन्हें व्यक्तियों की अच्छी पहचान है और जो जिस योग्य है, उससे उसके अनुरूप कार्य भी करा लेते हैं।

एक सप्ताह बाद मैं अकेले ही श्रीमठ गया। सायं ५ बजे के आस-पास का समय रहा होगा। स्वामी जी को भेंट करने के लिए मैं 'मन्त्ररामायणम्' नामक ग्रन्थ ले गया था जिसे मैंने पद्मभूषण स्व. आचार्य बलदेव उपाध्याय जी की प्रेरणा से सम्पादित किया था और उसकी हिन्दी व्याख्या भी की थी। इस ग्रन्थ को उ.प्र. संस्कृत संस्थान ने प्रकाशित किया है। मैंने वह ग्रन्थ पूज्य स्वामी जी को सादर भेंट किया। वे प्रसन्न होकर बोले– "बहुत अच्छा। यह तो मेरे सम्प्रदाय का ग्रन्थ है। मैं इसे अवश्य पढूँगा।" फिर उन्होंने मुझसे कहा– "जगद्गुरु रामानन्दाचार्य पर संस्कृत में तो बहुत लिखा गया है। आप कुछ हिन्दी में सरल भाषा में लिखिए।" मैंने हाथ जोड़कर स्वीकार किया। उस समय तक रामावत-सम्प्रदाय और श्रीरामानन्दाचार्य के सम्बन्ध में मेरा कोई विशेष ज्ञान न था। अब मैं इस दिशा में सक्रिय हुआ। मेरी छोटी बुद्धि उस समय कोई बड़ा कार्य नहीं कर सकती थी। फिर मैंने सोचा कि श्रीरामानन्द के व्यक्तित्व और कर्तृत्व पर आधारित कोई कविता लिखूँ। मन में यह भी था कि जो कुछ भी करूँ उससे स्वामी जी प्रसन्न हों। मैं श्रम भी करूँ और स्वामी जी का प्रसाद न प्राप्त हो तो मेरा प्रयास भी निरर्थक होगा।

एक दिन विचार करते-करते अन्तःप्रेरणा हुई कि 'हनुमान् चालीसा' की तर्ज पर 'रामानन्द चालीसा' की रचना करूँ। अब इसे भगवत्कृपा ही मानूँगा कि तीन दिनों के अन्दर रामानन्दचालीसा तैयार हो गया और चौथे ही दिन मैं उत्साह से भरा श्रीमठ पहुँच गया। ससंकोच उसे मैंने आचार्यश्री के हाथों में सौंपा। शीर्षक देख कर उनके मुँह से निकला– "अच्छा!" और फिर मुझसे ही पूरा पढ़वाया, बड़े ध्यान से सुना भी। कुछ देर तक अन्य बातें हुईं और अन्त में मुझसे बोले– "इसे छोड़ जाइए। मैं देखूँगा कि क्या करना है। आपाततः

तो ठीक ही लगता है।" मैं कुछ आश्वस्त हुआ। स्वामी जी ने अपने हाथों प्रसाद दिया और मैं प्रणाम करके मन ही मन ईश्वर को धन्यवाद देते हुए चला आया। तीन चार दिन श्रीमठ नहीं गया। "अब तो स्वामी जी ने समय निकाल कर देख ही लिया होगा"– ऐसा जब मन में पक्का हो गया तो पाँचवें दिन सायंकाल श्रीमठ गया। श्रीचरणों में पहुँचा तो देखते ही स्वामी जी ने कहा– "सही समय से आये। मैं स्मरण कर ही रहा था। मुझे चालीसा पसंद आया। दो तीन जगह मैंने कुछ सुधार किया है। उसे अपनी तरह से संशोधित कर फेयर करके दे दीजिए; छपेगा।' पूज्य स्वामीजी के अनुग्रह से 'श्रीरामानन्द चालीसा' 'श्रीमठस्तोत्रकुसुमाञ्जलिः' में प्रकाशित हुंआ। कुछ वर्षों तक पूज्य महाराजश्री गोष्ठियों में मेरा परिचय कराते समय 'श्रीरामानन्द चालीसा' का उल्लेख अवश्य करते थे।

श्रीमठ द्वारा आयोजित जगद्गुरु श्रीरामानन्दाचार्य सप्तशती महोत्सव का आयोजन काशी के इतिहास में स्वर्णाक्षरों में अङ्कित हुआ। ऐसा धार्मिक अनुष्ठान कि सबकी जुबान पर था– 'न भूतो न भविष्यति।' भगवान् श्रीसीताराम और कलिपावनरामावतार जगद्गुरु श्रीरामानन्दाचार्य की अद्भुत कृपा तो थी ही, श्रीमठपीठाधीश्वर श्रद्धेय स्वामिश्रीरामनरेशाचार्य जी की दिव्यैकनिष्ठा तथा दृढ़ शिवसङ्कल्प का शुभ परिणाम था यह बृहद् धार्मिक अनुष्ठान जिसमें सम्मिलित हर वर्ग के लाखों लोगों ने अपनी धन्यता का अनुभव किया। श्रीरामानन्द सम्प्रदाय के मूलपीठ श्रीमठ में नित्य पारम्परिक पूजन और अखण्ड रामनाम सङ्कीर्तन, नगर के मध्य टाउनहाल के मैदान में विशाल यज्ञ मण्डप में नित्य श्रीराम महायज्ञ और आदर्श इण्टर कालेज, ईश्वरगंगी के प्राङ्गण में निर्मित एवं सुसज्जित विस्तृत पाण्डाल में बृहदाकार मञ्च से प्रतिदिन सन्त महात्माओं के प्रवचन, विद्वद्गोष्ठियाँ तथा सम्मान-सपर्या के कार्यक्रमों से समृद्ध यह बृहदनुष्ठान अपने आप में अद्वितीय रहा जिसमें समग्र भारत से पधारे सम्प्रदाय एवं सम्प्रदायेतर महनीय धर्मगुरुओं, विद्वानों तथा जन-प्रतिनिधियों ने अपनी श्रद्धामयी उपस्थिति तथा अवदान से महोत्सव को गरिमा प्रदान की। स्मारिका के साथ ही अनेक प्राचीन एवं नवीन ग्रन्थों (धार्मिक साहित्य) का प्रकाशन भी हुआ। प्रो. शिवजी उपाध्याय द्वारा सद्यो विरचित– 'श्रीरामानन्द-शतकम्' मेरे हिन्दी अनुवाद के साथ प्रकाशित हुआ। काशी में महोत्सव के भव्य शुभारम्भ के पश्चात् श्रद्धेय महाराजश्री ने इस पावन प्रसङ्ग में वर्ष पर्यन्त भारतवर्ष की धर्मयात्रा की और अनेकत्र सभायें–गोष्ठियाँ कीं। इस महनीय प्रकल्प की सफल

उल्लेखनीय सम्पूर्ति और उपलब्धियों के द्वारा रामभक्ति के इस मूलपीठ के प्रधान आचार्य श्रद्धेय स्वामी श्रीरामनरेशाचार्यजी महाराज की यशोवृद्धि तो हुई ही, उनके असाधारण व्यक्तित्व का एक नितान्त महत्त्वपूर्ण स्वरूप भी उभर कर सामने आया। जन्मशताब्दी महोत्सव ने उनकी रामभावैकनिष्ठता को प्रमाणित करने के साथ ही उनकी अभूतपूर्व संयोजन-क्षमता और प्रबन्धकौशल का भी प्रख्यापन किया। इस पवित्र आयोजन के द्वारा अपने आराध्य के प्रसादन के साथ ही रामभक्ति का प्रसारण तथा लोकमङ्गल का सम्पादन भी हुआ।

महाराजश्री के पावन सान्निध्य में आये मुझे प्राय: चौदह वर्ष हो रहे हैं और तब से निरन्तर मुझे श्रीचरणों का जो स्नेह और आशीर्वाद मिला उसमें उत्तरोत्तर वृद्धि ही हो रही है। यह उनकी अहैतुकी कृपा ही है। उनकी सम्प्रेरणा से मैंने जगद्गुरु रामानन्द की सेवा में कुछ सारस्वत प्रस्तुतियाँ देने का पुण्य प्राप्त किया है। यह उनके शुभदर्शनों का ही सुफल है।

महाराजश्री जब से श्रीमठपीठ पर आसीन हुए हैं निरन्तर श्रीमठ की श्रीवृद्धि हेतु प्रयासरत हैं। इनके शुभागमन से पूर्व मूलगादी श्रीमठ की क्या दशा थी?– इसे भक्तजन अच्छी तरह जानते हैं। किन्तु महाराजश्री के स्वस्थ चिन्तन, विशद साधना, कठिन श्रम तथा अतुल्य अध्यवसाय से आज श्रीमठ कहाँ से कहाँ पहुँच गया! इसकी सीमित गतिविधियों को तो मानो पंख ही लग गये। भगवती भागीरथी के सुरम्य तट पर अवस्थित मठ का भव्य भवन स्वयं में साक्षी है। काशी से अन्यत्र भी नवीन आश्रमों की स्थापना, सम्प्रदाय के अन्य आश्रम पीठों से सम्बन्ध की दृढ़ता, देश भर में रामभक्ति का प्रसार तथा कर्मठ रामभक्तों का संग्रह, श्रीमठ की गतिविधियों की व्यापकता का प्रमाण है। तीर्थराज प्रयाग में जगद्गुरुरामानन्द के प्राकट्य स्थल का अन्वेषण एवं पुनरुद्धार, श्रीमठ के इतिहास की एक अविस्मरणीय घटना है तथा हरिद्वार-ऋषिकेश में विस्तृत भूखण्ड पर विशाल भव्य श्रीराममन्दिर के निर्माण का शुभारंभ तो श्रीमठ की कीर्तिपताका बन गया है। इन प्रकल्पों में श्रद्धेय स्वामी जी के कृपापात्र भक्तों की श्रद्धा और सहयोग तो महत्त्वपूर्ण है ही, प्रमुख है महाराजश्री का प्रभावशाली रामभावैकनिष्ठ व्यक्तित्व। यह उक्ति महाराजश्री के सम्बन्ध में कितनी सटीक बैठती है– 'क्रियासिद्धिः सत्त्वे भवति महतां नोपकरणे।' इधर हिन्दी के विशिष्ट समुद्योगी विद्वान् डॉ. उदयप्रताप सिंह के सौजन्य से श्रीमठ की सारस्वत समृद्धि को भी निरन्तर उत्कर्ष प्राप्त हो रहा है। प्रतिवर्ष नवीन प्रकाशन भी हो रहे हैं।

किसी भी व्यक्ति के स्वभाव और व्यवहार में परस्पर अन्तःसम्बन्ध होता ही है। स्वभाव से व्यवहार का और व्यवहार से स्वभाव का अनुमान लगाना कठिन नहीं है। किन्तु इस विषय में महात्मा अथवा महापुरुष कुछ विलक्षण ही होते हैं। 'वज्रादपि कठोराणि मृदूनि कुसुमादपि।' 'अचिन्त्याः खलु महात्मनां चित्तवृत्तयः'– ये सब कुछ ऐसी ही उक्तियाँ हैं। पूज्य स्वामी जी के सम्बन्ध में ये उक्तियाँ अंशतः लागू हो भी सकती हैं और नहीं भी लागू हो सकतीं हैं। कारण कि पूज्य स्वामी जी इन उक्तियों की सीमा में बाँध कर नहीं देखे जा सकते। स्वामी जी का स्वभाव वस्तुतः रामभाव है। गोस्वामी तुलसीदास के 'स्वान्तःसुख', की ही तरह इनका स्वभाव कदापि सङ्कुचित नहीं है क्योंकि वह रामभाव का पर्याय है। भगवान् राम की उदारता स्वामी जी के स्वभाव में अनुप्रविष्ट है। इन्हें निकट से जानने वाला कोई भी इसका सहज ही अनुभव कर सकता है। मैं स्वयं इसका प्रमाण हूँ। दारिद्र्य और कार्पण्य का लेशमात्र भी प्रवेश इन महानुभाव के स्वभाव में नहीं है। श्रीमठ का कोई भी अनुष्ठान, कोई भी आयोजन हो, उसकी अपनी एक विशिष्ट गरिमा होती है। उनमें भाव-सद्भाव ही होता है, अभाव तो बिलकुल ही नहीं।रामभाव के समक्ष अभाव भला कहाँ टिक सकता है? पात्र छोटा हो अथवा बड़ा, पूज्य स्वामी जी उसे रिक्त नहीं रहने देते, उसे भरते ही हैं। अब यह तो पात्र की अपनी ग्राह्यता पर है कि वह कितना ग्रहण और धारण कर सकता है। स्वामी जी का स्वभाव कहीं भी कोताही करने वाला है ही नहीं। जिसके भी स्वभाव में सद्भाव होता है, वह असत् को प्रश्रय देता ही नहीं। पूज्य स्वामी जी का स्वभाव भी असद्भाव से कोसों दूर है।

जिसका जैसा स्वभाव होता है, उसकी दिनचर्या, उसका जीवन व्यवहार, अन्यों के साथ व्यवहार वैसा ही बन जाता है। स्वभाव अच्छा हो या बुरा, वह उस व्यक्ति की प्रतिच्छाया (परछाईं) की तरह अनुलङ्घनीय होता है– 'स्वभावो हि दुरतिक्रमः।' प्रयत्न करने पर भी स्वभाव छिपता नहीं। वह कभी-न-कभी, कहीं-न-कहीं प्रकट हो ही जाता है। क्योंकि स्वभाव तो स्व-भाव ही होता है। स्वभाव वस्तुतः पूर्व जन्म और वर्तमान के पूर्वकालिक संस्कारों से बनता है। अतः स्वभाव को मिटाना, छिपाना अथवा बदलना प्रायः दुष्कर ही होता है। व्यक्ति का चरित्र और उसकी जीवन शैली, उसके स्वभाव का पहचान कराती है। उसकी कार्य पद्धति में उसके स्वभाव की गहरी छाप होती है। स्वभाव के कारण ही कोई साधु होता है और कोई असाधु। साधु कठिन

से कठिन परिस्थिति में भी अपनी साधुता (स्वभाव) का परित्याग नहीं करता। इसीलिए श्रीमद्भगवद्गीता में भगवान् कृष्ण ने अर्जुन के प्रश्न के उत्तर में कहा है– 'स्वभावोऽध्यात्ममुच्यते'' (८.३)। इन सब पर गहराई से विचार करने पर जब हम पूज्य स्वामी श्रीरामनरेशाचार्य जी महाराज के स्वभाव का ध्यान करते हैं तो उन्हें निरन्तर स्व-भाव (अर्थात् अध्यात्म) में ही अवस्थित पाते हैं। एक सुजन-सज्जन, महापुरुष-महात्मा का जैसा स्वभाव होना चाहिए, वैसा ही अथवा, उससे भी उत्कृष्टतर स्वभाव पूज्य स्वामी जी का है। एक शिशु की निश्छलता, एक युवक का उत्साह और एक वृद्ध का गाम्भीर्य उनमें अक्षुण्णतया विराजता है। गीतोक्त दैवी सम्पत्तियों[१] की पूर्ण अभिव्यक्ति महाराजश्री में भासती है। यही कारण है, उनमें कहीं भी दम्भ, दर्प, अभिमान, निष्ठुर-क्रोधादि का लेश मात्र नहीं है। अमर्ष और मात्सर्य कहीं भी उनके व्यवहार में नहीं परिलक्षित होता। हाँ, यह अवश्य है (जैसा मैं समझ पाया हूँ) कि वे किसी की खींची गयी लकीर को मिटाने या छोटा करने का तनिक भी प्रयास नहीं करते अपितु उस लकीर के समानान्तर उससे भी बड़ी लकीर खींचने का सप्रयत्न अवश्य करते हैं। श्रीमठ की आधिभौतिक और आध्यात्मिक अभ्युन्नति के कारणों में से एक कारण यह भी है।

जगद्गुरु स्वामिश्रीरामनरेशाचार्य जी महाराज न्यायशास्त्र के सुधी अध्येता रहे हैं। उन्होंने काशी में न्यायशास्त्र के धुरन्धर विद्वानों से अध्ययन किया। वे छात्र जीवन से ही इस शास्त्र का अध्यापन करने लगे थे और आगे चलकर हरिद्वार-ऋषिकेश में न्याय के अध्यापक हो गये थे। वैराग्य लेने और श्रीमठ पीठ पर विराजमान होने से पूर्व तक वे इसी शास्त्र का अभ्यास कर रहे थे। अपनी सूक्ष्म शास्त्रीय दृष्टि और अध्यापन कौशल से इन्होंने महती प्रतिष्ठा अर्जित कर ली थी। यद्यपि वे न्यायशास्त्र के मर्मज्ञ विद्वान् हैं किन्तु श्रीमठ

---

१. 'अभयं सत्त्वसंशुद्धिर्ज्ञानयोगव्यवस्थितिः।
दानं दमश्च यज्ञश्च स्वाध्यायस्तप आर्जवम्॥
अहिंसा सत्यमक्रोधस्त्यागः शान्तिरपैशुनम्।
दया भूतेष्वलोलुप्त्वं मार्दवं ह्रीरचापलम्॥
तेजः क्षमा धृतिः शौचमद्रोहो नातिमानिता।
भवन्ति सम्पदं दैवीमभिजातस्य भारत॥
(श्रीमद्भगवद्गीता, १६.१-३)

का उत्तराधिकार ग्रहण करने के पश्चात् प्रमाण छूट गया, प्रमेय पर पकड़ और मजबूत हो गयी। जीवनधारा बदलने से प्रमेय का वह परोक्ष ज्ञान अपरोक्ष ज्ञान के स्वरूप में और अधिक निखर गया। न्याय में रमने वाला ज्ञानी अब श्रीराम में रमने वाला नवधाभक्तिपरायण हो गया। प्रमाणपारावरीण उपपत्ति-उपनय को छोड़कर भक्तिरसामृतसिन्धु में अवगाहन करके निश्चल प्रपत्तियुतराममय हो गया। न्याय के सरोकार से हटकर श्रीराममयता से सराबोर हो गया। जगद्गुरु के रूप में उसका नवावतार हो गया।

महाराजजी का व्यवहार-सूत्र अत्यन्त सहज है– 'ये यथा मां प्रपद्यन्ते तांस्तथैव भजाम्यहम्? फिर भी अपनों के प्रति उनका ममत्व कुछ अधिक ही रहता है। राम और रामानन्द की शरण में जाने वाला प्रत्येक प्राणी उनका अपना है। वे उसका योग-क्षेम वहन करने के लिए सर्वात्मना सर्वदा तत्पर रहते हैं। वे यथायोग्य स्नेह और सम्मान देते हैं। उनके हृदय की उदारता और विचारों की उदात्तता का कोई पैमाना नहीं है। अन्तरङ्गता के क्षणों में वे अपना हृदय खोल कर रख देते हैं। उनके भक्तजन उनकी इस सहृदयता के प्रमाण हैं। उनकी ऊँची सोच सदा फलानुमेय होती है। वे एक विलक्षण साधक हैं, राम के आराधक हैं और दुष्प्रवृत्तियों के बाधक हैं। वे लोक और शास्त्र की मर्यादा के रक्षक हैं। इसीलिए वे लोकवन्द्य हैं और सन्तसमाज उन्हें बहुमान की दृष्टि से देखता है।

विगत वर्ष प्रयाग के महाकुंभ के पश्चात् वे जब श्रीमठ (पंचगंगा, वाराणसी) पधारे थे, तो एक दिन सायंकाल मैं उनके दर्शनों के लिए गया। वे ऊपरी तल पर बाहर विराज रहे थे। उनके दाहिने पार्श्व में चरणों के निकट एक कृशकाय जटाधारी महात्मा बैठे उनसे कुछ बातें कर रहे थे। मैं अभिवादन करके वाम पार्श्व में बैठ गया। वे महात्मा देखने में अतिसामान्य, नाममात्र का वह भी मलिन किन्तु कौशेय वस्त्र धारण किये हुए, बगल में (साधुओं वाली) पोटली जिसमें उनका मोबाइल भी था (एक बार बजने पर निकाल कर किसी को निर्देश देकर पुनः उसी में रख दिया)। शुष्क स्नान के कारण शरीर में खुजली होने से वे लगातार खुजलाते भी रहते थे और महाराजजी से बातें भी करते जाते थे। बात समाप्त होने पर महाराज जी ने मेरा कुशल क्षेम पूछा और उन महात्मा को अपने अन्दाज में मेरा परिचय दिया और उस महात्मा का परिचय देते हुए उनके प्रति सम्मान प्रदर्शित किया– "ये सम्प्रदाय के बड़े महात्मा हैं। बड़ा ही रामभाव है इनमें। पूर्णिया (बिहार) में

बहुत बड़ा आश्रम है। बहुत जमीन और बगीचा है। मुझे वहाँ एक बार ले चलने के लिए निमन्त्रित करने आये हैं। अभी प्रयाग कुम्भ से लौटकर अयोध्या जी में रुके हुए हैं। वहीं से मुझसे मिलने आ गये। राम जी की सेवा में लगे हैं। माया बहुत है किन्तु ये एकदम उदासीन हैं।'' महाराज जी के सम्पर्क में न जाने कितने ऐसे महात्मा होंगे। किन्तु महाराज जी द्वारा उनकी कितनी बड़ाई की गयी– यह देख सुनकर मुझे विस्मय भी हुआ और श्रद्धा भी बढ़ी।

वे महात्मा तो महाराज जी का प्रसाद पाकर दण्डवत् करके कुछ ही देर बाद निकल गये। अभी महाराज जी ने मुझसे कुछ बात करनी आरम्भ ही की थी कि सतुआ बाबा आश्रम के पदासीन नवाचार्य श्री संतोषदास जी के आने की सूचना आ गयी और तब तक कुछ लोगों द्वारा अनुगत एक युवा संत पधारे, महाराज जी को उन्होंने दण्डवत् किया। मैंने भी उठकर उनका अभिवादन किया। (महात्मा की आयु नहीं देखी जाती, उसकी तपःसाधना देखी जाती है)। महाराज जी के समक्ष चरणों के पास विराजमान हुए। प्रायः बीस-पचीस मिनट की वार्ता के पश्चात् वे चलने के लिए उद्यत हुए तो महाराज जी ने हँसते हुए कहा कि आज ऐसे कैसे जाइएगा? पहले वाली बात अब तो बदल गई न! गद्दी पर बैठने के बाद पहली बार श्रीमठ आये हो। और, सेवक को बुलाकर टीका-तिलक की थाली मँगाई। उन्हें टीका किया। माला पहनाई और कौशेय उत्तरीय उढ़ाया तथा प्रसाद दिया और यह कहते हुए विदा किया कि आश्रम का नाम बढ़ाइए। मुझे आपसे बड़ी आशायें हैं। वे विनत भाव से प्रस्थित हुए। महाराज जी ने मुझसे उनकी प्रशंसा की– "श्रद्धावान हैं। आचार्य गद्दी पर बैठने के बाद पहली बार श्रीमठ आये शिष्टाचार भेट करने। इनमें कृतज्ञता का बड़ा भाव है।''

मैं पहले भी पूज्य महाराज जी का अनेक अवसरों पर ऐसा सद्व्यवहार देख चुका हूँ। जो जैसा है, महाराज जी उसी भाव से उससे मिलते हैं और मान-सम्मान देते हैं।

राज्य, गृहस्थी और मठ बिना संग्रह के नहीं चलते। इस संसार में जो भी लौकिक व्यवहार है, उसके लिए संग्रह अनिवार्य है। श्रीमठ भी इसका अपवाद नहीं है। कहते हैं– "सर्वारम्भाः तण्डुलप्रस्थमूलाः' अथवा 'अर्थमूलाः सकलाः क्रियाः।'' पूज्य महाराज जी का संग्रह वैविध्यपूर्ण है और अर्थसंग्रह तो अनपचित है। इन्होंने पूर्वाश्रम में विद्या का अच्छा संग्रह किया, गुरुजन का भी संग्रह किया और शिष्यों का भी। तत्पश्चात् धर्म का संग्रह और तप

का संग्रह करने में निरत हैं। जौहरी रत्नों का संग्रह करता है और महाराज जी भी रत्नों का निरन्तर संग्रह कर रहे हैं किन्तु ये रत्न पाषाणखण्ड नहीं है, उनसे विलक्षण हैं (जातौ जातौ यदुत्कृष्टं तद्रत्नमभिधीयते)। महाराज जी के द्वारा संगृहीत और संग्राह्य ये रत्न हैं श्रेष्ठ साधु, विद्वान्, भक्त-शिष्य और ग्रंथ। स्व-सम्प्रदाय और इतर सम्प्रदाय के जो धर्माचार्य हैं, उनके सम्बन्ध स्वामीजी से अत्यन्त मधुर और सौहार्दपूर्ण हैं। युधिष्ठिर की अजातशत्रुता स्वामी जी के प्रति भी सङ्गत है। महाराज जी के आयोजनों में वे विशिष्ट धर्माचार्य पधारते हैं और ये भी उनके आयोजनों में प्रेमपूर्वक सम्मिलित होते हैं। विद्वानों को जैसा आदर-सम्मान श्रीमठ से निरन्तर प्राप्त होता है वैसा तो कदाचित् ही कोई धर्मपीठ या धर्माध्यक्ष करता होगा। चूँकि पूज्य महाराजश्री स्वयं दर्शन आदि शास्त्रों के परम विद्वान् हैं अत: वैदुष्य की अवधारणा उनके हृदय में है। इसीलिए वे क्षणशः विद्वानों का संग्रह करते रहते हैं। विद्वज्जन भी उनकी इस प्रवृत्ति से उनके प्रति श्रद्धा सहित आकृष्ट होते हैं। भक्तों और शिष्यों का तो कहना ही क्या? श्रद्धेय महाराजश्री का अनुभाव ही ऐसा है कि जो भी राम जी का सेवक स्वामी जी के चरण शरण में आया, वह पूर्णमनोरथ होकर, सहज स्नेह से आप्लावित होकर रामभाव से अनुप्राणित होकर इनका ही होकर रह गया। आज, इसी कारण श्रीमठ परिवार विशाल से विशालतर होता जा रहा है और महाराजजी एक सद्गुरु के रूप में निरन्तर उनका सत्पथ आलोकित कर रहे हैं। महाराजश्री के शिवसङ्कल्पों को पूरा करने के लिए अर्थसंग्रह भी निरन्तर हो रहा है। 'त्यागाय सम्भृतार्थनाम्'– रघुवंशी राजाओं के लिए महाकवि का यह कथन भी महाराजश्री पर पूर्णत: चरितार्थ होता है। उनका अर्थसंग्रह भोग के लिए नहीं अपितु त्याग के लिए ही हो रहा है। श्रीमठ की जितनी सत्प्रवृत्तियाँ हैं, उनमें संग्रहीत धन का सदुपयोग हो रहा है। भव्य दिव्य श्रीराम मन्दिर का निर्माण भी अयाचित (दान) धन से ही हो रहा है। 'सहस्रगुणमुत्स्रष्टुमादत्ते हि रसं रविः।' यदि सूर्य जल का ग्रहण अपनी रश्मियों द्वारा करता है तो उसे हजार गुना करके बरसाने के लिए ही। इसी प्रकार पूज्य महाराजश्री का धनसंग्रह भी विविध कल्याणकारी कार्यों में विनियोग किया जाकर सार्थक हो रहा है।

जगद्गुरु श्रीरामानन्दाचार्य की मूल भावना का निरन्तर ध्यान, सम्मान और अनुसरण करते हुए जगद्गुरु श्रीरामनरेशाचार्य जी भी रामभाव से सम्पृक्त समाज की संरचना में सतत प्रयत्नशील हैं। समाज निर्माण के लिए रामभक्ति

आन्दोलन का मूल मन्त्र है– 'जातपाँत पूछे नहिं कोई। हरि को भजै सो हरि का होई।।' समाज की धार्मिक और सांस्कृतिक पृष्ठभूमि ऐसी ही होनी चाहिए। आधुनिक सन्दर्भ में भी, एक अच्छा नागरिक सुसंस्कारों से ही बन सकता है। वह किसी भी वर्ण, जाति, धर्म सम्प्रदाय का भले ही क्यों न हो। रामभाव सुसंस्कार रूपी कल्पतरु का बीज है। समाज में इसी बीज के वपन का सत्कार्य श्रद्धेय स्वामी जी कर रहे हैं। वर्ग-विद्वेष को निर्मूल करके भेदभावरहित समाज की स्थापना का जो सङ्कल्प आज से सात सौ साल पहले पुण्यश्लोक स्वामी श्रीरामानन्दाचार्य जी ने लिया था, उसी मार्ग पर स्वामी श्रीरामनरेशाचार्य जी भी अग्रसर हैं। समाज के निर्बल वर्ग को संरक्षण देना, पोषण करना और उनके अभ्युत्थान में सहयोग करना, श्रीमठ की गतिविधियों में प्रमुखता के साथ सम्मिलित है। समाज में नारी को उचित स्थान और सम्मान मिले, गो-संवर्धन हो और पर्यावरण में सन्तुलन हो– यह भी, 'इष्टं धर्मेण योजयेत्'– न्याय से स्वयमेव श्रीमठ के प्रकल्पों से जुड़ा हुआ है। संस्कृत और संस्कृति की रक्षा के लिए पूज्य महाराज जी की चिन्ता सर्वविदित है।

यद्यपि पूज्य स्वामी श्रीरामनरेशाचार्य जी महाराज समग्र भारत राष्ट्र में धर्मयात्राएँ करते रहते हैं तथापि मध्य भारत, पश्चिम भारत तथा उत्तर भारत में आपका अनुग्रह सविशेष सक्रिय एवं प्रभावी है। आपके अधिकांश भक्त और शिष्य प्राय: इसी क्षेत्र से आते हैं। ये निरन्तर आपकी यथायोग्य सेवा में सादर सश्रद्ध संलग्न रहते हैं। काशी एवं काशी से बाहर आपके संरक्षण एवं निर्देशन में वर्ष पर्यन्त आध्यात्मिक, धार्मिक, बौद्धिक एवं सांस्कृतिक आयोजनों तथा अनुष्ठानों का क्रम चलता ही रहता है। आपके चातुर्मास्य महोत्सव में उल्लेखनीय विविध कार्यक्रम सम्पन्न होते हैं। अखिल भारतीय विद्वद्गोष्ठियाँ और सन्त सम्मेलनों की अपनी अलग ही गरिमा होती है। इसके अतिरिक्त समाजोत्थान के भी महत्त्वपूर्ण कार्यक्रम होते हैं। महाराजश्री ने काशी के उत्सवों को भी एक नवीन आयाम दिया है। श्रीमठ को केन्द्र में रखकर राम और रामभक्ति से जुड़े हुए प्रमुख धर्मात्मा महापुरुषों की जयन्तियों का कार्यक्रम निरन्तर गौरवमय होता जा रहा है। विद्वत्सपर्या और किसी आचारनिष्ठ श्रेष्ठ विद्वान् को प्रतिवर्ष प्रदान किया जाने वाला एक लाख रुपये का **'श्रीरामानन्दाचार्य पुरस्कार'** महाराजश्री के समुदार स्वभाव को विशिष्ट रूप से अभिव्यक्त करता है। महाराजश्री की सत्प्रेरणा से ही श्रीमठ के प्रकाशनों में भी उल्लेखनीय अभिवृद्धि हुई है। उच्चकोटि के धार्मिक और साहित्यिक

प्रकाशन श्रीमठ की कीर्ति का चतुर्दिक् प्रसार कर रहे हैं।

श्रद्धेय जगद्गुरुरामानन्दाचार्य श्रीरामनरेशाचार्यजी महाराज की षष्टिपूर्ति के शुभ पावन अवसर पर हमारी मङ्गल कामना है कि वे दीर्घायु, सुखायु और हितायु हों। उनके तप:तेज की वृद्धि हो। उनके द्वारा समस्त विश्व में रामभाव का प्रसार हो और श्रीमठ दिनानुदिन श्रीसमृद्धिसम्पन्न हो।

अन्ततः,

धर्मात्मा धर्मविद् धन्यो रामभक्तिधुरन्धरः।
धर्मार्थं धृतदेहोऽसौ रामानन्दपथानुगः।।
चिरंजीवतु सानन्दं श्रीमठपीठाधीश्वरः।
वर्धतां तत्तपो नित्यं सततं तं वयं नुमः।।

●

# स्वामीरामनरेशाचार्य : बहुआयामी व्यक्तित्व

बाबूराम त्रिपाठी

इस संसार में कुछ ऐसे महामानव हैं, जो अपने लिए नहीं, दूसरों के लिए जीते हैं। परहित उनके जीवन का मकसद होता है। दूसरों का सुख-दुःख उनका अपना सुख-दुःख होता है। संसार में सुख-शान्ति कैसे आये, इसके लिए वे रात-दिन प्रयास रत रहते हैं। स्वयं तो सत्कर्म करते ही हैं, साथ-साथ दूसरों को भी सत्कर्म करने की प्रेरणा देते हैं। ऐसे महामानवों में जगद्‌गुरु रामानंद पीठाधीश्वर स्वामी रामनरेशाचार्य महाराज हैं।

महाराज श्री जब से पीठासीन हुए तब से लेकर आज तक वे निरन्तर रामानन्द सम्प्रदाय के अन्य सभी पीठों का मार्ग-दर्शन करते चले आ रहे हैं। उनके कुशल निर्देशन में देश के सभी रामानन्द सम्प्रदाय से सम्बद्ध पीठ पल्लवित-पुष्पित एवं समृद्धि को प्राप्त होकर लोक कल्याण की दिशा में कार्यरत हैं। जगत्‌गुरु रामानन्दाचार्य द्वारा प्रवर्तित राम-भक्ति परम्परा का कोई भी इतिहास स्वामी रामनरेशाचार्य के उल्लेख के बिना अधूरा रहेगा। श्रीमठ पीठ पर जगत्‌गुरु के पद पर अभिषिक्त होने के पश्चात् भगवान राम के प्रति उनके अन्तःकरण में जो पूर्णतः निगूढ़ श्रद्धा का बीज था, वह अंकुरित होकर कल्पवृक्ष का रूप धारण कर लिया है। महाराजश्री ने लोक में रामभक्ति के प्रसार का जो आन्दोलन प्रवर्तित किया, वह लोक मंगलमयी भावना के रूप में सर्वत्र प्रतिफलित दृष्टिगोचर हो रहा है। राम और रामभक्ति का आश्रय लेकर यद्यपि अपने को स्थापित करने के उद्देश्य से अनेक नकली रामानन्दाचार्य पद-प्रतिष्ठित हो गये हैं, किन्तु जो सुयश आभा मूल पीठ पर प्रतिष्ठित वर्तमान आचार्य स्वामी रामनरेशाचार्य महाराज श्री की है वह अन्यों की कहाँ? इसका एकमात्र कारण यह है कि महाराज जी का मृदु एवं सदाशयी व्यक्तित्व।

स्वामी जी एक ऐसे सन्त हैं, जो धरती से जुड़े हुए हैं। उनके आदर्श व्यवहार के धरातल पर खरे उतरते हैं। वे यथार्थोन्मुखी आदर्श के हिमायती

---

प्रमुख, शब्द विद्या संकाय, केन्द्रीय तिब्बती अध्ययन विश्वविद्यालय, सारनाथ, वाराणसी

हैं। उनकी कथनी-करनी में एकरूपता है। टण्ट-घण्ट, ढोंग-पाखंड से वे अपने को परे रखते हैं। वस्तुतः सन्त को जैसा होना चाहिए, महाराजश्री सर्वथा उसी प्रकार के हैं। गोस्वामी तुलसीदासजी ने सन्तों के जो लक्षण बताये हैं– सन्त हृदय नवनीत समाना...।' वे सभी महाराजश्री में देखने को मिलते हैं। दूसरों के दुखों से उनका हृदय न केवल द्रवित होता है अपितु उसे वे दूर करने का भी यथा सम्भव प्रयास करते हैं। उनकी इस पर दुःखकातरता को देखकर इस उक्ति का स्मरण हो आना स्वाभाविक है– 'सन्ताः स्वयं परहितेषु कृताभियोगाः'। निरभिमानता एवं हृदय का औदार्य महाराजश्री में देखते ही बनता है। सबके साथ यथायोग्य व्यवहार करना कोई स्वामी जी से सीखें। उनका यह गुण प्रत्येक व्यक्ति के मन को छू जाता है। विद्वानों गुणज्ञों एवं कलाकारों, सबको महाराजश्री न केवल प्रश्रय देते हैं, अपितु उन्हें अपेक्षित सम्मान भी देते हैं। श्रीरामभक्ति के माध्यम से धर्म के संरक्षण एवं अभ्युन्नति के लिए वे निरन्तर देश के विभिन्न भागों में यात्राएँ करते रहते हैं। वैदिक सन्देश 'चरैवेति-चरैवेति' का अनुपालन करने में उनकी नित्य-चर्या ऋषिचर्या है।

महाराजश्री न्याय के विद्वान होने के नाते वार्तालाप में भी शास्त्र की बातें जिस सहज ढंग से कह जाते हैं, वह देखते ही बनती है। प्रवचन के दरम्यान शास्त्र-पुराणों के दृष्टान्त देकर अपनी बात को जिस सहजता से पुष्ट करते हैं और उसे जन सामान्य के लिए सम्प्रेषणीय बनाते हैं वह स्तुत्य है। वस्तुतः महाराजश्री में एक अच्छे एवं आदर्श अध्यापक के सारे गुण विद्यमान हैं। उन्हें अपने श्रोताओं की समझ का पूरा ज्ञान है तभी तो गूढ़ से गूढ़ विषय को बोधगम्य बनाकर उसे सभी तक पहुँचाते हैं। वस्तुतः उनके इस गुण के मूल में उनके व्यापक अनुभव एवं लोक शास्त्र का ज्ञान है। काशी की पाण्डित्य परम्परा के निकष पर महाराजश्री पूर्ण रूप से खरे उतरते हैं। वे न्यायशास्त्र के ज्ञाता तो हैं ही साथ-साथ उन्होंने संस्कृत वाङ्मय का भी गहन अध्ययन किया है। धर्म एवं दर्शन के गूढ़ विषयों को अपने अनुभव के आधार पर लौकिक दृष्टान्तों एवं उदाहरणों द्वारा वे इतनी सहजता से व्यक्त करते हैं कि वह सर्व सामान्य के लिए भी ग्राह्य हो जाता है।

महाराज श्री का वक्तृत्व कौशल उनके व्यक्तित्व का परिचायक है। उनके प्रवचन में अद्भुत आकर्षण रहता है। प्रवचन का विषय गम्भीर होने पर भी भावों के औदार्य के कारण श्रोताओं के सामने प्रत्यक्ष नाचता दिखाई देता है। सच पूछा जाय तो वे वक्तृत्व-कला के जादूगर हैं। विषय ज्ञात हो या अज्ञात, पर जब वे बोलना शुरू करते हैं तो ऐसा प्रतीत होता है कि भावों-

विचारों का अथाह सागर लहरा रहा है। उनकी वाणी में श्रोताओं को बाँध लेने की अद्भुत क्षमता है। अनेक अवसरों पर ऐसा देखा गया है कि मंच के अन्तिम वक्ता के रूप में प्रस्तुत होने पर भी महाराजश्री ने उखड़ती सभा को जमा दिया। जो श्रोता जा रहे थे, वे तो लौटे ही, अन्य नये श्रोता भी उनकी वाणी के प्रभाव से उपस्थित हो गये। स्वामी श्री का विषय प्रतिपादन श्रोताओं के लिए कभी बोझिळ नहीं प्रतीत होता। वे गम्भीर से गम्भीर विषय की भी इतने सरलतम और प्रभावशाली रूप में प्रस्तुत करते हैं कि श्रोता मन्त्र मुग्ध हो जाते हैं। वस्तुतः महाराज श्री का प्रवचन सभी दृष्टियों से सहज एवं ग्राह्य है। उनमें श्रोताओं के मिजाज को भाँपने की विलक्षण प्रतिभा है। वे गम्भीर प्रतिपाद्य को पचाने के लिए और वक्ता को ऊबने से बचाने के लिए कुछ प्रेरक एवं हास्यप्रद प्रसंगों का भी समावेश करते चलते हैं, पर वे प्रकृत विषय से असम्बद्ध नहीं होते। उनकी यह वक्तृत्व-कला अन्य वक्ताओं में कम देखने को मिलती है।

'जाति-पाँत पूछे ना कोई हरि का भजै सो हरि का होई' यह उक्ति उनके परिमंडल में चरितार्थ होती है। उनके यहाँ ऊँच-नीच की भावना को तनिक भी प्रश्रय नहीं मिलता। सभी जाति एवं धर्म के लोग श्रद्धा से आते हैं और उनका आशीर्वाद पाकर कृतकृत्य होते हैं। उनके भण्डारे में बिना किसी भेद-भाव के लोग एक टाट पर बैठकर प्रसाद ग्रहण करते हैं और महाराज श्री की सहजता तो तब देखते बनती है जब वे खड़े होकर प्रसाद की व्यवस्था का स्वयं निरीक्षण करते हैं और कार्यकर्त्ताओं को निष्ठापूर्वक कार्य करने का निर्देश देते रहते हैं। भण्डार-गृह में किस वस्तु की कमी है और कौन-सी सामग्री पर्याप्त है इसका ऑकलन वह करते रहते हैं।

भक्ति को जब साहित्य का सान्निध्य मिल जाता है तो उसकी सार्थकता बढ़ जाती है। ऐसे कम सन्त हैं जो अपनी साधना को साहित्य एवं 'संस्कृति के उन्नयन में लगाते हैं, वे पूजा-पाठ, प्रवचन आदि में ही उलझकर रह जाते हैं। लेकिन महाराज श्री का साहित्य और उसके सृजन के प्रति अत्यधिक लगाव है। वे विद्वानों को बहुत सम्मान देते हैं। 'स्वदेशे पूज्यते राजा, विद्वान सर्वत्र पूज्यते, उक्ति उनके परिमंडल में चरितार्थ होती है। उनका कहना है कि विद्वान् सबसे बड़ा होता है। वह समाज को एक नूतन दिशा तो देता ही है साथ-साथ उसमें नैतिकता एवं आदर्शों की स्थापना भी करता है। वे अपने प्रवचन के बीच-बीच में विद्वानों की महत्ता का प्रतिपादन करते रहते हैं। उनके भक्तों में विद्वानों की पर्याप्त संख्या है। समय-समय पर वे महाराजश्री

का आशीर्वाद तो पाते ही हैं, साथ-साथ वे स्वामी जी के द्वारा साहित्य-सेवा के लिए प्रोत्साहन एवं प्रेरणा भी प्राप्त करते हैं।

अपने चातुर्मास के दौरान रामानन्द सम्प्रदाय के कवियों एवं उनकी रचनाओं से सम्बद्ध किसी एक विषय पर राष्ट्रीय संगोष्ठी का भी आयोजन करवाते हैं जिसमें देश के विभिन्न विश्वविद्यालयों एवं महाविद्यालयों के विद्वानों की सहभागिता होती है। संगोष्ठी में आये सभी विद्वान् निबन्ध-पाठ करते हैं और पढ़े गये निबन्धों पर खुलकर चर्चा होती है। गोष्ठी के अन्त में उन्हें अंगवस्त्र एवं मानदेय से सम्मानित किया जाता है। इतना ही नहीं, प्रत्येक वर्ष भक्ति एवं सन्त साहित्य के क्षेत्र में उत्कृष्ट एवं उल्लेखनीय कार्य करने वाले किसी एक विद्वान् को पुरस्कृत भी किया जाता है। उनके साहित्यिक मंत्री डॉ. उदयप्रताप सिंह जी हैं। विद्वानों से सम्पर्क करना, संगोष्ठी में उन्हें आमंत्रित करना पुरस्कार के लिए विद्वानों के चयन में सहयोग एवं सुझाव देना आदि कार्यों में डॉ. सिंह का योगदान स्तुत्य है।

स्वामी जी की सोच अत्यधिक रचनात्मक है। उन्होंने अनेक जीर्ण-शीर्ण मन्दिरों का जीर्णोद्धार करवाया है और वहाँ नियमित रूप से पूजन-अर्चन की स्थायी व्यवस्था करवाई। आपके निर्देशन में हरिद्वार में अद्वितीय श्री राममन्दिर का निर्माण हो रहा है। महाराजश्री यज्ञों को लोक-कल्याण के लिए आवश्यक मानते हैं। उनके अनुसार यज्ञों से न केवल वातावरण पवित्र एवं शुद्ध होता है अपितु उनके वर्षा के भी होने की सम्भावना बढ़ जाती है। तभी तो वे समय-समय पर बड़े पैमाने पर यज्ञ करवाते रहते हैं।

स्वामीजी की भक्त-वत्सलता देखते ही बनती है। भक्तों की समस्याएँ सुनकर उनकी सहानुभूति द्रवित हो जाती है। कोई सन्तान-प्राप्ति के लिए आशीर्वाद माँगता है तो कोई मिल-कारखाने को सुचारु रूप से चलते रहने के लिए उनकी कृपा का आकांक्षी होता है। कुछ लोग अपने बेटे-बेटी की शादी की भी समस्याओं को उनके सामने रखने से बाज नहीं आते। लेकिन महाराज श्री का अपने भक्तों के प्रति स्नेह देखिए, वे सभी को ध्यान से सुनते हैं और 'राम का नाम लो' सब ठीक हो जायेगा' कहकर उन्हें आश्वस्त करते हैं। उनके इस महामंत्र के जाप से सब ठीक हो भी जाता है।

ऐसे दिव्य महापुरुष को मेरा कोटि-कोटि नमन है। ईश्वर से प्रार्थना है कि वे महाराजश्री को सुख-शान्ति एवं दीर्घायु प्रदान करें ताकि वे लोकमंगलकारी प्रवृत्तियों का अधिकाधिक प्रसार कर सकें।

●

# अभिनवरामानन्दाचार्य और नया भारत

**शत्रुघ्न प्रसाद**

यह अतीव हर्ष का विषय है कि भारतवर्ष बीसवीं सदी के अनेकानेक भीषण द्वन्द्वों तथा संघर्षों पर विजय पाता हुआ इक्कीसवीं सदी में प्रवेश कर नयी आशा और नयी आकांक्षा से ऊर्जावान हो उठा है। परन्तु अभी अनेक सांस्कृतिक-धार्मिक समस्याओं से जूझना हो रहा है। इस स्थिति में हमारे समक्ष आचार्य प्रवर पूज्य रामानन्द जी की सांस्कृतिक क्रांति-चेतना, मर्यादा पुरुषोत्तम श्रीराम की चरित्र गाथा और नये भारत के नवनिर्माण की यात्रा– तीनों जुड़ कर हमें मार्ग निर्देश कर रही हैं। परन्तु अवतारी पुरुष, संस्कृति पुरुष, राष्ट्रपुरुष श्रीराम के विरुद्ध षड्यन्त्र बीसवीं सदी में ही शुरू हो गये थे। श्रीराम की ऐतिहासिकता, श्रीरामजन्मभूमि के अस्तित्व तथा दक्षिण महासागर में स्थित रामसेतु– तीनों की अस्मिता पर प्रहार भी होने लगे थे। वर्णों एवं जातियों-उपजातियों में साँस लेता विश्व का सर्वाधिक प्राचीन मानव समूह– हिन्दू अपनी सामूहिकता एवं एकात्मकता को खो रहा था। पश्चिम, आर्य और द्रविड़ का भेद पैदा करके तमाशा देखता रहा है। तमिलनाडू का तमिलभाव राम के विरुद्ध होता रहा है। इन विषम परिस्थितियों में काशी का श्रीमठ (रामावत सम्प्रदाय) के पूज्य श्रीरामानन्दाचार्य की क्रांति चेतना को श्रीरामनरेशाचार्य जी महाराज बौद्धिक, सांस्कृतिक तथा साहित्यिक स्तर पर प्रस्तुत कर रहे हैं। काशी, उज्जैन, प्रयाग, हरिद्वार, जयपुरआदि अनेक सांस्कृतिक केन्द्रों को नये रूप में जागृत कर वैष्णवता की नूतन यज्ञशिखा प्रज्ज्वलित कर रहे हैं।

मुझे काशी की उस सांस्कृतिक गोष्ठी का स्मरण हो रहा है। वहाँ दो दिनों तक विभिन्न महाविद्यालयों-विश्वविद्यालयों के संस्कृत तथा हिन्दी के विद्वान् एवं साहित्यकार रामसंस्कृति से संबद्ध विषयों पर विचार-विमर्श कर रहे थे। पूज्यश्री रामनरेशाचार्य जी की उपस्थिति में सभी मुक्तभाव से अपने-अपने तर्कों तथा विचारों को रख रहे थे। सामाजिक समता-समरसता पर बल प्रदान कर

समीक्षक, कथाकार एवं 'सदानीरा' के सम्पादक, पटना

रहे थे। यह प्राचीन शास्त्रार्थ शैली से अनुप्राणित आधुनिक विमर्श प्रभावी और सार्थक लगा। मैं एक नयी प्रेरणा तथा पूज्य श्रीरामनरेशाचार्य से आशीष पाकर लौटा था। मैंने अनुभूत किया था कि कुछ बुद्धिजीवी इतिहासकार तथा पत्रकार प्रतिबद्ध राजनीति की दृष्टि से राम की आलोचना कर रहे हैं। साथ ही सन् १९९२-१९९३ ई. में अनेक प्रमुख पत्र-पत्रिकाओं में राम की ऐतिहासिकता तथा रामजन्मभूमि के अस्तित्व पर प्रश्नचिह्न उठाये जा रहे हैं। रामसेतु (सेतुबन्ध रामेश्वरम्) को प्राकृतिक कहकर विध्वंस की तैयारी चलती रही है। परन्तु सभी विरोधी अपने आप पराजित होकर मौन हो रहे हैं।

इस ज्वलन्त विषय पर श्रीमठ ने पूज्य रामनरेशाचार्य जी के निर्देशन में अपनी सांस्कृतिक गोष्ठियों में भारत की संस्कृति की साम यज्ञ को प्रज्ज्वलित कर दिया है। इस आधुनिक शास्त्रार्थ का प्रवर्तन अभिनव रामानन्दाचार्य श्री रामनरेशाचार्य जी ने किया है। मध्यकाल के अन्य सम्प्रदायों की गतिविधियाँ मात्र मन्दिरों तक सीमित हैं। कुछ नये संगठन अपनी नयी दृष्टि से भारतीयता के यज्ञ में आहुति दे रहे हैं। परन्तु श्रीमठ-रामावत सम्प्रदाय ने अपने विचारों-सिद्धान्तों को व्यापकता का प्रकाशन प्रदान कर दिया है। श्रीराम के सम्बद्ध मन्दिरों की शृंखला को नये युग के अनुकूल नया आलोक अपेक्षित है।

यह सत्य है कि भारत में चिंतन और उपासना की स्वतंत्रता युगों से रही है। यह विश्व संस्कृति की हिन्दू दृष्टि है। चिर-युगीन लोकतान्त्रिक दृष्टि तो पूर्णतः भारतीय है। अन्य सामी चिन्तक इस स्वतंत्रता को स्वीकार नहीं करते। ये सेमेटिक दूसरों की स्वतंत्रता छीनने का प्रयत्न करते हैं यानी मतान्तरण-धर्मान्तरण का अमानवीय षड्यन्त्र करते हैं। इसी का क्रूर रूप है– आतंकवाद। भारत ने आतंकवाद को प्रश्रय कभी नहीं दिया। आपस में मतभेद रहे हैं। प्रतियोगिता रही है। मतभेद मिटे भी हैं। कभी वैदिक और श्रमण का मतभेद रहा है। शैव और वैष्णव का मतभेद रहा है। वैष्णवता की दो धाराएँ– रामभक्तिधारा और कृष्णभक्तिधारा तो विद्यमान हैं। रामभक्ति की सगुणवादी तथा निर्गुणवादी धाराएँ हैं।

यह भी सत्य है कि पुराण प्रसिद्ध सिद्ध दशावतार कथा ने सांस्कृतिक शैली में मतभेदों का निवारण किया है। सभी भगवान विष्णु के ही अवतार हैं– ऐसी मान्यता हृदय को स्पर्श करती है श्रद्धा से शीश झुक जाता है और पूज्य रामानन्दाचार्य जी ने सगुण तथा निर्गुण भक्ति– दोनों को स्वीकृति दी थी। साथ ही विषमता से जकड़े समाज में समता-समरसता को– सबकी

रामभक्ति को अन्दर से मान्यता दी थी। 'रामावत संप्रदाय'– श्रीसम्प्रदाय की शिष्य परम्परा के तुलसीदास ने शिव तथा राम को आद्यन्त जोड़ दिया है। शैव और वैष्णव के मतभेद-मनभेद– दोनों को मिटा दिया था। 'मानस' प्रमाण है। शिव ने राम को पूज्य माना है, राम ने शिव को। श्रीराम ने सुदूर दक्षिण सागर तट पर रामेश्वर शिव की प्रतिष्ठा की थी। यह गाथा कितनी उज्ज्वल है!

चौदहवीं शती के पूज्य श्रीरामानन्दाचार्य की क्रांतिचेतना के परिणामस्वरूप एक ओर कबीर तथा रैदास हैं, दूसरी ओर संत तुलसीदास हैं और आधुनिक वैष्णव कवि मैथिलीशरण गुप्त हैं। उसी पद पर प्रतिष्ठित श्रीरामनरेशाचार्य जी महाराज उसी क्रांतिचेतना के विमर्श को आधुनिक युग के अनुकूल अग्रसर कर रहे हैं। इसीलिए 'हरिद्वार समग्र (डॉ. उदयप्रताप सिंह सम्पादित) में उन्होंने 'मंगलाशासन' में लिखा है– 'अज्ञान के कारण शैवों और वैष्णवों का परस्पर विरोध-असहनशीलता तथा युद्ध प्रायः शांत हो गये हैं। दूसरे तीर्थों की अपेक्षा सामंजस्य अधिक है। इसके सम्पादन में रामावत परम्परा की भगवान शिव के प्रति अत्यधिक नैष्ठिकी भावना है, जिसको गोस्वामी तुलसीदास जी ने ऐतिहासिक रूप से प्रतिष्ठित किया।''

प्रयाग कुम्भ के अवसर पर आयोजित संगोष्ठी तदुपरान्त डॉ. उदयप्रताप सिंह के सम्पादन में प्रस्तुत 'तीर्थराज प्रयाग और रामभक्ति का अमृत कलश' नामक ग्रंथ में अभिनव रामानन्दाचार्य-श्रीरामनरेशाचार्य जी ने मंगलाकांक्षा' प्रदान की है। इसमें अमृत कुम्भ और कुम्भ मेला के माध्यम से अपनी संस्कृति के अपूर्व आध्यात्मिक अमृत का अवदान दिया है। इसमें इनका अतल स्पर्शी चिंतन दृष्टिगत् हो रहा है। वे लिखते है– ''वैसे मनुष्य अनादिकाल से समुद्रमंथन से निःसृत अमृतकलश की खोज में तल्लीन है। प्रारम्भ में अमृत अन्वेषण की इस आदि यात्रा में हम एकाकी ही रहे होंगे। इस क्रम में सदा ही असफल होते हुए हमने मिलकर अमृत कलश खोजना शुरू किया होगा। मिलकर सत्य, अमृत व सुख खोजने का क्रम ही मेला है। वस्तुतः यही अमृत अन्वेषण की साधुरीति है। मिलकर अमृत खोज की प्रक्रिया की सुचारुता की प्रामाणिकता पुराण के उस सुप्रसिद्ध आख्यान से भी सिद्ध होती है। वैदिक सनातन धर्म का कुम्भ मेला अमृत खोज का अनुपम गौरववर्धक विराट् एवं प्रामाणिक निदर्शन है।

देवताओं एवं दानवों के समुद्रमन्थन से जो अमृत कलश प्राप्त हुआ था. उसके पहले ही विषकलश भी प्राप्त हुआ था जिसको भगवान शंकर

ने पीकर पचाया एवं मन्थन करनेवालों को बचाया। मन्थन की सम्पूर्णता भी कच्छपावतार भगवान् विष्णु के सहयोग से ही हुई जो वस्तुतः अमृतकलश ही नहीं, अमृत सागर है। संसार का सम्पूर्ण अमृत उनके द्वारा ही वितरित एवं प्रसारित है।''

भगवान विष्णु के अवतार श्रीराम की चरित कथा को सर्वप्रथम संस्कृत के आदि कवि वाल्मीकि ने 'रामायण' में प्रस्तुत किया। तमसा के तट पर क्रौंच युगल में एक के आहत होने पर उनमें जो अथाह मानवीय संवेदना-करुणा उत्पन्न हुई तो अपने आप स्वतः स्फूर्त लौकिक संस्कृत का छन्द 'श्लोक' प्रकट हुआ। श्री नारद के निर्देश पर कविवर ने राम कथा की रचना की। इसी के बाद 'अध्यात्म रामायण' तथा 'आनन्द रामायण' की रचनाएँ हुईं। युगों बाद श्रीरामानन्दाचार्य की शिष्य परम्परा में तुलसीदासजी ने रामचरितमानस की रचना करके मुगलकालीन भारत को रामकथा रस में सबको मग्न कर दिया। अकबर के सेनानी रहीम ने भी श्रद्धा से श्रीराम स्मरण किया। यह है भारत की सांस्कृतिक गौरव गरिमा! विश्वनाथ की काशी में रामचरितमानस की रचना हुई और काशी के पंडित मधुसूदन सरस्वती ने ही लोकभाषा की रामचरितकथा को मान्यता प्रदान की। यह काशी शिव की काशी श्रीराम की भी काशी बनी। वैसे पहले से पास के सारनाथ में भगवान बुद्ध ने तपाख्यान किया था। इस प्रकार काशी क्षेत्र त्रिवेणी संगम संस्कृति का दूसरा क्षेत्र बना। पहला तो प्रयाग है ही।

निःसन्देह भारत की संस्कृति गंगा जमुनी **तहजीब नहीं त्रिवेणी संगम संस्कृति की पावनभूमि है**। भारत सबको मान्यता देता है। सबको सम्मान देता है। वैदिक संस्कृति-सरस्वती तो नींव में है। यमुना तथा गंगा के क्षेत्र की सभी मान्यताएँ समन्वित हो जाती हैं। गंगा ही आगे बढ़ती हैं। राम गंगा तो आधुनिक युग में राष्ट्रकवि मैथिलीशरण गुप्त के प्रबन्ध काव्य 'साकेत' तथा नरेन्द्र कोहली की रामकथा उपन्यास श्रृंखला से ही सर्वदा आगे बढ़ रही हैं। मेरी दृष्टि में निर्गुण राम के भक्त कबीर और सगुण राम के भक्त प्रवर तुलसी– दोनों ने मिलकर रामभक्ति की गंगा बहायी है। मुगलकाल के भयावह वातावरण में जन-जन में रामभक्ति की आस्था जगायी है। यह भी सत्य है कि कबीर ने सगुण उपासना तथा विषम वर्ण व्यवस्था की आलोचना की है। तुलसी ने उनकी आलोचना की है। यह उस युग के चिंतन की स्वाधीनता का प्रमाण है। यह भी ध्यातव्य है कि कबीर आदि निर्गुण सन्तों का प्रभाव

बंगाल के निर्गुणवादी बाउल गायकों की वाणी पर पड़ा है। इनके प्रभाव से विश्वकवि रवीन्द्रनाथ ठाकुर की 'गीतांजलि' पर भी कबीर का प्रभाव लक्षित है। यह असाधारण प्रसंग है। यह सब पूज्य आचार्य श्रीरामानन्द के विराट व्यक्तित्व का अवदान है।

मेरी मंगलकामना है कि अभिनव रामानन्दाचार्य श्रीरामनरेशाचार्य जी महाराज की इस सांस्कृतिक साधना से इक्कीसवीं शती में वही समता मूलक-समरसता प्रधान और असीम आस्था पर आधारित श्री रामगंगा का प्रवाह अविरल होता जायेगा। असीम श्रीराम की साधना भी असीम हो, व्यापक हो और अन्ततः इक्कीसवीं शती के उपयुक्त हो।

इस अवसर पर कुछ पंक्तियाँ याद आ रही हैं। अपनी एक छोटी रचना देने का साहस कर रहा हूँ–

शील का सौन्दर्य
काव्य का अनुष्टुप छन्द
कला का पंचम स्वर है
वह धनुर्धर है।।१।।

कबीर और नानक का
निर्गुण निराकार
तुलसी का सगुण साकार
आदि कवि का आदर्श
वह नराकार है।।२।।

राज भवन का राम
बनवासी है
सबका विश्वास
मलय निःश्वास
आसेतु हिमाचल का वासी है।।३।।

किसी का वात्सल्य
किसी का सख्य
किसी का माधुर्य

सबका मन प्राण है
दीन दुखी का त्राण है॥४॥

उसने सब को जोड़ा था
हृदय से हृदय को
नगर से ग्राम को
ग्राम से तपोवन को
वह सबसे एकात्म हुआ
सबका परमात्म हुआ॥५॥

●

# आचार्यश्री के कतिपय संस्मरण

कमलेश झा

नवो नवो भवति जायमनोऽह्नां केतुरुषसामेत्यग्रम् ।
भागं देवेभ्यो विदधात्यायन् प्रचन्द्रमस्तिरते दीर्घमायुः ।।

श्रीहनुमत्सहायश्रीराम चिन्मय परमार्थ हैं। वह स्वात्माराम सच्चिदानन्द परम ज्योति हैं। ये ही चराचर जगत् के आश्रय हैं। सर्वविध विद्या एवं तपश्चर्या के प्रकाशक आप स्वयम्प्रकाश हैं। प्रणव एवं गायत्री आपकी स्तुति में सदा सम्प्रवृत्त हैं। वेद, तन्त्र, वेदाङ्ग एवम् अष्टादश विद्या स्थानों में आपकी ही स्तुत्यरूपता प्रतिपादित है। आदिकवि महर्षि वाल्मीकि ने आपकी रामायण-कथा का मधुमय गान किया है। त्रिदेव, देवर्षि, महर्षि, योगिजन, विविध भागवत, आर्त, जिज्ञासु, अर्थार्थी तथा ज्ञानिजन द्वारा अनादिकाल से निरन्तर आपकी स्तुति की जा रही है, आज तक वह पूरी हुई नहीं। अतः हमारे प्रभु का स्वरूप स्तुत्य है– यह मान्य सिद्धान्त है। कभी भी समाप्त नहीं होने वाली प्रभुस्तुति सदा सम्प्रवृत्त रहेगी।

सिद्धधर्मस्वरूप श्रीराम, वेदविहित यागादि साध्य-धर्म के रूप में भी उपस्थित होकर सदैव स्वजन-कल्याण मार्ग का अनुविधान करते हैं। एवञ्च 'रामो विग्रहवान् धर्मः'– सिद्धान्तसूक्ति एवं 'रामस्य दासोऽस्म्यहम्' –अनुभूति-सूक्ति सुतरां सुप्रथित होती हैं।

जलप्रवाहरूपा त्रैलोक्य पावनी गङ्गा, प्रदूषण भीतिनिर्मुक्त नहीं है किन्तु वाल्मीकि पर्वत से उद्गत होकर श्रीराम-रत्नाकर से समाविष्ट होनेवाली रामायणी कथा गंगा प्रदूषण भीति निर्मुक्त रहकर त्रैलोक्य पावन विधान निपुण है। तभी तो कविताशाखारूढ महर्षि वाल्मीकि ने कोकिलस्वर में मधुराक्षर– 'राम-राम' का मधुर संकीर्तन किया है जिससे भक्त हृदय, विवश होकर आवर्जित हो जाता है। अयोध्याऽधिपति-दम्पती की अनेक जन्माचरित तपश्चर्या, कौशल्या-हृदयरञ्जन को दशरथ भवन में क्रीडा लीलोत्सुक बना देती है। 'वज्रादपि कठोराणि

अध्यक्ष : धर्मागम विभाग, संस्कृत विद्या धर्मविज्ञान संकाय, काशी हिन्दू विश्वविद्यालय, वाराणसी-२२१००५

मृदूनि कुसुमादपि। लोकोत्तराणां चेतांसि'– सूक्ति को चरितार्थ करने वाले भरताग्रज के कोमलाङ्गी प्रियानुवनानुव्रजनान्वित राज्य-त्याग एवम् बलवत्सागरत्रासपुरः सरबन्धन समन्वित दुष्टदवदहन– 'रक्षिष्यतीति' विश्वासदादर्य को पोषित करते हैं।

शास्त्रयोनि अयोनि शिवानुध्यात द्वयक्षर श्रीरामनाम मन्त्रवर्ण को आचार्यवर-श्रीमुखत से प्राप्त कर शिष्यभक्त, इष्टसायुज्य-चमत्कृतिरसप्लाविथ होकर कृतकृत्य हो जाता है। तभी तो श्रुतिवचन 'आचार्यवान् पुरुषों वेद' की अभ्यर्हितता अध्यात्मजगत में विश्रुत है।

श्रीरामोत्तरतापनीयोपनिषद् में संवादक्रमोपवर्णित मन्त्रवचनों द्वारा उपर्युक्त श्रुतिवचन सुव्याख्यायित होता है। यथा–

**ॐ यो वै श्रीरामचन्द्रः सभगवान् यस्तारकं ब्रह्म भुर्भुवः स्वस्तस्मै वै नमोनमः।**
**ॐ यो वै श्रीरामचन्द्रः सभगवान् यश्च महेश्वरोभुर्भुवः स्वस्तस्मैवैनमोनमः ।।**

सद्गुरु आचार्य, सच्छिष्य को उत्सात-भैरव की जागृति के साथ दिव्य चक्षुष का उन्मीलन कर प्रभु के आन्तर ऐश्वर्यजगत् में प्रवेश की अधिकारिता प्रदान करते हैं हैं। करुणासंप्रवृत्त भागवत आचार्य ने प्रभु की स्वशक्तिसाहाय्य संवलित सृष्टादिलीला का मनोहारी प्रतिपादन किया है–

**एकः स्वयं सञ्जगतः सिसृक्षयाऽद्वितीययाऽऽत्मन्यधियोगमायया ।**
**सृजस्यदः पासि पुनर्ग्रसिष्यसे यथोर्णनाभिर्भगवन् स्वशक्तिभिः ।।**

आचार्य सद्गुरु की संगति से सुप्राप अतिशय महत्त्वपूर्ण वस्तु 'शील' है जो हमें शास्त्रानुमोदित ऐहिक सुखभोग से सन्तृप्त करता है तथा भगवत्प्राप्तिरूप पारमार्थिक ऐश्वर्य में सुप्रतिष्ठित कर अतिसन्तुष्ट कर देता है। शास्त्रों में 'शीलं परं भूषणम्–' वचननिचय से प्रशंसित शील के बिना निरतिशय भूतहित प्रभुश्रीराम का साक्षात्कार तो दूर प्रभावी कृपावृष्टि का बिन्दुमात्र भी दुर्लभ होता है। आचार्य-कृपा से प्राप्य सम्पत्प्रकर्ष अनिर्वचनीय होता है। जिस शिष्यभक्त ने प्रभुमय गुरुदेव से स्वात्माभेद को स्थापित कर लिया हो उसे प्रभु विभूतिपात्रता स्वरसतः प्राप्त हो जाती है। यथा–

**अभिन्नं वेत्ति यो विद्वान् स्वात्मानंच गुरुं शिवम् ।**
**तन्नौमि मुक्तमात्मानं विद्याविद्योभयात्मकम् ।।**
**प्रभुणा भवता यस्य जातं हृदयमेलनम् ।**
**प्राभवीणां विभूतीनां परमेकः स भाजनम् ।।**

यह सनातन धर्म के अतिशय माहात्म्य का आविष्करण है– परम कारुणिक भगवान् स्वयं ही आचार्य रूप में अवतरित होते हैं। यद्वत् श्रीरामदैवत शिव

स्वयमेव दक्षिणामूर्ति एवं शंकराचार्य भगवत्पाद के रूप में गृहीतावतार होते हैं तद्वत् स्वयं प्रभु श्रीराम श्रीरामानन्दाचार्य के रूप में सुगृहीतावतार होते हैं। यथा–

**रामानन्दः स्वयं रामः प्रादुर्भूतो महीतले ।**

आगम एवं निगम-वाङ्मय में शास्त्र एवं शास्त्रयोनि परमेश्वर की अपेक्षा श्रीगुरु-आचार्य की समधिक महिमा गायी जाती है। आचार्यश्री, अत्यन्त दृढ़ता से इस सिद्धान्त का प्रकाशन करते हैं– स्तोत्रसाहित्य की गुरुस्तुति में समस्त शास्त्रीय सिद्धान्तों की अशेष सूत्रकुसुमावली विकीर्ण है।

आश्चर्यकर्मा अरूप उस रूप परमेश्वर श्रीराम के सुदृढ़ साक्षात्कार में आचार्य एवम् शास्त्र के अतिरिक्त पुरुषप्रयत्न की भी महत्त्वपूर्ण भूमिका है। यथा–

गुरुतः शास्त्रतः स्वतः ।

× × ×

**यत्नवद्भिर्दढाभ्यासैः प्रज्ञोत्साह समन्वितैः ।**
**मेरवोऽपि निगीर्यन्ते कैवप्राक् पौरुषे कथा ।।**
**क्रियया स्पन्दधर्मिण्या स्वार्थसाधकता स्वयम् ।**
**साधुसङ्गमसच्छास्त्रतीक्ष्णयोन्नीयते धिया ।।**
**अनन्तसमतानन्दं परमार्थं स्वकं विदुः ।**
**सयेभ्यः प्राप्यते यत्नात् सेव्यास्ते शास्त्रसाधवः ।।**

स्वच्छ-संवेदन सम्प्राप्त भक्त साधकों की अनुभूति नितरां वन्दनीय है। शास्त्र, आचार्य एवं साधक-सद्भक्तों में प्रकटित स्वच्छता के आश्रयण से अरविन्दाक्ष प्रभु का प्रतिफलन हमारे हृदयारविन्द को उत्फुल्ल कर देता है।

प्रयागराज सङ्गमक्षेत्र के श्रीरामानन्दाचार्य प्राकट्यभूमि में स्थित श्रीहरितमाधवमन्दिर का संरक्षण-संवर्धन, स्वयं श्रीरामानन्दाचार्य जी सिद्धलोक से श्रीरामनरेशाचार्य के रूप में अवतारग्रहण पुरःसर सम्यक्तया सम्पादित कर रहे हैं– यह विवेकी को अदृष्टिगलोचर नहीं है।

१९७४ ई. के निज छात्रावस्था में जन्मभूमि मिथिला से काशी आकर मैं संस्कृतविद्यार्जन में व्यापृत था तभी गङ्गास्नानानुध्यानक्रम की गतागतवेला में इदम्प्रथमतया मैं अत्यन्त मेधावी आपादमस्तक शुभ्रवस्त्रधारी किशोर अध्येता के स्वतः स्फूर्त आभा-वैराग्य-मय मुखमण्डल का अवलोकन किया था। किन्तु गोस्वामी जी के शब्दों में– **तब मैं रहेऊ अचेत।**

महान् 'गुरुजन सान्निध्य', एक ओर न्यायागमादिकी प्रखर विद्वत्ता को उक्त किशोर सन्त में आपूरित कर रहा था तथा दूसरी ओर मुझे शैवागमोन्मुख विधा का उपासक बनाया जा रहा था। चिन्मयी श्रीकाशी में प्रभु-कृपा से अन्योन्न स्निग्ध मौनप्रीति परिपोषण हेतु सुमधुर परिपाक स्वरसतः सम्पादित हो रहा था। तात्कालिक छवि तदाप्रभृति निरन्तर विरक्त उत्कृष्ट साधक में विजतृम्भित हो रही है। तत्प्रद्योतनार्थ आज की तिथि में योगवासिष्ठीय वचननिचय हमें आह्लाद-भरित करता है–

तद् वैराग्यं परंश्रेयः स्वतो यदभिजायते।
× × ×
शमशालिनि सौहार्दवति सर्वेषु जन्तुषु।
सुजने परमं तत्त्वं स्वयमेव प्रसीदति।।

समय प्रवाह निज गतिशीलता का अविराम एवम् अभिराम द्रष्टा होता है। विश्वेश्वर-प्रेरणा से विरक्त विद्वान् अध्ययन वेलारब्ध अध्यापन तनुकला का विस्तारण, हरिद्वार समाश्रित होकर सन्तविद्वज्जन के मध्य करने लगे तथा मैं संस्कृत विश्वविद्यालय दरभंगा से सम्बद्ध हो गया।

दशनामी के गिरिसाम्प्रदायिक विद्वद्-यतिप्रवराधिष्ठित मठ में ससम्मान प्राप्ताश्रय साधुप्रवर श्रीरामनरेशदास के प्रति सम्बद्ध वैरागी सम्प्रदाय के साधनसम्पन्न साधुओंकी अन्तःप्रेरणा क्रियान्वित हो उठी और आप निजावतारोद्देश्यपूर्ति हेतु लौकिक संसाधनरिक्त किन्तु आध्यात्मिक समृद्धि से सम्भरित श्रीबिन्दुमाधवाधिष्ठित श्रीमठ, पञ्चगङ्गा, वाराणसी के जगद्गुरु रामानन्दाचार्य पीठाधीश्वर पर प्रतिष्ठ हुए।

श्रीकाशी प्रेम विरहानलपरिपाकवशाद् नवनवाभिनव होता रहा। १९९० के दशक में महामाहेश्वर गुरुवर रामेश्वर झा की दैनन्दिनियों के पारमहंसश्लोकों के प्रकाशन-सम्पादन निमित्त मैं काशी आया था। उस क्रम में सद्यः आचार्यपद सुप्रतिष्ठि श्रद्धेय जगद्गुरुजी का दर्शन अनियोजित रूप में मुझे प्राप्त हुआ था।

स्वातन्त्र्यसम्प्राप्ति समकाल में भारतीय मनीषा के सम्राट् स्वामी श्रीकाशिकानन्द गिरि, श्रीकाशीनगरी की महाप्रतिभा को औज्ज्वल्य प्रदान कर चुके थे। अद्यावधि वह प्रतिभा सम्राट्, काशी के अनुरूप सम्मानाभिनन्दन से पूजित नहीं हो पाये थे। जगद्गुरु की इच्छा श्रीविश्वेश्वरेच्छा से अभिन्न होकर मचल उठी थी। स्वनामधन्य गिरिजी के अभिनन्दन पद्यविनिर्मिति की

आचार्याज्ञाशीः मुझे कृपान्वित कर दी।

क्या यह अभिनन्दनपत्र चलेगा? शब्दावली के साथ मैं आचार्य श्री के चरणों में उपस्थित हुआ। कृपाधायक आचार्यश्री ने– 'चलेगा क्या यह तो दौड़ेगा'– कहकर मुझे प्रोत्साहित कर अभिनन्दन-पत्र-वाचनार्थ यथा समय काशी पुनरागमन की आज्ञा भी कर दी।

जीवन के ऐसे क्षण प्रायेण अविस्मरणीय होते हैं। शनैः-शनैः आचार्य श्री के गुरुस्थान बड़ी पियरी- श्री-विहारम् में विद्यामयी गतिविधि भी प्रसृत होने लगी। चातुर्मास्य-अनुष्ठान में मासावधि आचार्यश्री के अभिभावकत्व में काशी-वास का अवसर मिला। प्रतिदिन कथा-प्रवचनारम्भ में पाँच मिनट बोलने का अवसर भी मुझे प्राप्त होता था।अकस्मात् अनन्तवैशिष्ट्य विशेषित काशी की प्रशंसा करने के क्रम में आचार्यश्री के मुखारबिन्द से शुभाशीष निःसृत हो उठी–

**चिकीर्षिते कर्मणि चक्रपाणौ ना पेक्षतेतत्र सहाय सम्पत्।**
**पाञ्चालराजतनयापटसन्निधाने न तन्तवो नैव तुरी न वेमा।।**

'ऐसे काशी के रहते कोई दरभंगा में रहे– यह कैसी बात है?' मेरा रोम-रोम खिल उठा था– मुझसे सन्तयोगी का आशीर्वचनान्वित अनुग्रह प्राप्त हो चुका था। छह महीने के मध्य ही मुझे विश्वेश्वर काशी ने बुला ली। अब मैं काशी-विश्वेश्वर का होकर रह गया हूँ।

परमेश्वर, ब्रह्माण्ड-घट के निर्माण में मृत्पिण्डादि उपादान सम्भार के बिना संकल्पमात्र से प्रवृत्त होकर चरितार्थ होते हैं। दुःशासन द्वारा निर्वस्त्र की जाने वाली पाञ्चाल राजपुत्री की लज्जा रक्षण हेतु जगद्रक्षक प्रभु ने परिधानवस्त्र का निर्माण किया था। तुरी, तन्तु, वेमाप्रभृति योग्य सहायक सामग्री के अभावों में भी प्रभु की इच्छा से ही वह वस्त्र निर्मित हुए थे। दृष्टान्त रूप में योगी सन्तआचार्य का उदाहरण प्रस्तुत किया जाता है– **'योगीव निरुपादानमर्थजातं प्रकाशयेत्।'**

प्रभु की व्यापक आङ्गन में सर्वत्र आचार्यश्री की अव्याहत मन्त्रसिद्धि', भक्तजन को अनुगृहीत करती है। मैंने कतिधा अपनी सन्तान एवम् उपस्थित कतिपय अनुग्राह्य जन के प्रति आचार्यश्री की शुभाशीष को लागू होने की प्रत्यक्ष अनुभूति की है।

हमारे गुरु ने पढ़ा रखा है– समस्त चराचर जगत् की आत्मा परमेश्वर हैं। आत्मानुराग तो निसर्गसिद्ध स्वारसिक है। अतएव देवभक्ति हमें अवश्य

अनुगृहीत करेगी। भक्तगण की यह प्रबल इच्छा रहती है– परमेश्वरशक्ति सदैव मुझसे अवियुक्त बनी रहे।

'आचार्यश्री' कठिनतम योग, तपस तथा अर्चा-यागादि में स्वयं प्रवृत्त होते हैं किन्तु अपने शिष्य-भक्तों के मध्य वह सहज भाव से भावपूर्ण भक्ति की ही प्रधानता प्रतिपादित करते हैं।

आप, भक्तिरूप महौषधिचर्वण जनित चर्वणानन्दरस– 'जविन्मुक्ति' को वरेण्यरूप में स्वीकारते हैं।

हमारे आचार्य ने हमें भक्तिलता में नानासिद्धिसमाश्लिष्ट मुक्ति एवम् मुक्ति-फलों के जन-धारण सामर्थ्य का अवलोकन कराया है। मनस शास्त्र (अन्तःकरण) को दुःखबीज कहा गया है। पर जब वह भक्तिरसायन से आसेचित होता है तो निःश्रेयस एवं साध्यभक्तिस्वरूप महामृत फल का उपजनन करता है। बाह्य रूपतया समुदित साधनभक्ति, नानाविध विभूतियों का उपलम्भ करती है पर जब वह आन्तर रूप से समुदित होती हुई साध्यभक्तिरूप में विजृम्भित होती है तो मुक्ति उसकी अनुचरी बनकर सेवायें करती हैं।

आचार्य के मार्गदर्शन में भागवत निज उपास्य को मनोवृत्तिविशेष रागादिक का भोग चढ़ा देता है। प्रभु उसमें अमृत रस भरकर उसको सुस्वाद बनाकर चरवते हैं एवं भक्तों के मध्य उस प्रसाद का वितरण कर देते हैं।

मैं श्रीमठ-पञ्चगंगा, वाराणसी की आकाशवृत्ति समाश्रित विभिन्न तीर्थनगराधिष्ठित पूजार्चन-सत्सङ्ग नवमन्दिर-गोशालादि निर्माण की प्रसृमर विधाओं से सुपरिचित नहीं हूँ। तथापि मुझे इस बात का आह्लाद होता है कि जन्माष्टमी महोत्सव के अवसर पर बालकृष्ण की तथा श्रीरामनवमी महोत्सव में बाल राम की चिन्मय उपस्थिति को व्यवहार निर्वाहार्थ निज मनोमुकुर से निःसारित करने में असमर्थ होकर हमारे आचार्य समाधि एवं व्युत्थान की अन्तरालभूत भेदभूमि के अपसारण में अनायास समर्थ होते हैं।

प्रथम दिवस के पश्चिम में आबालबद्ध नवागन्तुक भी आचार्य सान्निध्य में अमृतोपम आनन्द की अनुभूति करते हैं। अन्योन्यविरोधी भी त्यक्त वैर हो उठते हैं। अनवसर मौनी भी मुखर हो उठते हैं। प्रसुप्त-आस्तिक्य भी जागृत आस्तिक होकर सेवापरायण बन जाते हैं। विभिन्न प्रान्तादिभेद से गरबा-प्रभृति नृत्यगीतादि में आचार्यश्री को केन्द्रित कर पूर्णगोपीभाव में भक्तजन प्रवृत्त होकर आत्म-विभोर हो उठते हैं।

सामान्यतया यह देखा जाता है कि आज का राजनेता देश (राष्ट्रिय)

स्तर से स्वयं को अलग-थलग देखता है। इसके विपरीत वह स्वयं को पार्टी स्तरीय बना लिया है। कभी उनकी राजनीति-बहस छिड़ उठती है तब अखबार के अनध्येता आचार्यश्री, स्वप्रतिभोच्छलन से राजनीतिज्ञों के मध्य कुशल स्पृहणीय वक्तृता की भूमिका का निर्बहण नैपुणी के साथ करते हैं। धर्माचार्यों का राजनैतिक दलीय संकीर्णता से उत्तीर्ण होना सहजधर्म होता है। अस्तु'

**'तवकथामृतं तप्तजीवनं कविभिरीडितं कल्मषापहम्।**
**श्रवण मङ्गलं श्रीमदाततं भुवि गृणन्तिते भूरिदाजनाः।।**

इस गीत सूक्ति बलायात महादानी आचार्यश्री को नमन कर निज आनन्दभावना को आनन्द धाम में समर्पण करता हुआ मैं कृतार्थ होता हूँ–

**सर्वसंविन्नदीभेदाभिन्न विश्रान्तिभूमये।**
**नमः प्रमातृवपुषे शिवचैतन्य सिन्धवे।।**

× × ×

**सर्वस्य तत्त्वस्य च तत्त्वभूतो गुरुः सएको नहिकश्चिदन्यः।**
**विभासमानोऽपि नभास्य ते यो गुप्तो गुरुः सोऽभिनवः सतास्ते।।**

× × ×

**रामे चित्तरमयः सदा भवतु मे भो राम मामुद्धरेः।**

●

# वज्रादपि कठोराणि मृदूनि कुसुमादपि

ब्रह्मानन्द शुक्ल

लोकोत्तराणां चेत्तासि को न विज्ञातुमर्हति ।।

वज्र से भी कठोर एवं पुष्प से भी कोमल लोकोत्तर पुरुषों के चित्त को कौन जान सकता है?

'उत्तररामचरित' के महाकवि भवभूति का यह पद्य अक्षरश: घटित होता है अनन्त श्री विभूषित श्रीमज्जगद्गुरु रामानन्दाचार्य पद प्रतिष्ठित पूज्य पाद स्वामी रामनरेशाचार्य जी महाराज श्रीमठ पञ्चगंगा काशी के स्वभाव एवं आचरण में। जागतिक कार्यों में अत्यन्त व्यावृत्त होने पर भी अपने नित्य नैमित्तिक कार्य के प्रति सदा सजग चरित्र को अवलोकित करने पर यही प्रतीत होता है कि पूज्य पाद स्वामी जी का स्वभाव वज्र से भी कठोर है, तथा सहज समझ में न आने वाला है। अभी कुछ ही दिवस पूर्व मैं दर्शनार्थ श्रीमठ गया था। महाराजश्री का दर्शन मार्ग में ही हो गया मन अत्यन्तप्रसन्न हुआ, किन्तु मुझे यह ज्ञात नहीं था कि महाराज श्री कहाँ से पधार रहें हैं। श्रीमठ पहुँचने पर सम्मुख बैठ कर यात्रा प्रसङ्ग की चर्चा में यह ज्ञात हुआ कि पूज्यश्री बहुत दूर की यात्रा से आ रहे हैं। मैं विचार कर रहा था कुछ उच्छिष्ट प्रसाद का सौभाग्य भी सम्प्राप्त होगा। किन्तु नीचे आने पर विदित हुआ कि महाराज जी का वही पुराना कठोर नियम रात्रि में मात्र एक गिलास गो दुग्ध ही ग्रहण करना है। इसके बाद स्वाध्याय चिन्तन एवम् भजन सामान्यत: लोगों को पता भी नहीं चलता कि रात्रि में शयन भी होता है या नहीं। पूज्य पाद स्वामी चरण का आगमन कहाँ से हो रहा है, यह पूछने पर ज्ञात हुआ कि श्रीमठ के लिए पूर्ण समर्पित परम तपस्विनी श्रीमहन्त उमावा पालियाद का पाञ्चभौतिक शरीर शान्त हो गया। पूज्यश्री चरण वहीं से प्रत्यावर्तित हो रहे हैं।

वैसे कोई भी यह नहीं जान सकता कि पूज्य चरण का सर्वाधिक स्नेह आशीर्वाद किसको मिल रहा है। कई बार तो मुझे ऐसा लगा करता है कि सर्वाधिक कृपा भाजन तो मैं ही तथा यह पूर्णतया सत्य भी है ऐसे ही मेरी तरह

---

संस्कृत प्राध्यापक, चुनार, मिर्जापुर

आम लोगों के मुख से भी यही सुना जाता है। इसमें भी सत्यता है क्योंकि जीव भाव के लिए अपार कारुण्य एवं वात्सल्य श्रीचरणों का सहज स्वभाव है। हरिद्वार में मर्यादापुरुषोत्तम सर्वावतारी परम प्रभुश्रीराम का अद्वितीय विशाल मन्दिर निर्माणाधीन है। प्रभूतधन की अपेक्षा है किन्तु श्रीराम मन्दिर के लिए भी अमयार्पित विधि से धन संग्रह नहीं हो सकता। जबकि विश्वभर में फैले हुए केवल अपने शिष्य समुदाय मात्र से भी यह बात प्रचारित कर दी जाय तो मुझे विश्वास है कि एक मास का समय सौ करोड़ रुपये का संग्रह के लिए सामान्य बात है। गहराई से विचार करने पर यह बात समझ में आती है कि पूज्य चरण का विचार कितना महान है, किसी भी परिस्थिति में मर्यादा का अति क्रमण नहीं हो सकता है।

श्रीमठ में स्वामी रामानन्द जी के प्रस्तर चित्र के साथ ही प्रधान शिष्यों के चित्र स्थापित करना एक अत्यन्त उत्कृष्ट विचार एवं औदार्य का उदाहरण है। स्वामी अनन्तानन्द, रैदास, कबीर आदि का चित्र आद्य आचार्य चरण की बराबरी में करना आपकी दूर दृष्टि का प्रत्यक्ष प्रमाण है। इतना ही नहीं साहित्य के माध्यम से स्वामी रामानन्द जी के सिद्धान्त को जन-जन में प्रचार में करना 'सर्वेप्रपत्तेराधिकारिणो मताः'' का अक्षरशः अनुपालन करते हुए जिज्ञासु श्रद्धावान् जनों को रामतारक मन्त्र का सदुपदेश करना तथा उन्हें पूर्ण रूप से राममय बना देना आपका सहज स्वभाव हो गया।

श्रीराम सहस्रार्चन का प्रतिष्ठापन तो आपके द्वारा ही हुआ है जिसके फलस्वरूप अनेक घरों में नित्य श्रीतुलसी जी के सहज पत्र श्री रामसहस्र स्तोत्र के मन्त्रों के उच्चारण के साथ किया जाता है। श्री नारायण को तुलसी कितनी प्रिय है। यह प्रायः सभी जानते हैं।

तुलसी दल समर्पण से ठाकुर जी कितनें प्रसन्न होते हैं। यह सहज ही समझा जा सकता है। पर्यावरण की शुद्धि मन की शुद्धि तन की शुद्धि धन की शुद्धि के लिए परमावश्यक यज्ञों का सम्पादन पूर्ण वैदिक विधि से साङ्गोपाङ्ग पूर्ण करना आपके व्यक्तित्व का सहज आदर्श है। शास्त्रों की रक्षा के लिए अपनी विधा के उत्कृष्ट विद्वानों का एक लाख रुपये के पुरस्कार से सम्मानित करना आपकी शास्त्र निष्ठा का जीवन्त प्रमाण है।

आपका यह परमौदार्य ही है कि जिनसे कोई विशेष परिचय नहीं सम्बन्ध नहीं वे भी यदि श्री चरणों से अपनी व्यथा सुना देते हैं तो उन्हें भी सन्तृप्त करके

ही जाने की अनुमति प्राप्त होती है। मुझे पूरी जानकरी है श्रीमठ में रहकर पढ़ने वाले छात्रों का पूर्णतया भरण पोषण तो होता है। न जाने कितने ऐसे परिवार हैं जिनके बच्चों की उच्च शिक्षादि की व्यवस्था अत्यन्त गोपनीयता के साथ सम्पन्न करते हैं।

मैं गुरुदीक्षा प्राप्ति के लिए बहुत प्रयत्न करता था। अनेक उत्तम कोटि के सत्पुरुषों से मेरा परिचय रहा है। उनका मेरे ऊपर प्रगाढ़ स्नेह रहा है। मैं चिर ऋणी हूँ, किन्तु पूज्यश्री चरण ने मुझे अपनाया इससे मैं अत्यन्त अह्लादित हूँ तथा अवर्णनीय सुख मुझे प्राप्त होता है।

●

# एक सत्त्वसम्भृत व्यक्तित्व : स्वामीश्रीरामनरेशाचार्य

**पवनकुमार शास्त्री**

।।श्रीगुरुः शरणं मम।। इससे अधिक प्रमोद का कोई कारण नहीं हो सकता कि अखिल विश्व को पवित्र करने में समर्थ श्रीरामनाम महामंत्र को सर्वजन सुलभ कराने वाले जगद्गुरु श्रीरामानन्दाचार्य जी की पावन पीठ पर आसीन वर्तमान जगद्गुरु श्रीरामनरेशाचार्य जी महाराज की षष्ठिपूर्त्ति एवं पीठासीन होने की रजत जयन्ती के उपलक्ष्य में प्रकाश्यमान अभिनन्दन ग्रन्थ में मुझ अकिंचन को किंचिद्वाक्यकुसुमाञ्जलि समर्पित करने का सुअवसर प्राप्त हुआ है।

मैं काशी निवासी हूँ। मैं बाल्यकाल से ही स्थानीय पञ्चगंगा घाट एवं उससे सटे हुए बालाजी घाट पर गंगा स्नान हेतु नित्य जाया करता था और वहाँ से लौटते समय जगद्गुरु श्रीरामानन्दाचार्य जी की पुण्य-भूमि (आश्रम, सिंहासन एवं चरणपादुका आदि) की परिक्रमा करते हुए श्री बालाजी एवं श्री विन्दुमाधव जी के चरणोदकों का पान करके घर पहुँचता था। अत: परमपूज्य स्वामी रामनरेशाचार्य जी के दर्शनों का अवसर तो मुझे उनके पीठासीन होने के तत्काल बाद से ही मिलने लगा था और सांगवेद विद्यालय आदि स्थानीय विद्याभूमियों में सारस्वत-साधनारत विद्वन्मण्डली में प्रसृत आप की कीर्त्तियों को सुनने का भी अवसर मिलने लगा था किन्तु स्वामी जी से मेरा विशेष सम्पर्क जनवरी सन् २००१ ई. में सम्पन्न हुए जगद्गुरु श्रीरामानन्द सप्तशताब्दी महोत्सव के समापन सत्र में बन पड़ा जो निरन्तर वृद्धिगत होता हुआ अद्यावधि पर्यन्त बना हुआ है।

मर्यादा पुरुषोत्तम भगवान् श्रीरामचन्द्र जी की आराधना में सतत संलग्न रहने वाले स्वामी जी अपने पूर्वाचार्यों सहित आदि जगद्गुरु श्रीरामानन्द जी के श्रीचरणों में अगाध निष्ठा रखते हैं। उक्त सप्तशताब्दी महोत्सव का वर्ष-पर्यन्त चलने वाला राष्ट्रव्यापी अनुष्ठान, शतमुखकोटि रामनाम महायज्ञ का

सांगोपांग भव्य आयोजन, श्रीमठ के लुप्त हो रहे भौतिक स्वरूप का पुनः भव्यतम रूप में अवस्थापनादि कार्य इसके प्रत्यक्ष प्रमाण हैं। सप्तशताब्दी महोत्सव के उक्त समापन समारोह की पूर्वसन्ध्या में परमादरणीय श्री गणेश्वरशास्त्री द्रविड़ जी के साथ मैं स्वामी जी के समक्ष उपस्थित हुआ। उस समय स्वामीजी को जैसे ही यह पता लगा कि मैं रामानन्द सम्प्रदाय में वंशपरम्परा से दीक्षित हूँ तो उन्होंने तत्काल मुझे शतमुखकोटि यज्ञ में एक कुण्ड पर सविधि हवन करने का दायित्व साशीर्वाद सौंप दिया और कहा कि एतदर्थ आप सर्वाधिक उपयुक्त सत्पात्र हैं।

उस अमित तेजस्वी यज्ञ में 'ह्रीं रां रामाय नमः स्वाहा', 'ह्रीं रां रामाय नमः स्वाहा की निरन्तर उच्चरित होने वाली मंगलमय मंत्रध्वनि आज भी कानों में गूँजती है। यज्ञकुण्डों से निकलने वाली अग्नि की लाल-पीली ज्वालायें, उनमें आचार्य-ब्रह्मा होता एवं यजमानों द्वारा दी जाने वाली आहुतियाँ तथा यज्ञमण्डप के बिल्कुल मध्य में प्रधान देवता श्रीरामचन्द्र जी की अपार करुणा बिखेरती उपस्थिति-विषयक स्मृतियाँ आज भी आँखों के समक्ष तैरने लगती हैं। मन उस 'न भूतो न भविष्यति' वाले आनन्दोल्लास से उल्लसित हो उठता है। महोत्सव में पधारे कांची कामकोटि पीठ के शंकराचार्य स्वामी श्री जयेन्द्र सरस्वती जी के अमृतोपम उपदेश एवं उनके स्वागत में व्यक्त किये गये आदरणीय श्री स्वामी रामनरेशाचार्य जी के उद्गार आज भी हृदय में आनन्द उच्छलित करते हैं।

स्वामी श्रीरामनरेशाचार्य जी ने आदि जगद्गुरु श्री रामानन्दाचार्य की यशः पताका को दिग्-दिगन्त में फहराने के लिए उनके व्यक्तित्व एवं कृतित्व से सम्बन्धित ऐतिहासिक तथ्यों के अनुसन्धान एवं अनुशीलन हेतु व्यापक कार्य किया है। संस्कृत, हिन्दी एवं अंग्रेजी के कई राष्ट्रीय स्तर के ख्यातिप्राप्त विद्वानों ने इस विषय में व्यापक परिशीलन करके कई ग्रन्थों की रचना की है और उन्हें श्रीमठ द्वारा प्रकाशित किया गया है। डॉ. दयाकृष्ण विजयवर्गीय 'विजय' का 'पायसपायी', आचार्य देवर्षिकलानाथशास्त्री का, Swami Ramanand : The Pioneer of Rambhakti प्रो. प्रभुनाथ द्विवेदी के 'श्रीरामानन्दचरितम्' एवं 'श्रीरामानन्द सतसई' तथा डॉ. मंगलाप्रसाद का 'रामानन्द विजय' नामक ग्रन्थ इस दिशा में विशेष उल्लेखनीय है। कुम्भस्थलों तथा सप्तशताब्दी महोत्सव आदि पर डॉ. उदयप्रताप सिंह द्वारा सम्पादित कई विशिष्ट ग्रन्थ भी श्रीमठ ने प्रकाशित किये हैं जिनमें अनेक राष्ट्र विश्रुत विद्वानों

ने श्रीमठ एवं स्वामी जी के सम्बन्ध में अपने भाव व्यक्त किये हैं।

नाना शास्त्रों के तलस्पर्शी स्वामी जी ने सारस्वत साधना, विद्यार्जन एवं विद्वत्पूजन (सत्कार) के क्षेत्र में भी महनीय कार्य किये हैं। श्रीमठ के समीप में आपकी प्रेरणा से पालियादगादीपतिधर्म-गौरव श्रीमहान्त उमाबा ने अपने पति श्री अमराबापू की पुण्यस्मृति में अमराबापू संस्कृत विद्यापीठ की स्थापना की है, जिसमें संस्कृत के छात्र वेद-वेदांग एवं शास्त्रों का अध्ययन करते हैं। पूज्यश्री स्वामी जी द्वारा प्रतिवर्ष रामानन्द जयन्ती पर एक विद्वान् को एक लाख रुपये का 'जगद्गुरु रामानन्दाचार्य पुरस्कार' दिया जाता है। सन् १९९५ ई. से प्रारम्भ किये गये इस अभियान में अब तक राष्ट्रीय ख्यातिप्राप्त १५ विद्वानों को सम्मानित किया जा चुका है। इन अवसरों पर आयोजित किये गये विद्वत्पूजन के क्रम में सहस्राधिक अन्य विद्वानों को भी सत्कृत किया गया है। स्वामी जी के प्रताप से आज पूरे देश में विभिन्न क्षेत्रों के अनेक लब्धप्रतिष्ठ विद्वान् श्रीमठ से जुड़ चुके हैं और निरन्तर जुड़ते जा रहे हैं।

आदरणीय स्वामी जी के प्रयासों से केन्द्र सरकार ने जगद्गुरु श्रीरामानन्दाचार्य की महत्ता को स्वीकार किया तथा सन् २००२ ई. के फरवरी माह में उन पर डाक टिकट जारी किया। काशी में पियरी स्थित श्री विहारम्, डुमरी स्थित रामानन्दाचार्य गोशाला एवं उद्यान, प्रयाग का जगद्गुरु रामानन्दाचार्य प्राकट्य धाम, जबलपुर का प्रेमानन्द आश्रम एवं हरिद्वार का श्रीराम मन्दिर आदरणीय श्रीस्वामी जी की मंगल-साधनाओं के प्रतिरूप हैं।

**त्वदीयं वस्तु गोविन्द तुभ्यमेव समर्पये–** 'परमपूज्य श्री स्वामीजी भक्तों द्वारा समर्पित दक्षिणादि समस्त चलाचल सम्पत्तियों को भगवान् श्रीराम की धरोहर मानते हैं तथा लेने-देने के व्यवहार से स्वयं को असम्पृक्त रखते हैं। रावण जैसे महाबलशाली राक्षस का वध करके भी जिस प्रकार भगवान् श्रीराम ने उसका श्रेय सुग्रीवादि प्रियसखाओं को दे दिया था (तुम्हरें बल मैं रावनु मारयो–मानस ६/११७/४) उसी प्रकार आदरणीय श्रीस्वामी जी भी विभिन्न अनुष्ठानों के प्रमुख कर्णधार होते हुए भी उसका श्रेय सहयोगियों को दे देते हैं। विद्वानों को दिये जाने वाली रामानन्दाचार्य पुरस्कार प्रायः शिष्यगण ही अपने हाथों से देते हैं। स्वामी जी की यह उदारता मन को मोह लेती है।

स्वामी जी की वाणी में मधुरता, व्यवहार में विनय भाव, शास्त्रों में तलस्पर्शी पाण्डित्य तथा विश्वप्रसृत शुभ्रयश के सम्बन्ध में मेरे शोध निर्देशक

पूज्य प्रो. कैलासपति त्रिपाठी जी (सम्प्रति स्वर्गीय कहते थे कि यह निश्चय ही स्वामी जी के लोकोत्तर पुण्य प्रभाव एवं गुरुदेवतादि के प्रसाद का फल है। सच ही कहा है कि "त्रेता युग में श्रीरामचन्द्रजी अपने उदात्त गुणों के आधार पर जगदाराध्य बन गये थे, मध्यकाल में स्वामी रामानन्द जी इन्हीं गुणों के कारण रामावतार कहे गये थे तथा वर्त्तमान में स्वामी श्रीरामनरेशाचार्य जी इन्हीं गुणों के आधार पर अभिनव रामानन्द बन गये हैं।" (डॉ. यू.पी. सिंह एक आलेख में)। परम करुणावरुणालय आनन्दकन्द श्रीरामचन्द्र जी से मेरी तथा मेरा परिवार की यह विनम्र प्रार्थना है कि वे पूज्य श्री स्वामी जी को शतायु करें ताकि स्वामी जी की वात्सल्यपूर्ण छत्र-छाया में हम शिष्यगण तथा यह सम्पूर्ण जगत् उत्तरोत्तर समृद्धि के पथ पर अग्रसर होता रहे। हरि:शरणम्।।

●

# 'श्रीरामानन्दः स्वयं रामः प्रादुर्भतो महीतले'

**स्वामी फूलडोल बिहारीदास**

श्री आचार्य माँ विजानीयात् 'श्री रामानन्द रघुनाथ ज्यौ द्वितीय हेतु जगतरण कियो' 'तब तब प्रभु धरि विविध शरीरा हरहिं कृपा निधि सज्जन पीरा' इन आर्यवचनों के अनुसार भगवतपाद् जगत्गुरु श्री रामानन्दाचार्य सर्वेश्वर प्रभु, शरणागत वत्सल, कलिपावनावतार हिन्दू धर्मोद्धारक द्वादश महाभागवतो के साथ साक्षात् श्री परमब्रह्म परमात्मा श्री रामजी ही इस धराधाम पर अवतरित हुए।

सगुण वैष्णव भक्ति सिद्धान्तों को रूप देने वाले, ब्रह्मसूत्रों में दर्शनशास्त्रीय तत्व चिन्तन को खोल कर रख देने वाले चार प्रमुख आचार्य रामानुज, श्रीमाधवाचार्य, श्रीविष्णुस्वामी, श्रीनिम्बार्काचार्य, श्रीवल्लभाचार्य जिन्होंने विशिष्टाद्वैत, शुद्धाद्वैत, द्वैताद्वैत, द्वैत आदि के साम्प्रदायिक सिद्धान्तों के प्रवर्तक आचार्य दक्षिण भारत के रहे, अद्वैत वेदान्त के शिखर आचार्य शंकराचार्य केरल के थे सगुण वैष्णव भक्ति भगीरथी को सर्वजन-सुलभ शुचि शीतल सन्देश उत्तर भारत में प्रवाहित करने वाले श्री रामानन्दचार्य एवं कलिपावनावतार प्रेमधन लुटाने वाले श्री कृष्णचैतन्य महाप्रभु समाज के साधारण से साधारण व्यक्ति भक्ति की संजीवनी पहुँचाना उनकी मुख्य भूमिका रही है। **जाति पाँति पूछे न कोई, हरि को भजै सो हरि को होई।।**

श्री वैष्णव निष्ठा समुन्नायक, श्री राम की· पराशक्ति के प्रदर्शक वैष्णव समाज के गौरवभूत परम शास्त्रज्ञ विद्वान् श्री स्वामी श्री रामानन्दाचार्य जगद्‌गुरु पंचगंगापीठ के वह परमपुरुष, वह जागृत पुरुष जिसने सत्य ही राह पर चलते हुए, साधना की भट्टी में अपने को तपाकर कुन्दन की भाँति कीर्तिमान कर दिया है, सत्य के साक्षात्कार और परमतत्व के प्रकाश से अपने रोम रोम को आनन्दित कर लिया है। ऐसे जागृति पुरुष को ही हमारी संस्कृति ने सद्‌गुरु के नाम से श्री जगत्गुरु के नाम से विभूषित किया है ऐसे सत्‌गुरु के हृदय से ही करुणा की विशालधारा प्रवाहित होती है। समाज के दुःखदर्द तनाव चिन्ता को दूर करने के

---

श्रीमहांत, अखिल भारतीय चतु:सम्प्रदाय श्री चैतन्यकुटी, वृंदावन मथुरा, (उ.प्र.)

लिये इन समस्त गुणों को प्रकृति तत्वदर्शी तपस्वी, वीतराग महापुरुषों का चरित्र जीवन को महान बनाने की एक साथ प्रेरणा देता है। जीवन का मूल क्या है? किस हेतु से प्राप्त हुआ है? मानव जीवन और उसकी लक्ष्य की प्राप्ति कैसे हो सकती है? मानव में निहित अपार अलौकिक संभावनाओं क्षमताओं को कैसे प्रगट किया जा सकता है? महापुरुषों का जीवन स्वयं में एक समाधान होता है, इन सब जिज्ञासाओं को साधन पथ में जब जब विश्वास डगमगाने लगे निश्चय लड़खड़ाने लगें, संयम, संतोष, सहनशीलता की कसौटी पर साधना खरी नहीं उतर रही हो तब तक विशेष आवश्यकता है किसी अनुभव सिद्ध सन्त महापुरुष के जीवन दर्शन की त्याग, वैराग्य अन्यता, एकनिष्ठा, साधन पथ की परिपक्वता प्रभृति अध्यात्मिक प्रेरणाओं का एक अनूठा उदाहरण, अध्यात्म पथ के पथिकों, साधकों, ज्ञान पिपासुओं के लिए एक दिव्य आदर्श है।

अनन्तश्री विभूषित आचार्य जगत्गुरु स्वामी रामनरेशाचार्य जी महाराज के श्री चरणों में प्रथम मेरी ओर से शत-शत, सहस्त्र कोटि-कोटि दण्डवत् प्रणाम स्वीकार करें।

प्रेम के फूल, प्रार्थना के फूल, समर्पण के फूल, श्रद्धा के फूल उनके श्री चरणों में. समर्पित है। मैं क्या भेट करूँ, क्या पूजा करूँ, बस मेरा नम स्वीकार करें।

श्वाँस-श्वाँस से, रोम रोम से प्राणों के कण कण से यही प्रार्थना सदा- अनुभव करता हूँ कि आप सदा सुखी रहें, आनन्द में रहें, शतायु हो सदा भजन, साधन संस्कृति के लिए, सम्प्रदाय के लिये शरीर से स्वस्थ, भजनसाधन में मस्त, तन्दुरुस्त रहें। भटके हुओ को राह दिखायें, नास्तिकों को आस्तिक बनाएँ आप सच्चे सन्त, सच्चे सत्पुरुष, सच्चे महात्मा हैं। 'आप शतायु, चिरायु हों'।

*इति शुभ कामना के साथ।*

●

# ज.गु.रा. श्रीरामनरेशाचार्यजी महाराज : एक अद्वितीय व्यक्तित्व

**मोहनलाल वर्मा**

भारत राष्ट्र के इतिहास एवं समस्त धर्मशास्त्रों का सर्वसम्मत एवं निर्विवादित अकाट्य सत्य के रूप में स्वीकृत लोकमत यह है कि श्री रामभक्ति के उपासक एवं प्रेरणा पुरुष आद्य जगद्गुरु श्रीरामानन्दाचार्य जी महाराज का नाम, यश एवं कार्य उस अग्रिम पंक्ति में है जिन्होंने श्रीरामभक्ति का संदेश इस देश के सर्वसमाज को उन्हीं की भाषा में विस्तारित किया। इनसे पूर्व के काल में भगवत् भक्ति, साधना तथा स्वाध्याय विशिष्ट वर्ग तक ही सीमित था। जन-जन में श्रीरामभक्ति के माध्यम से 'जाति-पाति पूछै नहिं कोई। हरि को भजे सो हरि का होई।'' का जागृत मंत्र भारत की सामाजिक एवं सांस्कृतिक चेतना का वाहक बना। हमारी अपनी विरासत के प्रति प्रतिष्ठा का भाव देश के स्वाभिमान में अभिवृद्धि के लिए मजबूत आधार बना। जगद्गुरु श्री रामानन्दाचार्य महाराज के प्रधान द्वादश शिष्य **अनन्तानंद, कबीर, सुखा, सुरसुरा, पद्मावती, नरहरि, पीपा, भावानंद, रैदास, धन्ना, सैन, सुरसरि की घर हरि** के पद में भारतीय समाज के समस्त अंगों को वैष्णव सम्प्रदाय में दीक्षा एवं श्रीराम भक्ति का मंत्र आत्मसात करवाया। जगद्गुरु श्री रामानन्दाचार्य जी की पावनपीठ "श्रीमठ, पंचगंगाघाट, काशी ने अपना आध्यात्मिक, धार्मिक, सांस्कृतिक एवं सामाजिक संदेश इस देश की जन भाषा हिन्दी में दिया है, परिणामतः यह पावनपीठ आमजन के लिए आस्था एवं जागृति की प्रेरणा स्थली बनी।

अखिल भारतीय सेन भक्तिपीठ के संदर्भ में कहा जा सकता है कि संत सेनजी महाराज पर अन्य शिष्यों के समान आद्य जगद्गुरु श्रीरामानन्दाचार्य जी महाराज की विशेष कृपा दृष्टि रही, लेकिन इस दौर के बाद लगभग ७०० वर्षों तक भारत का सेन समाज अपने कुलगुरु संत सेनजी महाराज

महासचिव अखिल भारतीय सैन भक्तिपीठ, तीर्थराज पुष्कर (राज.)

की गुरुपीठ के अभाव में मुख्य रूप से श्रीरामानन्दाचार्य जी की प्रधानपीठ से अलगाव की स्थिति में रहा। इस छटपटाहट एवं सेन समाज की उदासीनता को वर्तमान आचार्य जगद्गुरु रामानन्दाचार्य श्री रामनरेशाचार्य जी महाराज ने पहचाना तथा १५ अप्रैल, १९९२ को उज्जैन महाकुम्भ पर्व के अवसर पर धर्मसम्मत विधि-विधान एवं मंत्रोच्चार के साथ जोधपुर (राजस्थान) के निर्मल बालब्रह्मचारी तपोनिष्ठ संत श्रद्धेय श्री अचलानन्द जी महाराज को आद्य कुलगुरु संत सेनजी महाराज की गुरुपीठ पर अपने कर-कमलों से अभिषिक्त किया। इस ऐतिहासिक क्षण में वर्तमानाचार्य जगद्गुरु श्रीरामनरेशाचार्यजी महाराज का विराट व्यक्तित्व आद्य जगद्गुरु श्री रामानन्दाचार्य जी महाराज के रूप में हम सबके समक्ष प्रकट हुआ। लगभग ढाई दशक से प्रत्यक्ष एवं अप्रत्यक्ष रूप से अखिल भारतीय सेन भक्तिपीठ को आप का मंगल सान्निध्य एवं आशीर्वाद प्राप्त है। प्रत्येक महाकुम्भ के अवसर पर प्रत्यक्ष स्नेह के साथ चरणवंदन का पुण्य प्राप्त होता रहा है। आपके आभामण्डल में सर्वसमाज के प्रति अपनापन, कल्याणभाव तथा सहज स्वीकृति दृष्टिगत होती है। आपकी आध्यात्मिक प्रखरता एवं रचनात्मकता हम सबको अभिभूत करने वाली है। आपकी ओजस्विता एवं तेजस्विता की सर्वत्र प्रतिष्ठा है। आपके चरणों में बैठा हर साधक एवं शिष्य को यह अनुभव होता है कि अन्यों की तुलना में गुरुदेव की मुझ पर ही विशेष कृपा है। समदृष्टि एवं विराट व्यक्तित्व के धनी आप सर्वसमाज के मध्य श्रद्धामय विभूति के रूप में मंगल सान्निध्य प्रदान कर रहे हैं।

जगद्गुरु रामानन्दाचार्य श्रीरामनरेशाचार्यजी महाराज के व्यक्तित्व में अटूट आस्था के साथ हर साधक को आद्य जगद्गुरु श्रीरामानन्दाचार्य का प्रतिरूप दृष्टिगत होता है। आपकी सरलवाणी, लोक व्यवहार में माधुर्य, दृष्टि में व्यापकता, निरंतर प्रवास, अनुशासित जीवनचर्या, ज्ञान सम्पन्नता तथा भारतीय जनमानस के आराध्य भगवान श्रीराम की भक्ति का विस्तार-प्रसार के अथक साधना से हम सब के मन मस्तिष्क में यह भरपूर विश्वास है कि आराध्य श्रीराम ने आपको आद्य जगद्गुरु श्रीरामानन्दाचार्यजी महाराज की ही सुदृढ़ श्रीराम भक्ति परम्परा को विभूषित एवं आलोकित करने हेतु ही इस पृथ्वी पर अवतरित किया है। हम तो निश्चित ही भाग्यशाली हैं कि हमें आपके श्रीचरणों में प्रत्यक्ष सान्निध्य प्राप्त है। आप के जीवनवृत्त का अवलोकन करने के उपरान्त मन में यह दृढ़ आस्था स्थापित हो गयी है कि आपका अवतरण ही उसी कार्य के लिए हुआ है जो आपके मन-वचन-कर्म से यहाँ हो रहा

है। आपका जीवन धर्म एवं कर्म हम जैसे सामान्यजन के लिये कौतूहल एवं कल्पना का विषय है। आप द्वारा किया जा रहा ईश्वरीय कार्य देश समाज के कल्याण के साथ-साथ भविष्य का निर्माण करने वाला है। भारत राष्ट्र की विरासत में यदि श्री रामभक्ति के प्रति चैतन्यता न हो तो फिर शेष ही क्या? आज की स्थिति में श्रीमठ, पंचगंगाघाट, काशी आराध्य भगवान श्रीराम की भक्ति का संदेश देने वाली पीठ के पीठाधीश्वर जगद्गुरु श्रीरामनरेशाचार्य जी महाराज भारत राष्ट्र के सर्वसमाज में समरसता का स्थापन करने वाले प्रकाश स्तम्भ हैं। पूरी दुनिया में श्रीराम भक्ति का संदेश आप के माध्यम से ही उद्घोषित हो रहा है। आपका विराट व्यक्तित्व देश की सम्पूर्ण सांस्कृतिक विरासत को समेटे हुये है। आपके व्यापक, व्यक्तित्व के विभिन्न पहलुओं को हर तरह से शब्दांकित करना असम्भव है। आपके जीवन की षष्ठिपूर्ति यात्रा ने आध्यात्मिकता को परखा है तथा रामानन्दाचार्य पद प्रतिष्ठा की रजत जयन्ती के दौर से आपकी अकाट्य आस्था, श्रीराम भक्ति के प्रति अटूट समर्पण तथा आचार्यत्व की प्रमाणिकता ने भारतराष्ट्र को गौरवान्वित किया है। सम्पूर्ण आध्यात्मिक जगत में आपकी पहचान है। संत समाज में विशिष्ट प्रतिष्ठा के साथ-साथ लोक जगत में आपके प्रति जन-जंन की विशेष श्रद्धा है। आमजन में यह अडिग आस्था है कि आप के मार्गदर्शन में ही श्रीमठ की आध्यात्मिक, सामाजिक, धार्मिक एवं पारस्परिक सद्भाव की संदेश यात्रा प्रवाहित होने वाली है। करोड़ों वैष्णवों की श्रद्धा श्रीमठ से जुड़ी हुयी है। आपश्री के सान्निध्य में उत्तरोत्तर यह चमक-दमक जन जन तक पहुँच रही है।

संस्कृत भाषा पर आधिकारिक ज्ञान से विभूषित आपका व्यक्तित्व हिन्दी भाषा की ज्ञान संपदा से मंडित है। दर्शनशास्त्र, योगदर्शन, समाजशास्त्र न्यायशास्त्र, सहित सतत स्वाध्याय को अनवरत बनाये रखना आपके स्वभाव में है। लोक व्यवहार को सद्चरित्रता प्रदान करने के विषय को सम्मुख रखकर प्रवचन के निमित्त पूरे देश में आपका प्रवास होता रहता है। बालपन में नामकरण श्रीकृष्ण शर्मा की जगद्गुरु रामानन्दाचार्य श्रीरामनरेशाचार्य जी महाराज तक यह प्रतिष्ठित एवं गौरवपूर्ण यात्रा संन्यास जीवन के अनेकानेक सम्मानजनक प्रतिमानों एवं प्रसंगों से मंडित है। संन्यासी जगत में आप की उल्लेखनीय पहचान एवं उपस्थिति है। जीवन की युवावस्था के प्रारम्भिक दौर में आप काशी एवं हरिद्वार के विभिन्न विद्यालयों, महाविद्यालयों एवं विश्वविद्यालयों में प्रतिष्ठित शिक्षक की भूमिका में रहे हैं। आप उद्भट वक्ता हैं तथा गूढ से

गूढ विषय को सहज उदाहरणों के माध्यम से आत्मसात करवा देते हैं। आप राष्ट्रीय विषयों पर भी अपनी पैनी नजर रखते हैं तथा राष्ट्रभाव से प्रेरित समाधान प्रस्तुत कर राष्ट्रधर्म की जनजन को प्रेरणा प्रदान करते आये हैं। पूरे देश में कई समुदायों के परिवार आपका आशीर्वाद प्राप्त कर रहे हैं। रामानंदपीठ की परम्परा के अनुसरण में धर्म, जाति, सम्प्रदाय, आस्था तथा विश्वास की दृष्टि से किसी भी तरह के भेदभाव को स्थान नहीं मिलता है।

जगद्‌गुरु रामानन्दाचार्य श्रीरामनरेशाचार्य जी महाराज की षष्टिपूर्ति तथा पदाभिषेक की रजत जयन्ती समारोह के ऐतिहासिक अवसर पर हम श्रद्धावनतभाव से आपके त्यागमय जीवन का चरणवंदन करते हैं। आाप की सुकीर्ति और स्वास्थ्य के लिए परमप्रभु श्रीराम से प्रार्थना करते हुए चरणों में पुनः प्रणाम निवेदित करता हूँ।

●

# फिर धन्ना-रैदास चाहिए

**के.एन. गोविन्दाचार्य**

भारत में घर की माता, धरती माता और गौ माता, तीनों एक दूसरे का पूरक बनकर परस्पर संपोषण करते हुए सृष्टि के अखंड चक्र को हमेशा संचालित किए रहती हैं, ऐसा केवल भारत भूमि पर संभव होता है। इसलिए भारत भूमि कर्मभूमि, मोक्षभूमि मानी जाती है, बाकी भूमि तो भोगभूमि है। भारत में आंतरिक परिमार्जन का काम समय-समय पर होता रहा है। देश में जब फल के उद्देश्य को ध्यान में रखकर कर्मकाण्ड बहुत बढ़ गया, तब भारत की मिट्टी में ही पैदा हुए महात्मा बुद्ध। उस समय की आवश्यकता अनुसार उन्होंने समाज में संगठन को सुधार कर कुछ और रूप दिया। फिर वे शून्यवाद की तरफ गए। कुछ समय के बाद जब पेंडुलम दूसरी तरफ खसकने लगता है, तब पैदा होते हैं कोई आचार्य कुमारिल, पैदा होते हैं आचार्य आदि शंकर। परिमार्जन की भारत की अपनी कहानी है। जब कुमारिल अपनी छोटी-सी भूल का पश्चाताप करने के लिए भूसे की चिता पर आत्मदाह के लिए बैठ चुके हैं, तब उन्हें बचाने के लिए दूर से दौड़े हुए आते हैं आदि शंकर, तब कुमारिल कहते हैं, आओ-आओ, बौद्ध शिशु। आओ स्वागत है। तुम प्रच्छन्न बौद्ध हो। यज्ञ संस्कृति को पुनर्प्रतिष्ठित करने वाले आचार्य कुमारिल यह आरोप लगाते हैं। आदि शंकराचार्य पर दायित्व है, भारत को 'यू टर्न' देना तो है, लेकिन लंबा मार्ग लेकर यू टर्न लेना है। अचानक यू टर्न लें, तो गाड़ी के पलटने का खतरा है। समाज के टूटने का खतरा है। आचार्य कुमारिल पर भी दायित्व था और आदि शंकर पर भी। आदि शंकर ने जो सब किया, वह भारत के ही आंतरिक परिमार्जन का इंतजाम था।

---

जयपुर में प्रति वर्ष आयोजित होने वाले जतगद्गुरु स्वामी रामानन्दाचार्य के प्राकट्योत्सव पर आयोजित व्याख्यान सत्र को २०१२ ई. में विख्यात विचारक के.एन. गोविन्दाचार्य ने सम्बोधित किया। उन्होंने अपने मौलिक व्याख्यान में भारत की स्वाभाविक विलक्षणता, रामानन्द की प्रासंगिकता तथा उनके महत्त्वपूर्ण योगदान पर विस्तार से प्रकाश डाला है। —संपादक

भारत में आंतरिक परिमार्जन की शृंखला सहस्त्राब्दियों से चलती रही है। पुष्यमित्र आदि अनेक आचार्य इसी परम्परा की देन हैं। इसी ऋषि परम्परा में रामानन्द आते हैं। जब राष्ट्र में आत्मसम्मान ही गिरवी रख दिया गया हो, जब बिना प्रतिरोध के ही धर्म परिवर्तन हो रहा हो, जहाँ नारी का सम्मान सुरक्षित न हो, जहाँ गौ की रक्षा न हो। जब समझदार वर्ग कर्मकाण्ड में उलझ गया हो, उस समय रामानन्द जी ने हस्तक्षेप किया। उन्हीं का यह वाक्य बार-बार आता है, 'जाति-पाँति पूछे नहिं कोई, हरि को भजे सो हरि का होई।' छोटी-सी बात बताकर वृहत् परिवर्तन। सभी ठीक हैं, सभी पवित्र हैं, सभी में भगवान् का वास है, केवल दशरथ के बेटे राम, दशरथ के बेटे के नाते वहाँ की 'ऑनरशिप' की संपत्ति नहीं हैं, घट-घट में राम हैं और जिसमें जितना राम हो, वह उतना बड़ा है। जिसने राम को कमीज में जितना ढककर रखा है, वह उतना गिरा है, भले ही सिंहासन पर बैठा हो तो क्या, भले ही आढ़त पर बैठा हो तो क्या? उनसे तो अच्छा 'मन चंगा तो कठौती में गंगा' कहने वाला रैदास होगा।

यह उस समय का तकाजा था भारत में समाज के परिमार्जन का। उस समय में उसी परम्परा का अवतार हुआ रामानन्द के रूप में। उनके बाद क्या-क्या होता है यह देखिए। यहीं तुकाराम, नामदेव की परम्परा, फिर यहीं रामदास के द्वारा १०८ हनुमान मंदिरों की परंपरा, अखाड़ों की आवश्यकता। जब आप इसको देखेंगे, तो रामानंद जी के भंडारे की कल्पना और उसकी सार्थकता समझ में आएगी। वहीं बाद के समय में समाज के परिमार्जन के लिए ही गुरुद्वारों की स्थापना होती है, वहाँ गुरुग्रंथ साहब को रखा जाता है। गुरुद्वारों में दरवाजे नहीं हैं, खुला ही खुला है, सब यहाँ आ सकते हैं। और किसी एक के ही क्यों, यहाँ जो ग्रंथ हैं, उनमें सबके वचन हैं, भारत की विशिष्ट परम्परा उसमें समाहित है, इसलिए गुरुग्रंथ साहब का विशिष्ट महत्व है। उस समय की आवश्यकता अनुसार गुरु गोविन्द सिंह अन्य चीजों को जोड़ते हैं, आखाड़े, पंच ककार, खालसा, अमृत, सबका साथ में काम करना और लंगर। उसी का विस्तार है जो रामानन्द जी ने शुरू किया। उसे रामदास जी ने आगे बढ़ाया। रामानन्दी परम्परा बढ़ी। वैरागी परंपरा खड़ी हुई। वही आगे खालसा पंथ के रूप में बढ़ी। जादू वो जो सिर पर चढ़कर बोले।

रामानंद जी ने उस समय समाज की आवश्यकता को समझकर उसकी परम्परा को ठीक रखा। उन्होंने कहा, शैवों और वैष्णवों का झगड़ा क्यों

करते हो? चलो शिव का स्थान काशी है, तो मैं यहाँ रहता हूँ। तो काशी में केवल शैव परम्परा नहीं है, वैष्णव परंपरा भी है। दोनों के बीच जो भी संघर्ष की स्थितियाँ थीं, उनके बीच समन्वय करना, बराबरी के स्तर पर किसी को नीच भाव महसूस न हो। समाज में सबको साथ लेकर चलने का प्रयत्न जैसे संभव हुआ, वैसे ही सगुण और निर्गुण की बात है, अनंतानंद के साथ-साथ कबीर की परम्परा, रैदास की भी परम्परा चली।

भारत की सामाजिक, धार्मिक एकता में रामानन्द की महत्त्वपूर्ण देन है। रामानन्द न होते, तो समाज बँटता, बिखरता, आपस में लड़ता और फायदा विदेशियों को होता। आत्मसम्मान व आत्मविश्वास घटता चला जाता। इसलिए रामानन्द जी का अवतरण स्वाभाविक और अवश्यंभावी था। किसी मरीज को कितने 'डोज' की 'पोटेंसी' चाहिए, कुशल डॉक्टर उतनी ही पोटेंसी की दवा देता है, इसी तरह से आज से लगभग ७१५ वर्ष पहले जिस ताकत की जरूरत थी, उसी हिसाब से परमात्मा ने, प्रकृति ने भारत को रामानन्द के रूप में शक्ति प्रदान की।

हम आज जो दृश्य देखते हैं, उसमें फिर जरूरत हैं पीपा, धन्ना, रैदास की। एकता ऋषि परंपरा के आधार पर ही हो सकती है। राज सिंहासन की परम्परा से नहीं हो सकती। भारत की तासीर का तकाजा है कि धर्म ही यहाँ का प्राण है। ऋषि परम्परा और संत परम्परा का महत्व है। आप चले जाइए पंचगंगा घाट पर (काशी) कैसा साधारण स्थान है, लेकिन कितनी अनमोल थाती है रामानन्द की। कार्य के हिसाब से उसका विस्तार होना आवश्यक है। उसका प्रभुत्व बढ़ना आवश्यक है। ऋषि परम्परा बढ़े और वह देश का आधार बने। इसकी आवश्यकता आ पड़ी है, आज राज सिंहासनों से आशा-अपेक्षा रखना ही कठिन हो गया है। **रामानन्द ने सिखाया है कि सुपरिणाम साधनों से नहीं, साधना से मिलते हैं।** साधन काम नहीं आएंगे, साधना ही काम आएगी। यह भारत की थाती है, इसे पहचान कर आगे बढ़ना आवश्यक है। रामानन्द होते, तो हमको वही संदेश फिर देते कि भागवत परम्परा में लाओ धन्ना को, लाओ रैदास को, लाओ पीपा को। सभी का ठीक-ठीक चेहरा दिखना चाहिए। सम्पूर्ण समाज को एक जुट होकर अपने ऊपर आसन्न संकटों से जूझना चाहिए, उसमें सभी का अपनापा होना चाहिए। यही भारतीय समाज की आंतरिक परिमार्जन की नैसर्गिक परम्परा है।

आंतरिक परिमार्जन के लिए पुनः परिवेश तैयार करने की जरूरत है।

आपने गौर किया होगा कि रामजन्म भूमि आंदोलन बाद में हुआ। रामानन्द सागर के रामायण की सीडियाँ पहले आईं, आडवाणी, कल्याण सिंह बाद में दिखे, बी.आर. चोपड़ा का महाभारत पहले आया, चंद्रप्रकाश द्विवेदी का चाणक्य पहले आया। हमेशा धर्म, ऋषि परम्परा, आर्ष परम्परा ही नेतृत्व और दिशा देती हैं। जमीन पर युद्ध बाद में लड़ा जाता है, जीवन में पहले लड़ा जाता है। गीता उपदेश पहले होता है, महाभारत बाद में लड़ा जाता है। आज रामानन्द के विचारों को जन-जन तक, स्कूलों के बच्चों तक पहुँचाने की जरूरत है।

●

# स्वामीरामनरेशाचार्यजी महाराज को जैसा देखा-समझा

देवव्रत चौबे

श्रीमठ जगद्गुरु स्वामी रामानन्दाचार्य की तपस्थली है। इस पीठ की भूमिका समाज के समग्र निर्माण में महत्त्वपूर्ण रही है। पीठ के वर्तमान पीठासीन तेजस्वी एवं यशस्वी संत श्री रामनरेशाचार्य जी महाराज के बारे में कुछ कहना-लिखना मेरे लिए कठिन जान पड़ता है। इसका कारण यह है कि महाराज जी का जीवन इतना सहज, सरल एवं पहाड़ी झरने की तरह पारदर्शी है कि जिसमें दिखायी तो बहुत कुछ देता है लेकिन कुछ लिखने का साहस नहीं होता क्योंकि तुलसीदास के शब्दों में– "संत हृदय नवनीत समाना।" फिर भी उनके बारे में कुछ कहना-लिखना आवश्यक भी जान पड़ता है। यदि कुछ न कहूँ, न लिखूँ तो अनुपस्थिति के पाप के बोध से घिरा महसूस करूँगा। इसलिए अपनी समझ के अनुसार कुछ बातें प्रबुद्ध एवं सामान्य पाठकों के सामने प्रस्तुत करना चाहता हूँ।

स्वामी जी का पहला दर्शन मुझे सन् १९९२ में श्रीमठ में हुआ। मेरे साथ मित्र डॉ. झिनकू यादव भी थे। डॉ. यादव 'संस्कृति संधान' नामक शोध-पत्रिका के संपादक तथा एक संस्थान के निदेशक हैं। आचार्य श्री के बारे में हमलोग सुन चुके थे कि वे बड़े ही उदार संत हैं। डॉ. यादव ने आप से शोध-पत्रिका के प्रकाशन के लिए सहायता माँगी। महाराजश्री ने उन्हें यथासंभव सहायंता दी। आचार्यश्री के कर कमलों द्वारा पत्रिका का लोकार्पण भी हुआ। उन्होंने उस अवसर पर जो आशीर्वाद दिया उसका मुझ पर गहरा प्रभाव पड़ा। मुझे लगा, ये ऐसे तेजस्वी संत हैं, जो मेरे ही नहीं बल्कि सम्पूर्ण समाज के जीवन को मंगलमय बना सकते हैं। उनके आशीर्वाद का यह अंश मुझे सबसे प्रभावी लगा कि यदि संसार में अपना कोई सम्बंधी है तो केवल राम हैं क्योंकि राम हर तरह के नेह और नाते निभाते हैं।

आचार्य श्री से जुड़ाव यहीं से प्रारम्भ होता है। चूँकि उनके आराध्य राम हैं इसलिए वे भी राम की तरह नाते जोड़ते चलते हैं। और एक बार यदि नाता जुड़ा तो फिर टूटने का प्रश्न ही नहीं क्योंकि रामभक्ति रिश्ता को अटूट बनाती है, घना

---

प्रो., दर्शन एवं धर्म विभाग, काशी हिन्दू विश्वविद्यालय, वाराणसी

बनाती है। महाराजश्री की मेधा शक्ति इतनी तीव्र है कि एक बार परिचय हो जाने पर फिर भूलने का प्रश्न ही नहीं। नाम लेकर पुकारते हैं। मैं अपना जीवन धन्य समझता हूँ कि स्वामी जी महाराज का प्रत्यक्ष सत्संग एवं आश्रय मुझे मिल रहा है।

स्वामी रामनरेशाचार्य जी प्राचीन विद्या के प्रकाण्ड पंडित हैं। न्यायशास्त्र के विलक्षण विद्वान् हैं। विद्या के प्रति स्वामी जी का इतना लगाव है कि प्रत्येक वर्ष प्राचीन विद्या के विद्वान अथवा भक्ति साहित्य के किसी एक विद्वान को महाराज श्री के द्वारा विशेष सम्मान प्राप्त होता है। विद्या प्रेमी आप के यहाँ सुख का अनुभव करते हैं। उन लोगों के लिए आप का द्वार सर्वदा खुला रहता है। प्राचीन विद्या में रुचि रखने वाले छात्रों के लिए आप के यहाँ विशेष व्यवस्था है।

आचार्य जी के यहाँ समय-समय पर प्रति वर्ष विद्वत् एवं सत्संग संगोष्ठियाँ होती रहती हैं। इस अकादमिक व्यवस्था को महाराज श्री के अत्यन्त प्रिय डॉ. उदयप्रताप सिंह देखते हैं। डॉ. सिंह से मेरा सम्बंध विद्यार्थी जीवन से ही रहा है। हम दोनों विद्यार्थी परिषद् में साथ-साथ कार्य करते रहे हैं। डॉ. सिंह कहते हैं कि यदि कोई संगोष्ठी होने को होती है तो आचार्य श्री कहते हैं कि आपने अमुक-अमुक विद्वानों से संपर्क किया? यदि न किए हों तो कर लीजिए। मेरी ऐसी सोच है कि श्रीमठ की संगोष्ठियों से कई नए विचार आते हैं जो समाज के लिए हितप्रद होते हैं। संभवत: इसी कारण स्वामी जी के यहाँ ऐसा आयोजन होता है। विश्वविद्यालयों द्वारा आयोजित संगोष्ठियाँ केवल कोरम पूरा करती हैं।

स्वामी रामनरेशाचार्य जी उच्चकोटि के केवल संत एवं विद्वान् ही नहीं हैं अपितु कथावाचक भी हैं। आप की कथाशैली परम्परा को लेकर चलती है। हिन्दी के उद्भट आलोचक आचार्य रामचन्द्र शुक्ल को यह कचोट हमेशा बनी रही कि वे कथावाचक नहीं बन पाए। महामना मालवीय विलक्षण कथावाचक थे। स्वामी अखण्डानन्द सरस्वती अपने कथा प्रवचन के लिए विख्यात थे। कथा प्रवचन की यह परम्परा धीरे-धीरे लुप्त होती जा रही है। नए कलेवर में नया रूप लेकर आ रही है जिसका विद्वता से कोई लेना देना ही नहीं है। स्वामी जी महाराज जैसे इने-गिने संतों द्वारा ही कथा प्रवचन की पुरानी परम्परा बचायी जा सकती है।

यहाँ पर यह स्पष्ट करना आवश्यक जान पड़ता है कि यदि मैं स्वामी जी के सान्निध्य में नहीं आया होता तो आचार्य रामानुज के दर्शन तक ही सिमटा रह जाता। आचार्य रामानन्द की उस धारा से वंचित रह जाता जिसने रामभक्ति के द्वारा समाज और राष्ट्र को एकसूत्र में बाँधने के लिए परम्परा को उदार और सहज बनाया। मुझे ऐसा प्रतीत होता है कि इस परम्परा की व्यावहारिक उदारता एवं

विकासोन्मुख मूल्यों से प्रभावित होकर ही स्वामी रामनरेशाचार्य जी ने अपने को इससे जोड़ा होगा।

स्वामी रामानन्दाचार्य जी के मूल आदर्शों का प्रत्यक्ष दर्शन भी रामनरेशाचार्य जी के जीवन में देखने को मिलता है। वे एक प्रखर चिन्तक एवं लोकोन्मुखी धर्म के प्रवक्ता हैं। जिन लोगों का सम्बंध स्वामी जी से है उन सभी लोगों का अपना अनुभव है कि महाराज श्री के यहाँ जाति-पाँति, ऊँच-नीच, अमीर-गरीब, छोटा-बड़ा का कोई भेद नहीं है। उनके संपर्क में जो आया वह बुरा से अच्छा बन गया।

स्वामी रामनरेशाचार्य जी महाराज रामभक्ति की नींव पर एक शक्तिशाली, समृद्ध एवं वैभव संपन्न राष्ट्र बनाने के लिए सम्पूर्ण भारत के कोने-कोने में यात्रा कर अपने उदात्त व्याख्यानों एवं नाना प्रकार की आध्यात्मिक गतिविधियों द्वारा शिष्यों की लम्बी परम्परा के साथ संलग्न हैं। उनका कहना है कि समाज में सहयोग की भावना रामभक्ति द्वारा ही संभव है। इसलिए उनकी राष्ट्रनिर्माण की यात्रा तब तक चलती रहेगी जब तक धर्मराज्य नहीं आ जाएगा। उनकी अभिलाषा है कि राम से केवल भारतवासी ही नहीं, समस्त विश्व जुड़ जाय। क्योंकि राम के यहाँ पराए पन के लिए कोई स्थान नहीं है।

स्वामी रामानन्दाचार्य जी ने जिस प्रकार रामभक्ति के द्वारा बिखरे हुए समाज को एकता के सूत्र में बाँधा उसी प्रकार उनके ही पीठ पर आसीन दैवी सम्पदा के विग्रह स्वामी रामनरेशाचार्य जी महाराज भारत की सनातन अस्मिता को बचाने के लिए भक्ति-पथ पर समाज को ले जाना चाहते हैं। भक्ति में ही केवल अँजोर है ऐसा उनका मानना है। रामकृष्ण परमहंस को भी भक्ति में ही आस्था थी। इसलिए उस समय के अनेक प्रख्यात शास्त्रवेत्ता मनीषी पोथी भार को उतारकर उनकी ही राह पर चल पड़े। कुछ ऐसी ही घटना रामनरेशाचार्य जी महाराज के साथ भी देखने को मिलती है। बड़े-बड़े पंडित स्वामी जी की राह को ही सबके लिए सुगम और सहज मानते हैं। इसलिए उनके ही अभियान से जुड़कर अपने-अपने क्षेत्रों में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभा रहे हैं। अंत में, हम यह कह सकते हैं कि रामभक्ति की ओर प्रवृत्ति ही मनुष्य जाति के लिए मंगलकारी एवं प्रीतिकर है जिसका वर्तमान महत्त्वपूर्ण केन्द्र श्रीमठ है।

●

# बहुआयामी प्रतिभा के धनी : स्वामीरामनरेशाचार्यजी महाराज

सेनाचार्य अचलानन्दजी

सरवर, तरवर, संतजन, चौथा बरसत मेह।
परमारथ के कारने, (आ) च्यारां धारी देह।।

राजस्थानी लोकसाहित्य का यह प्रसिद्ध दोहा अनायास ही समुद्र, वृक्ष, संत एवं वर्षा के पारमार्थिक स्वरूप का सम्यक ज्ञान करवाते हुए सांसारिकों को प्रेरणा देता है कि हमारे संतों ने लोक के लिए अनन्य उपकार किए हैं। संत परम्परा में भी रामानंद परंपरा के संतों का अपना अलग योगदान सामाजिक सुधारों एवं आचरण की पवित्रता के प्रति रहा है। मध्यकालीन भारतीय परिवेश में जब हमारा हिंदू समाज अपने भीतर की अनेकानेक कुरीतियों, विसंगतियों एवं विकारों से ग्रसित होकर विनाश के कगार पर आ पहुँचा था, उसे भीतरी शक्ति का आभास करवाकर पुन: प्राणवंत करने का कार्य रामानंदजी एवं उनकी शिष्य परंपरा ने किया। जहाँ ज्ञान-विज्ञान, शास्त्र एवं उपदेश की भाषा संस्कृत के मोह को छोड़कर इस परंपरा के संतों ने लोक की भाषा हिंदी को अपने उपदेश का आधार बनाया तथा लोक की वाणी में लोक के हित की बात को कहना शुरू किया। न केवल कहना शुरु किया वरन स्वयं अपने जीवन में आचरण करके लोगों के सामने उदाहरण प्रस्तुत किया। इस कड़ी में कबीर, रैदास, पीपा, सेन, धन्ना, सुरसरि, पद्मावती आदि ऐसे रामानंदी शिष्य थे, जो अपनी सपाट एवं सकारात्मक बयानी के चलते महान संत के साथ-साथ महाकवि के परम विरुद को प्राप्त करने में सफल हुए।

"जाति-पाँति पूछे नहीं कोई। हरि को भजे सो हरि का होई।।" जैसी शोधमयी जीवन के समग्र सार वाली अकाट्य एवं तार्किक बातों को समाज के सामने सप्रमाण प्रस्तुत करने वाले ये महापुरुष व्यष्टि की बजाय समष्टि के उद्धार का चिंतन करते रहे। भक्ति के माध्यम से सामाजिक समरसता, सौहार्द एवं

पीठाधीश्वर अखिल भारतीय सैन भक्तिपीठ, जोधपुर

स्वातंत्र्यभाव की न्यायोचित जीवनदृष्टि का उपहार भारतीय समाज को इन संतों की विशिष्ट देन है। तत्कालीन समय में तथाकथित रूप से निम्न जातियों में जन्म लेने वाले इन महापुरुषों ने अपने आचरण एवं अपने विचारों से समाज को न केवल प्रभावित किया वरना सार्थक जीवन जीने के लिए प्रेरित भी किया। पढ़े-लिखे नहीं होने के बावजूद इन्होंने अपनी चिंतना से लोगों को वह सब कुछ दिया, जो बहुत से पढ़े-लिखे सोच ही नहीं सकते। आज असंख्य पढ़े-लिखे लोग इन अनपढ़ संतों की लिखी वाणियों पर शोधग्रंथ लिख रहे हैं और जब-जब समीक्षाएँ होती हैं तब-तब ये संत एवं उनकी एक-एक वाणी प्रासंगिक तथा न्यायोचित सिद्ध होती है।

श्रीरामानंदाचार्य पीठ के वर्तमान पीठाधीश्वर जगद्गुरु रामानंदाचार्य श्री रामनरेशाचार्यजी महाराज रामानंदी संत परंपरा के देदिप्यमान नक्षत्र हैं। आपका सहज, शालीन, शांत एवं सेवाभावी व्यक्तित्व, सतत स्वाध्याय वृत्ति, विवेकी व्यवहार दृष्टि, एकनिष्ठ भक्तिभावना, गुरुगंभीर वाणी, आपकी लोक एवं जीवन के प्रति व्यावहारिक धारणा आदि ऐसे विषय हैं, जिनके कारण आप संत समाज एवं सामान्य जनमानस में समादरणीय एवं परम पूज्य हैं। ११ जनवरी, १९८८ को रामानंद जयन्ती के शुभ अवसर पर आपश्री का रामानंदाचार्य पीठ पर पदाभिषेक हुआ, उसके बाद भी आपका स्वाध्याय एवं प्रवचन अनवरत जारी है। आपके इन प्रवचनों से असंख्य लोग लाभान्वित होते हैं, जिनमें संन्यायी, वैष्णव तथा सद्गृहस्थ सभी सम्मिलित हैं। अनेक संत अपनी जिज्ञासाओं को शांत करने हेतु आपके प्रवचन सुनने को लालायित रहते हैं। आपका स्वाध्याय सतत होने के कारण आपका शास्त्र एवं लोक दोनों क्षेत्रों का गहन ज्ञान आपके प्रवचनों को और अधिक वरेण्य बनाता है। सिद्धांत एवं व्यवहार दोनों का सम्यक् ज्ञान होने के कारण आपके उपदेशजीवन जीने की कला सिखाने वाले लगते हैं। आपश्री के चरणों में मुझ (अचलानंदगिरि) जैसे अनेक संतशिष्य नत्त-मस्तक होकर अपना जीवन धन्य करते हैं। मैं अपने आपको सौभाग्यशाली मानता हूँ कि मुझे आप जैसे तेजस्वी एवं भगवद्कृपा प्राप्त गुरु का शिष्य होने का गौरव मिला है। आपके जीवन, आपके आचरण, आपकी वाणी, आपके विचार एवं आपके दैनन्दिन व्यवहार से हमें प्रतिपल प्रेरणा मिलती है। एतदर्थ आपके प्रति कोटि-कोटि वंदन।

मूलत: बिहार प्रांत के भोजपुर जिले के 'परसिया' ग्राम में अयाचक ब्राह्मण वंश में आपका जन्म हुआ। आपके बचपन का नाम 'श्रीकृष्ण शर्मा' था। अध्ययन के प्रति आपकी रुचि बचपन से ही गहन रही। आपके पिताश्री पं. जगन्नाथ शर्मा

सद्गृहस्थ थे। आपने अपनी प्रारंभिक शिक्षा घर पर ही पूर्ण की। इस दौरान आपने इतिहास, राजनीति विज्ञान, अर्थशास्त्र आदि के ग्रंथों का भी अध्ययन किया। अनेक महापुरुषों की जीवनियों को पढ़कर उनसे प्रेरणा लेते हुए आपके मन में कुछ नया करने की ललक पैदा हुई। 'जहाँ चाह वहाँ राह' की कहावत सार्थक हुई और आपकी मनोकामना ने वांछित मार्ग पर बढ़ने का मौका प्राप्त कर लिया। १६ वर्ष की उम्र में आप संत निवासाध्यक्ष महन्त रघुवर गोपालदासजी के संपर्क में आए। उनके व्याकरण, न्याय, वेदांत एवं मीमांसा के प्रखर एवं प्रामाणिक ज्ञान से आप अत्यंत प्रभावित हुए। महन्त गोपालदासजी ओजस्वी वक्ता, प्रकांड पंडित, शास्त्रों के अद्‌भुत ज्ञाता, सदुपदेशक, सदाचारी एवं साधुता सम्पन्न संत थे अत: उनके प्रति जिज्ञासु श्रीकृष्ण शर्मा का आकृष्ट होना स्वाभाविक था। १६ वर्ष की किशोर वय में श्रीकृष्ण शर्मा अपनी भीतरी प्रेरणा से महंत रघुवर गोपालदासजी से वैष्णवी दीक्षा लेकर रामनरेशदास बने। १९ दिसम्बर, १९६८ का वह दिन श्रीकृष्ण शर्मा के लिए तो भगवद्कृपा वाला था ही मानव समाज के लिए भी हितकर था, जिस दिन ने रामनरेशदास जैसे महान व्यक्तित्व को परहित के आदर्श मार्ग पर प्रवृत्त किया। वही जिज्ञासु किशोर अपनी अध्ययनवृत्ति तथा महनीय मेधा के बल पर आज संपूर्ण संत एवं वैष्णव समाज के साथ-साथ सद्गृहस्थों के लिए अनुकरणीय एवं आदरणीय बनकर सबको अपने कृपाप्रसाद से निहाल कर रहा है।

अध्ययन के प्रति आपकी गहरी रुचि सदैव बनी रही है। आपने संस्कृत, न्याय, दर्शन आदि का गहन अध्ययन एवं ज्ञान प्राप्त करने के लिए अपने दीक्षा गुरु से तो मार्गदर्शन लिया ही, साथ-साथ विश्वविद्यालय स्तरीय परीक्षाओं में भी प्रविष्ट हुए तथा १९८१ में सम्पूर्णानंद संस्कृत विश्वविद्यालय से न्यायाचार्य की उपाधि प्रथम श्रेणी से प्राप्त की। इसके बाद आपने वाराणसी में दशनाम संन्यासाश्रम में बीस वैष्णव-संन्यासी स्वतंत्र अध्येताओं को न्यायशास्त्रीय चिंतन धारा का अध्ययन प्रारंभ करवाया। संत संप्रदायों के बीच फैलती वैमनस्य एवं बड़े-छोटे भावों को प्रीतिकर करते हुए आपने सबमें सौहार्द बढ़ाने का महत्त्वपूर्ण कार्य किया। आपने अपनी प्रतिभा के बल पर कम समय में अत्यधिक ख्याति अर्जित की लेकिन आप में किसी प्रकार के अहंकार का बीज जन्म नहीं ले पाया, जो कि साक्षात ईशकृपा का संकेत है। आपने सदैव सबके कल्याण का चिंतन किया है तथा सबको यही प्रेरणा देते रहते हैं लेकिन आपके जीवन में कुछ क्षण ऐसे भी आए जब 'होम करते हाथ जलने' वाली बात हुई। लेकिन आपश्री ने

अपने धैर्य एवं विवेकसम्मत व्यवहार के बल पर अपनी श्रेष्ठता को सदैव बनाए रखा है।

आप जैसे निस्वार्थी, ईशचरणानुरागी, मानवीय करुणा के आगार, सद्भावी एवं साहित्यानुरागी गुरुओं के चरणों में जीवन का असली आनंद मिलता है। देवकृपा से आपका आशीर्वाद मुझे मिलता रहा है तथा मिलता रहेगा, ऐसी प्रतीति है। हिंदूधर्म, साधु-संत संप्रदाय एवं सम्पूर्ण मानव समाज के लिए आप जैसे संतों का पाथेय वरदान सिद्ध होता है। भारतीय संस्कृति, संस्कार, पावन परम्पराएँ, श्रद्धा एवं सम्मान के भावों को बचाए एवं बनाए रखने के लिए आपश्री सदृश संतों का होना अतीव आवश्यक प्रतीत होता है। जगद्गुरु रामानंदाचार्य पीठाधीश्वर के रूप में आपकी लंबी यात्रा अत्यंत प्रेरणास्पद है। आप द्वारा समय समय पर की जाने वाली प्रेरक यात्राएँ, आपके सदुपदेश, आपका आचार-विचार हमारे लिए मार्गदर्शन का कार्य करते हैं, कृपया अपनी कृपादृष्टि हम पर बनाए रखें। पुनश्च. आपके श्रीचरणों में शत-शत नमन।

●

# रामानन्दसम्प्रदाय की चुनौतियाँ और वर्तमान आचार्य

जयकान्त शर्मा

अपने सुदृढ़ श्रौत आधार एवं उदार मानवतावादी चिन्तन के कारण रामानन्दीय श्रीसम्प्रदाय की समाज में व्यापक स्थापना हुई, इसकी रामभक्तिकल्पलता ने न केवल अनाश्रितों को आश्रय दिया वरन् सम्पूर्ण मानवता को जीवन दिया तथा विघटित हो रहे समाज के सभी वर्गों को सहेज कर रखा। सबका कण्ठाभरण बना इसका प्रसादरूप मानस आज भी समाज का मार्गदर्शन तथा आत्मसन्तर्पण कर रहा है। किन्तु अनुदिन विकसित हो रहे इस सम्प्रदाय के सामने अनेक चुनौतियाँ भी हैं। यद्यपि 'पढ़व लिखव पण्डित के काम, भज ले साधू सीताराम' को एकबार लक्ष्योन्मुखता के लिए अर्थवाद मान सकते हैं किन्तु यह भी सत्य है कि कैसी भी समृद्ध आध्यात्मिक परम्परा हो, वहाँ के साधकों में अपने दार्शनिक सिद्धान्त, साधनाक्रम एवं आचार्योपदिष्ट शास्त्रीय प्रविधि का व्यवस्थित प्रबोध न हो तो उसका सुदृढ़ एवं गतिशील रहना कठिन हो जाता है। अन्त:अनुशासन के अभाव में सम्प्रदाय की दिव्यता से समाज का दिग्दर्शन तो दूर, साधक अपने स्वरूप को भूलकर उच्छृंखल हो सम्प्रदाय के गौरव तक को नष्ट कर देते हैं। वहाँ अनधिकृत मुखर तथा नासमझ संयोजक बनने लगते हैं, रक्षार्थ नियुक्त असहिष्णु एवं मदान्ध होकर प्रतिभा का अनादर करने लगते हैं। समर्थ सन्त सम्प्रदायाचार्यों के निर्माणयन्त्र बन जाते हैं। एक सन्त अपने ही सम्प्रदाय की दशा पर व्यङ्ग्य करते हुए कह रहे थे– 'भगवान् के तो चौबीस अवतार हुए, चौबीस आचार्यों तक तो कोई दिक्कत नहीं है, इससे अधिक होने पर विचार करेंगे।' अब सम्भूयोत्थान जैसी सामरस्य की बात कौन करे? प्रबुद्ध साधुसमाज अपनी प्रशस्त एवं तेजस्वी सम्प्रदाय की स्वरूपरक्षा के साथ आध्यात्मिक उत्कर्ष की चिन्ता करता है। वह इस प्रकार शास्त्रानुशासन एवं मर्यादा को मरने नहीं देता और न ही साम्प्रदायिक ताने बाने को शिथिल होने देता है। यह चिन्तनीय बात है कि सम्प्रदायानुरूप गरिमा एवं उत्कर्ष के लिये प्रयत्नशील सन्तों की संख्या कम

प्रो. श्रीलालबहादुरशास्त्री राष्ट्रिय संस्कृत विद्यापीठ, नई दिल्ली-११००१६

होती जा रही है। संभव है, सम्प्रदाय में कुछ ऐसे भी सन्त हों, जिन्होंने अपने दीर्घ वैराग्यजीवन में अनेक बार वाराणसी स्टेशन तक आकर भी अपने मूल आचार्यपीठ के दर्शन तक नहीं किये हों, जबकि इसी पीठ ने उन्हें पञ्च संस्कार, विरक्तवेष तथा उपास्य-उपासना का प्रबोध दिया है।

राम सबसे बड़ी ऊँचाई का नाम है, उनका होने या उनसे जुड़ने पर हम स्वत: बड़े हो जाते हैं। किन्तु याद रहे, बड़प्पन दायित्व लाता है अत: बड़े भक्तों को बड़े मन से बड़प्पन दिखाने की आवश्यकता है। सर्वदा हमारी स्थापना सेवामूलक रही है। लुटने-लुटाने के लिये प्रसिद्ध इस, सम्प्रदाय के सन्तों की भगवद्भाव से लोकसेवा की प्रवृत्ति सदा से रही है। यद्यपि वेष भगवान् का बड़ा महत्त्व है तथापि जैसे भगवान् बालरूप में हों या दूलह रूप में उनकी भगवत्ता में कोई अन्तर नहीं आता। वैसे भद्र हों या जटामण्डित, आचार्य सभी रूपों में आचार्य ही होते हैं। तभी तो तापसरूप वाले वनवासी प्रभु को देखकर दण्डकारण्य के तापसों ने उन्हें अपना राजा मानकर अपनी रक्षा का निवेदन करते हुए कहा था– **'नगरस्थो वनस्थो वा त्वं नो राजा जनेश्वरः'।**

समय बदल रहा है और धर्म के प्रति समाज की सोच भी। अपेक्षा है, सम्प्रदाय के नये सन्तों को पुरानी अस्मिता के साथ साधुता को बचाने की, बदलते परिवेश में स्वरूपरक्षा के प्रबोध की, तथा उन्हें अपने आचार, उद्देश्य के साथ विरक्त होने पर भी सामाजिक सरोकार के प्रति सजग रहने की।

जिस प्रकार सबके अपने प्रारब्ध होते हैं वैसे ही समुदाय का भी अपना प्रारब्ध होता है। कुछ दशक पूर्व भारतीय धार्मिक समाज की कौन कहे, वैष्णवसमाज भी शायद ही स्वामी रामानन्दाचार्य के उस विराट् स्वरूप से प्रभावित हो पा रहा था। केवल सम्प्रदाय के कतिपय शिक्षित सन्त श्रीमहन्थ ही उनके उस लोकोत्तर आचार्यत्व एवं महत्तम व्यक्तित्व से अभिभूत थे। साधारण लोग तुलसी, कबीर, मीरा को तो जानते रहे और किन्हीं अर्थों में समझते भी रहे किन्तु इनके प्रेरणास्रोत से न तो परिचित थे और न प्रभावित ही। वैसे तो उन दिनों श्रीमठ में आचार्य थे, वैष्णवमन्दिरों में उनका आरती वन्दन-सम्मान भी होता था। वे कथा प्रवचन भी करते, साधु सन्तों की सेवा भी करते थे किन्तु सम्प्रदाय के उन्नयन की दृष्टि से कोई व्यापक योजना नहीं दिखती थी। सम्प्रदाय के अनुरूप एवं गरिमामय आचार्यसत्ता का भान नहीं हो पा रहा था। जिस सम्प्रदाय के आद्यक्षर में इतनी स्फूर्ति, तेजस्विता एवं ऊर्जा हो, उसके आचार्य अपनी प्रज्ञा, समसामयिक चिन्तनपूर्ण व्याख्यान, प्रभावी व्यक्तित्व एवं दूरदर्शिता के अभाव में

वैष्णवसमाज में नयी स्फूर्ति का संचार नहीं कर पा रहे थे। आध्यात्मिकता को व्यापक एवं अपेक्षित प्रतिनिधित्व नहीं मिल रहा था। सम्प्रदाय के सार्वभौम स्वरूप को विश्वदार्शनिक मनीषा के सामने प्रभावी रूप से उपस्थापन, समय की माँग थी। रामभक्तिपरम्परा का एकमात्र मूलपीठ श्रीमठ उपेक्षा के कारण निष्प्रभ, विलुप्तप्राय तथा पादुकामात्रावशेषित रह गया था, जो कभी समग्र आध्यात्मिक प्रज्ञा का सुदृढ़ प्रतिनिधित्व करने के कारण सर्वसमादृत था। उस परिस्थिति में वर्तमान जगद्गुरु रामानन्दाचार्य स्वामी रामनरेशाचार्य ने पधार कर अपने प्रभावकारी व्यक्तित्व, शास्त्रज्ञान, उदारचिन्तन एवं अथक प्रयास से भारतीय मनीषियों को उन महनीय आचार्य के विषय में सोचने समझने के लिए विवश किया। उन्होंने बड़े-बड़े महामण्डलेश्वरों के वैभव एवं मठसञ्चालन का प्रत्यक्ष किया था तथापि सरल विरक्तजीवन में रहकर शास्त्रस्वाध्याय चिन्तन की रसिकता ही आपकी पहचान थी। श्रीकिशोरीजी की कृपा से आपको आरम्भ से ही विलक्षण मेधा तथा अपने क्षेत्र के शिखरस्थ आचार्यों की सन्निधि प्राप्त थी। दीक्षागुरु ने आपको विरक्त वैष्णवजीवन देकर साधुता का पाठ पढ़ाया तो निरन्तर चिन्तन में ऊर्वरित गौतमीय विद्या तथा प्रबोधनकौशल ने आपको दर्शन के प्रशस्तप्राध्यापक के रूप में प्रख्यात कर दिया। जगदम्बा ने आपको शास्त्रसेवा का फलितार्थ प्रदान करने श्रीमठ की सेवाहेतु बुलाने का सङ्कल्प किया, जिसे सत्य होना ही था। निश्चय ही वह इस सम्प्रदाय के सामूहिक प्रारब्ध का फलोन्मुख सुकाल था। शास्त्रसेवा के बाद शास्त्रों के रसमय परम तात्पर्यार्थ की सेवा का क्रम आरम्भ हुआ। जगत्कारण एवं नित्यज्ञानवान् रूप से निरूपित ईश्वर का अब श्रीसीतानाथ के रूप में प्रत्यभिज्ञान सुदृढ़ हुआ, अब उनके द्वारा पञ्चलक्षणी की जगह पञ्चसंस्कारों का अभिप्राय समझाया जाना था, परमाणुकारणतावाद की जगह विशिष्टाद्वैत था। लक्षणों की अव्याप्तिचिन्ता के स्थान पर सम्प्रदाय की अव्याप्ति मिटाने की चुनौती थी वह भी साधनशून्य अवस्था में। उदार रामभाव का सौरभप्रसार कर भक्ति प्रपत्ति के विलक्षण स्वरूप को सर्वसुलभ कराना था। सिद्धान्त, मूलपीठ एवं आचार्यपरम्परा से सभी को फिर जोड़ना था। अब लोगों को भान होने लगा था कि आचार्य, आचार्य होता है, वह सम्प्रदाय का अभिभावक एवं मार्गदर्शक होता है। आरम्भ में पुरानी आदत के कारण कुछ असहज भी हुए किन्तु उसके साथ ही कुछ लोगों को श्रीमठ के उत्कर्ष की आशा भी जगी। यद्यपि विचित्रता एवं विविधता से पूर्ण इस सम्प्रदाय के विरक्तों में विद्वान्, दक्ष, नीतिमान्, आचारनिष्ठ, तपस्वी, साधुसेवी सन्तों की कमी नहीं है, तथापि यह भी सत्य है कि सभी विशेषतायें एकत्र प्रायः दुर्लभ होती

हैं। पण्डितों में भी किसी में व्युत्पत्ति होती है तो अभिव्यक्ति नहीं। अभिव्यक्ति भी हो तो व्यापकचिन्तन या समयसापेक्ष दृष्टि के साथ प्रभावी व्यक्तित्व का मिलना मुश्किल होता है। पुनः उसमें कहीं नेतृत्व एवं उत्साहपूर्ण कर्मठता हो तो मणिकाञ्चन संयोग ही समझना चाहिये। जैसे सनातनधर्म की आचार्यमणिमाला में दिव्यरत्न के रूप में विद्योतमान भगवान् रामानन्दाचार्य का नाम लेते ही अनेक अद्भुत तपोमय भक्तिभासुर शिष्यपरिकर से वेष्टित आभामय विराट् अद्वितीय व्यक्तित्व का स्मरण सहज ही हो आता है, उनके पद पर वे नहीं तो उनके अनुरूप, उनके पदचिह्नों पर चलनेवाला आचारनिष्ठ विरक्त महामनीषी का होना सर्वथा उचित है। इन्हीं अपेक्षित विशेषताओं को आलक्षित कर सम्प्रदाय के मान्य सन्तों द्वारा सम्प्रदायाचार्य के पद पर अभिषिक्त वर्तमान जगद्गुरु ने सम्प्रदाय को आगे बढ़ाने का बीरा उठाया, भगवत्प्रदत्त अपनी पूर्णक्षमता का अपेक्षित दिशा में विनियोग कर उपलब्धियों एवं विविध आयामों से सबको चमत्कृत किया है।

वैराग्यानुगुण उदारता, असंगता के साथ मृगेन्द्रता आचार्यश्री का असाधारण गुण है। इष्टबल, ज्ञानबल तथा कुलक्रमागत संस्कार ने उन्हें अत्यन्त निर्भय बनाया है और निष्कलंक एवं अवदात चरित्र ने उन्हें महनीय। उन्हें विविध प्रकल्पों के व्यवस्थापन, सारस्वत उपक्रमों के संयोजन, संस्थानों के कुशल सञ्चालन में महारत हासिल है। सत्सङ्कल्पों के धनी होने के साथ उन्हें सङ्कल्पसिद्धि भी प्राप्त है। दृढ़ इच्छाशक्ति के साथ अदम्य उत्साह और सबसे बढ़कर निष्कम्प आराध्यनिष्ठा, भगवत्समर्पित जीवन उनके व्यक्तित्व का अलङ्करण है। वस्तुतः वे "रामकाज कीन्हें बिनु मोहि कहाँ विश्राम" के मूर्तिमान् तात्पर्यार्थ हैं। आकारसदृशप्रज्ञः प्रज्ञया सदृशागमः' के अनुरूप ही उनका जैसा उन्नत एवं प्रभावकारी स्वरूप है तदनुरूपही शास्त्राधिगम है। जैसा निर्भ्रान्त ज्ञान वैसीही परिनिष्ठित वाग्मिता और तदनुरूप प्रतिभा एवं यथाकाल विषयस्फुरण है। प्रवचन एवं सान्निध्य से ऐसा परिलक्षित होता है कि उन्हें न केवल शास्त्रों का प्रखर संस्कार है अपितु व्यावहारिक सामाजिक एवं राजनैतिक क्रियाकलापों व हलचलों के साथ प्रतीच्य इतिहास का सम्यक् प्रबोध भी है। वैष्णव सिद्धान्त ज्ञान के साथ उनका सङ्गतिपूर्ण सयुक्तिक एवं क्रमिक उपस्थापन उनको महान् उपदेशक सिद्ध करता है। आवश्यकता पड़ने पर वे अपनी तार्किक क्षमता एवं युक्तियुक्त विचारों से उच्छृंखल चिन्तकों का कान गर्म करना भी जानते हैं। जब भी बोलते हैं, देशकाल के अनुरूप तथा चिन्तनपूर्वक ही बोलते हैं। किसी भी संगोष्ठी में वे

वक्ताओं को अपने विचार प्रस्तुत करने का पूरा अवसर देते हैं, उन्हें धैर्यपूर्वक सुनते हैं तथा सराहना के साथ टिप्पणी पूर्वक शास्त्रीय समाधान देते हैं, जिससे उनके व्यापक अनुभव तथा ऊहाशक्ति का सहज ही अनुमान लगाया जा सकता है। इष्टगौरव की मादकता से आपूरित होकर जब वे अपने परमाराध्य श्रीराघवेन्द्र सरकार के सौशील्य माधुर्य, कारुण्य वात्सल्य जैसे कल्याणमय गुणों का निरूपण करते हैं तो उनके रोम-रोम से रामप्रेम टपकने लगता है। उनका हृदय गुणस्मरण एवं अनन्यता से गौरवान्वित ही नहीं, अपितु भावसमुल्लास से लबालब हो जाता है, आँखों में प्रीति की चमक साफ-साफ दिखने लगती है, उनकी भावदशा अनिर्वचनीय सी हो जाती है। कभी-कभी तो प्रीत्यतिरेक में उदित नि:शब्दता, विह्वलता एवं रोमाञ्चोद्गम जैसे सात्त्विक भाव उनके निगूढ़ प्रेम को भी प्रकट कर देते हैं। उनकी शांत किन्तु अनुरागसिक्त अर्चकावस्था के दर्शनमात्र से हम जैसों के हृदय में भी भगवद्भाव उदित होने लग जाता है। चातुर्मास्य के स्वाध्यायकाल में मूल या टीकाकार के कठिन अभिप्रायों को जब व्यावहारिक उदाहरणों से हृदयङ्गम बनाते हैं, तब उनका तिरोहित अध्यापकत्व सर्वप्रत्यक्ष हो जाता है। शास्त्र के जटिल शब्दों के बिना ही दुरूह विषयों को बड़ी निपुणता से निरूपित करना, उनकी विलक्षण धर्मप्रबोधनक्षमता है, जो किसी भी अन्य कथावाचकों से उनको पृथक् करती है। वे नैयायिक तो हैं किन्तु कर्कश नहीं, कभी-कभी साधुसुलभ आनन्दतरङ्गों से उच्चारित उनके विनोदपूर्ण वाक्य हृदयहारी मधुरिमा प्रकट कर देते हैं। उन्हें अनुग्रह एवं निग्रह दोनों की प्रयोगविधि ज्ञात है। ऐसे व्यक्तित्व की उपलब्धि किसी भी सम्प्रदाय के लिये सौभाग्य एवं गौरव की बात है। मुझे तो ऐसा लगता है कि वे सनातन धर्म की सकल समस्याओं के समाधान के लिये अवतीर्ण हुए हैं। सनातन धर्म के सर्वविध उत्कर्ष के लिये उनके मन में एक विराट् संकल्प है। यदि उन्हें मनोऽनुकूल परिकर एवं संसाधन प्राप्त हो जाय तो वे निश्चय ही सनातन धर्म का मङ्गलमय बृहत्तम सौन्दर्य सर्वप्रत्यक्ष करा सकते हैं। स्वामीजी अपने इन्हीं महनीय गुणों से सम्प्रदाय, श्रीमठ एवं आचार्योपदिष्ट रामभाव को उदार व्याप्ति देने में पूर्णमनोयोग से व्यापृत रहते हैं। वैष्णवमताब्जभास्कर में आचार्यचरण ने स्वयं देशिकत्व के निर्धारण के लिए हेय एवं उपादेय दोष एवं गुणों का उल्लेख किया है। वर्तमान जगद्गुरु में वे सभी आवश्यक गुण विद्यमान हैं, जिन्हें शास्त्रों ने वैष्णवाचार्यत्व के लिए अपेक्षित माना है–

आचार्यो वेदसम्पन्नो विष्णुभक्तो विमत्सरः ।
मन्त्रज्ञो मन्त्रभक्तश्च सदा मन्त्रार्थदः शुचिः ।

गुरुभक्तिसमायुक्तः पुराणज्ञो विशेषतः ।।

आचार्यश्री बदलते समय के रुख तथा समाज की दिशा-दशा को अच्छी तरह समझते हैं। वे सही अर्थ में नयी चेतना के जीवन्त आचार्य हैं। शास्त्रों एवं सनातनधर्म के प्रबल पक्षधर होने पर भी वे आँख मूँद कर गतानुगतिक चलने वाले आचार्य नहीं हैं। वे निरन्तर मौलिक चिन्तन से समस्याओं का निदान शास्त्रों में तलाशते हैं। बड़े गौरव एवं युक्तियों से अपने आराध्य भगवान् राम को पूर्णमानव धर्म की एकमात्र प्रतिमूर्ति निरूपित करते हैं, वैदिकधर्म को विश्वधर्म, रामभाव में पूर्ण मानवता तथा रामराज्य में वैमनस्य ही नहीं अपितु समाज की अन्य सभी समस्याओं का निदान बताते हैं। उनकी निर्णयक्षमता तथा प्रत्युत्पन्नमतिता तो गजब की है ही, उपपादननिपुणता का भी कोई जवाब नहीं।

आचार्यश्री के कुशल संरक्षकत्त्व में गत २५ वर्षों में श्रीमठ का चतुर्दिक् विकास हुआ है। विरक्त हो या गृहस्थ, समाज के सभी क्षेत्रों के प्रभावी व्यक्तित्व का श्रीमठ से लगाव बढ़ा है। श्रीमठ से प्रतिवर्ष दिये जाने वाले वैभवपूर्ण पुरस्कार हो या साहित्यरचना या प्राचीनग्रन्थों के प्रकाशन जैसे अन्यान्य सारस्वत प्रकल्प हों, इनके द्वारा आचार्यचरण के चुम्बकीय व्यक्तित्व ने केवल विद्वत्समाज को ही नहीं अपितु सामाजिक व राजनैतिक क्षेत्र के शीर्षस्थ जनों को श्रीमठ से जोड़ा है। श्रीमठ को श्रीविहारम् प्राप्त हुआ, अनेक प्रशस्त मठ श्रीमठ के अधीन हुए। विद्वत्संगोष्ठी हो, विविध वार्षिक उत्सव, जयन्तियाँ हो या कुछ वर्ष पूर्व से मनाये जा रहे सङ्गीत महोत्सव हों, इन सबों का वैभवपूर्ण अनुष्ठान आचार्यश्री के सत्सङ्कल्पों का ही सुफल है। श्रीमठ विद्यमान या समागत सन्त ब्राह्मणों की सेवा का प्रकल्प तो चलाता ही है, इसके साथ संस्कृत छात्रों को निवासभोजनादि का सौविध्य प्रदान कर शास्त्रसंरक्षण के प्रति भी पूर्ण सजग है। ध्यातव्य है कि इतने लोकोपकारी प्रकल्पों के संचालन में अर्थशुचिता एवं मर्यादा का पूर्णतः पालन किया जाता है। आचार्यश्री इतनी व्यापृति के बाद भी सनातनधर्म के निर्देशानुरूप भगवत्प्रीत्यर्थ भगवत्पूजन, देवऋषि पूजन, तर्पण हवन जैसे आह्निक कृत्यों का नियमतः अनुष्ठान करते हैं।

चाह कर भी इस तथ्य का कोई अपलाप नहीं कर सकता है कि श्रीमठ रामानन्दसम्प्रदाय की मूलपीठ है, वहाँ के आचार्य ही तत्त्वतः मूल रामानन्दाचार्य होते हैं और वर्तमान में वहाँ रामानन्दाचार्य पद पर सर्वथा अनुरूप स्वामी रामनरेशाचार्य भगवत्पाद विद्यमान हैं।

यह विडम्बना ही है कि इसके बावजूद भी सम्प्रदाय के सबके राम सबमें

राम मानने वाले अच्युत गोत्र वाले कुछ पूज्य सन्त अभी तक पञ्चप्रवरीय वत्सगोत्र में उत्पन्न इस महामनीषी के पुराने गोत्र को ढूढ़ रहे हैं तो कुछ इनकी प्रतिमूर्तियाँ गढ़ते हुए भी उनमें प्रातिभ मृगेन्द्रता नहीं डाल पा रहे हैं।

पदाभिषेक की रजत जयन्ती के उल्लासमय अवसर पर शुभकामनाओं के साथ करुणामयी माँ के श्रीचरणों में प्रार्थना करता हूँ– जगदम्ब! अनेक को सन्तत्व प्रदान कर धन्य करनेवाली जिसकी पावन पद्धतियों को आज भी गंगाजी पखारती रहती हैं, आपके उस श्रीमठ के सर्वविध उत्कर्ष के लिए पूर्णसमर्पित, मानवता एवं सनातनधर्म के लिए निरन्तर जागरूक इस महान् सेवाव्रती आचार्य को नैरुज्यपूर्ण दीर्घजीवन के साथ अपने दीप्तिमय वात्सल्यवर्षण से स्निग्ध करती रहें, इन्हें स्वानुरूप संकल्पसिद्धि प्रदान करें, जिससे श्रीमठ उत्तरोत्तर उन्नतशिखर पर आरूढ़ होकर लोक का स्वस्तिवाचन करे, श्रीरामभक्ति का मंगलध्वज फहराता रहे, आपके नीराजन से लोक की अज्ञानतमिस्रा मिटाता रहे, तथा आपके जीवनधन के अमोघ प्रपदन के उदार रामाश्वासन सौरभ को सम्पूर्ण जगत् में फैलाता रहे।

●

# स्वामीजी सबके लिए वटवृक्ष हैं

गणेश्वरशास्त्री द्राविड

।। श्रीगुरुः शरणम् ।।

काशी, भगवान् शिव की श्रेष्ठ नगरी है। उसकी विशेषता भगवती गङ्गा के आने से और बढ़ गयी। गङ्गा में पञ्चगङ्गास्थल की अपार महिमा है। काशी में पञ्चगङ्गाघाट पर भगवान् महाविष्णु बिन्दुमाधव के रूप में विराजमान हैं। अतएव काशी का यह भाग 'विष्णुकाशी' कहलाता है। इस विष्णुकाशी में पञ्चगङ्गाघाट पर सभी वैष्णवाचार्यों ने तपस्या की है। उक्त वैष्णवाचार्यों के साधना-स्थल वहाँ पर विराजमान हैं। इस क्रम में पञ्चगङ्गाघाट पर जगद्गुरु रामानन्दाचार्य की तपःस्थली का अपना वैशिष्ट्य है। रामानन्दाचार्य ने यहीं पर कबीरदास को 'राम' नाम का उपदेश किया था। उक्त रामानन्दाचार्य की चरणपादुकाएँ पञ्चगङ्गाघाट पर पूर्वकाल से विराजमान थीं। पचीस वर्ष पूर्व जगद्गुरु रामानन्दाचार्य पद पर स्वामी रामनरेशाचार्य महाराज का पट्टाभिषेक हुआ। इस दिव्यक्षण में हमलोग उपस्थित थे। स्वामी जी हमारे साङ्गवेद विद्यालय (रामघाट) में न्याय शास्त्र का अध्ययन पू. गुरुदेव श्री रामचन्द्रशास्त्री होसमने जी के पास करते थे। हमलोगों का उसी समय से स्वामीजी के साथ परिचय है। स्वामीजी ने पट्टाभिषेक के पश्चात् पञ्चगङ्गाघाट पर विराजमान श्रीमठ का सर्वाङ्गीण विकास किया है। भगवान् श्रीरामजी की चरणपादुकाओं का अनेक दशकों तक आराधना स्वामीजी ने की। विद्वानों की सङ्गति में निरन्तर रहते हुए आपने भारतीय विद्याओं एवं कलाओं के समुपासकों का प्रेम प्राप्त किया है। वेद शास्त्रों के अध्ययन, अध्यापन (प्रवचन), मनन एवं आचरण के लिए आप निरन्तर प्रयत्नशील रहते हैं तथा लोगों को उसमें प्रेरित करते हैं। विद्वत्परम्परा के साथ सम्प्रदाय के रामभक्तिप्रचार-प्रसार कार्य को भी आपने अत्यन्त निपुणता के साथ अग्रसर किया है। श्रीमठ के जीर्णोद्धार के पश्चात् वहाँ पर रामानन्दाचार्य आदि की मूर्तिस्थापना कर उनकी नियमित परिचर्या की व्यवस्था की है। भारतवर्ष के विभिन्न प्रान्तों में समय-समय पर यात्रा कर आपने धर्म, भक्ति, ज्ञान, वैराग्य की प्रतिष्ठापना के लिए महत्त्वपूर्ण योगदान दिया है और दे रहे हैं। यह हम लोगों के लिए सौभाग्य का विषय है। जगद्गुरु रामानंदाचार्य की सप्तशताब्दी महोत्सव के पावन अवसर पर काशी में टाउनहाल

के प्राङ्गण में कोटिहोमात्मक रामयज्ञानुष्ठान आपने करवाया जिसमें भारतवर्ष के सभी प्रान्तों से धर्माचार्य, सन्त, महात्मा एवं विद्वान् पधारे थे। उक्त कोटियज्ञ के पश्चात् देश में विभिन्न स्थानों पर अनेक कोटियज्ञ हुए। समय-समय पर विद्वत्सङ्गोष्ठी, ग्रन्थनिर्माण, ग्रन्थप्रकाशन, भजन-सङ्गीत का आयोजन, विद्वानों एवं कलाकारों को पुरस्कार प्रदान, सत्कार व्यवस्था तथा लोगों को सन्मार्ग में प्रेरित करना-स्वामीजी का वैशिष्ट्य है। स्वामीजी गुणी लोगों को सम्मानित करते हैं। विद्याध्ययन के लिए काशी आनेवाले छात्रों को श्रीमठ द्वारा अन्न (प्रसाद) दिया जाता है। सभी स्थानों में समानरूप से कार्यक्रमों में निराडम्बर रूप से स्वामीजी पधारते हैं तथा वहाँ पर अपने दिव्य प्रवचनों द्वारा लोगों को वैदिक मार्ग पर चलने के लिए प्रेरित करते हैं।

**आचिनोति च शास्त्रार्थम् आचारे स्थापयत्यपि ।**
**स्वयमाचरते यस्मात् तस्मादाचार्य उच्यते ।।**

इस श्लोक में यह कहा गया है कि शास्त्रीय विषयों को जानना लोगों को आचार में स्थापित करना तथा स्वयम् आचरण करना– इन तीनों के कारण 'आचार्य' कहा जाता है। स्वामीजी में उक्त तीनों बातें पायी जाती हैं। अतः उनमें 'आचार्य' पद सार्थक होता है। हमारे साङ्गवेद विद्यालय पर जब सङ्कट की घड़ी आयी तब स्वामीजी हमलोगों के साथ उपस्थित होकर आत्मीयता का परिचय दिये। आज भी वे साङ्गवेद विद्यालय के सर्वाङ्गीण उन्नयन के लिए हमलोगों को उचित मार्गदर्शन करते हैं। स्वामीजी ने पञ्चगङ्गाघाट पर श्रीमठ का जीर्णोद्धार जैसे कराया वैसे ही अपने गुरुदेव के पावन स्थल (पियरी) पर 'श्रीविहारम्' नाम की दिव्य वास्तु निर्मित करायी है। वर्तमान में बड़े कार्यक्रम 'श्रीविहारम्' में सम्पादित होते हैं। काशी में पञ्चगङ्गाघाट दिव्यस्थल है। उसमें श्री बिन्दुमाधव के सान्निध्य में जगद्गुरु रामानन्दाचार्य–चरणपादुकाएँ अलौकिक विराजमान हैं। वहाँ पर श्रीमठ में रामानन्दाचार्य पद पर स्वामीजी का अभिषेक होने से सभी लोगों का गौरव बढ़ा है। पूज्य स्वामीजी शतायु हों तथा नीरोग रहते हुए सर्वविध ऐश्वर्य के साथ निरन्तर रामभक्ति प्रचार-प्रसार एवं भारतीय विद्याओं, कलाओं और संस्कृति के संरक्षण एवं उन्नयन करते हुए सबके लिए वटवृक्ष के समान आश्रय बने रहें ऐसी हम मर्यादापुरुषोत्तम भगवान् श्रीरामचन्द्रजी के चरणारविन्दों में प्रार्थना करते हैं।

●

# गुरु-कृपा

अम्बरीष कुमार राय

अद्भुत है गुरु की महिमा! कृपा हो जाय तो कहना ही क्या? मैं १०.५.२००७ को वाराणसी आया और शासकीय अधिवक्ता फौजदारी कुमारी इन्दिरा शुक्ला की स्नेह छाया में रहा। उनसे मेरा पारिवारिक सम्बन्ध है। बचपन से ही उनके यहाँ से मेरा मार्ग दर्शन होता चला आ रहा है। उन्होंने ही पूज्य गुरुदेव के बारे में चर्चा किया। तदोपरान्त मैं पंचगंगा घाट गया वहाँ स्नान किया। श्रीमठ में जाकर चरण पादुका व आचार्यश्री का दर्शन किया। पुन: वापस केराकत आ गया। १५.५.२००७ ई. को सुबह ४ बजे मुझे निद्रा में गुरु के विशाल रूप का दर्शन हुआ, जैसे मुझे कोई निर्देशित कर रहा है कि उठो जागो सब ठीक हो जायेगा, समय आ गया है। मैं पुन: काशी वापस होने की बात करने लगा, लेकिन हिम्मत नहीं हो रही थी कि कैसे सब होगा। धर्मपत्नी ने कहा कि कार्य करने से ही फल मिलता है। दोपहर भोजनोपरान्त पत्नी को लेकर वाराणसी आया और रामकुण्ड में एक किराये का मकान रहने के लिए ले लिया। ७.६.२००७ को श्रीमठ पुन: पहुँचा वहाँ विधान बाबा की महती कृपा से मैं गुरुजी के चरणों के करीब पहुँचने लगा। १७.११.२०१३ ई. कार्तिक पूर्णिमा को माता जी व पत्नी के साथ गुरु दीक्षा लेने का अवसर प्राप्त हुआ जिसे मैं अपने आध्यात्मिक जीवन के पहले जन्म दिन के रूप में मानता हूँ। ६.११.२०१४ ई. को पूज्य गुरु जी के चरणों में बैठने का अवसर प्राप्त हुआ।

मैं अपने को बहुत ही भाग्यशाली समझता हूँ। जब मैं किसी परेशानी में होता हूँ तो मेरे ऊपर हर क्षण गुरु जी की कृपा बरसती रहती है। मेरे जीवन में पिता के अभाव की पूर्ति हो जाती है। मेरे कार्य शैली की जानकारी गुरु जी वैसे ही लेते हैं जैसे पिता पुत्र से लेता है। मैं बहुत ही उग्रस्वभाव वाला व्यक्ति था पर गुरु जी से मिलने के बाद बहुत ही सुधार हुआ है। गुरु के सम्पर्क में आने पर ऐसा अनुभव हुआ कि अभी मानवीय गुण मात्र एक प्रतिशत ही है। ऐसे देव तुल्य गुरु को पाकर जन्म-जन्मांतर के पाप से छुटकारा ही नहीं अपितु मेरे परिवार का जीवन धन्य हो रहा है। ऐसी ही गुरु कृपा बनी रहे। गुरु सेवा का अवसर प्राप्त

करने की लालसा मन में अनवरत बनी रहती है। मुझ जैसे अज्ञानी को गुरु जी अपने शरण में जगह देंगे यह कल्पना के परे था। मैं अपने गलती का आभास अब गुरु जी की कृपा से स्वयं कर लेता हूँ। उदाहरणार्थ जब मैं किसी कठिन से कठिन परेशानी में होता हूँ तो गुरु जी का छोटा चित्र पास में रखता हूँ और उसी को आगे करके कठिन से कठिन कार्य सम्पादित करा लेता हूँ। एक दिन मुझे आभास हुआ कि बार-बार गुरु की परीक्षा नहीं लेनी चाहिये। कर्म के अनुसार ही फल की उम्मीद करनी चाहिये। अब में वैसा ही करता हूँ। इस तरह के विचार का बोध गुरु कृपा का ही द्योतक है। भक्त जन भगवत-कृपा व दर्शन के लिये व्याकुल रहते हैं। योगी आत्म दर्शन के लिये साधना में लीन रहते हैं। ज्ञानी के साधना का उद्देश्य होता हे ज्ञान, ब्रह्म दर्शन। गुरु कृपा, गुरु का आशीर्वाद तथा गुरु की शुभ दृष्टि लाभ करना ही गुरु दर्शन कहलाता है। गुरु के द्वारा निर्धारित पथ मानकर जीवन व्यतीत किया जाये तो गुरु कृपा का लाभ होता है। शास्त्र के अनुसार महापुरुष सपार्षद मृत्यु लोक पर अवतीर्ण होते हैं गुरु-शिष्य व भक्ति के विषय में शंकराचार्य की युक्ति है–

**मोक्षकारणसामग्रयां भक्तिरेव गरीयसी ।**
**स्व-स्व स्थानुसंधानं भक्तिरित्यभिधीयते ।।**

अर्थात् मुक्ति के जितने भी उपाय हैं भक्ति उनमें सबसे महान है। स्वकीय स्वरूप का अनुसन्धान ही भक्ति है।

**गुरुर्ब्रह्मा गुरुर्विष्णु, गुरुर्देवो महेश्वरः ।**
**गुरुःसाक्षात् परब्रह्म, तस्मै श्रीगुरुवे नमः ।।**

शिष्य, गुरु का नमन-मनन करते हैं। मुक्ति के जितने भी मार्ग हैं उनमें गुरु के माध्यम से की गई भक्ति श्रेष्ठ होती है। गुरु की कृपा हो तो पंगु भी पर्वत लंघन कर सकता है। हम हर काम हर चेष्टा में गुरु की कृपा का अनुभव करते हैं। गुरु ही भवसागर से उत्तीर्ण कराने का एक मात्र साधन है।

*।।श्रीगुरःशरणम्।।*

●

# श्रीमठ : पुनर्जागरण के पचीस वर्ष

**सतीश कुमार**

आद्य जगद्गुरु रामानन्दाचार्य स्वामी रामानन्दजी महाराज ने काशी में प्राय: सात शताब्दी पूर्व पंचगंगा घाट स्थित अपनी पावन साधनास्थली श्रीमठ से भक्ति आन्दोलन का प्रवर्तन करते हुए रामभक्ति परम्परा के जिस अध्यात्मिक जनान्दोलन का सूत्रपात किया, उसे आगे बढ़ाने की श्रीमठ की भूमिका को विगत ढाई दशकों में पुनर्जागरण की नयी आभा प्राप्त हुई है। श्रीमठ की अध्यात्मिक गरिमा एवं सांस्कृतिक महत्ता के पुनर्जागरण के प्रतीक इस युगान्तकारी अध्याय के सृजन का समूचा श्रेय जाता है वर्तमान श्रीमठ पीठाधीश्वर तथा शीर्ष आचार्य पीठ के जगद्गुरु रामानन्दाचार्य स्वामी रामनरेशाचार्य जी महाराज के प्रतिबद्ध, कर्मठ और गतिमान नेतृत्व को। उनके कुशल, समर्थ एवं गरिमामय नेतृत्व से श्रीमठ की पहचान को अध्यात्मिक जगत के क्षितिज पर नवोदय प्राप्त हुआ है। राष्ट्र की सबसे विराट एवं सुसंगठित रामानन्द सम्प्रदाय की परम्परा को भी इसी के साथ शीर्ष आचार्यत्व का एक अभिनव आभायुक्त आलोक लम्बे अन्तराल के बाद प्राप्त हुआ। जगद्गुरु रामानन्दाचार्य स्वामी भगवदाचार्य जी महाराज के परम विद्वतापूर्ण आचार्यत्व के बाद सम्प्रदाय की आचार्य परम्परा की गत्यात्मकता का जहां ह्रास सामने आया, वहीं ऐसे शैथिल्य के बीच आचार्य पद की स्थापित मर्यादा भी अन्तर्विरोधों के चलते आहत हुई। ऐसे संक्रमण के दौर के बाद जिस तरह स्वामी रामनरेशाचार्य जी महाराज के सक्रिय आध्यात्मिक योगदान से सम्प्रदाय में आचार्यत्व के यश एवं तेज की व्यापक आकर्षणयुक्त मान्यता स्थापित हुई, वह सम्प्रदायाचार्य की भूमिका में अपने दायित्वों के प्रति उनकी सतत संकल्पित साधना का प्रतिफल है।

जगद्गुरु रामानन्दाचार्य स्वामी रामनरेशाचार्य के निकट सान्निध्य में आने का सुअवसर मुझे सन् १९९२ में मिला। उन दिनों 'हिन्दुस्तान' के संवाददाता के रूप में पत्रकारिता धर्म के तहत मैं उनके निकट गया और उनके व्यक्तित्व

प्रो. राजनीतिशास्त्र, महात्मा गाँधी काशी विद्यापीठ, वाराणसी

का आकर्षण न केवल मुझे श्रीमठ से बांधे रहा, बल्कि धीरे-धीरे उस आचार्यपीठ और गुरु के रूप में आचार्यश्री से सम्बन्धों का स्थायीभाव साकार हो गया। जब मैंने श्रीमठ में आना-जाना शुरू किया तो महाराजश्री को आचार्यपीठ पर पदासीन हुए तीन-चार वर्ष ही बीते थे। सम्प्रदाय एवं मठों की सत्ता के समकालीन अन्तर्विरोधों के झंझावात श्रीमठ में भी थे। प्राय: संसाधनरहित श्रीमठ के पास मोटी धूल पड़ी अपनी परम्परा की सुगन्धि के अतिरिक्त और कुछ नहीं था। इसके अतिरिक्त यदि कुछ था, तो वह महाराजश्री की असाधारण संकल्पशक्ति, जिसने धीरे-धीरे श्रीमठ की विरासत पर पड़ी मोटी धूल की परत को साफ कर उसके गौरव को कल्पनातीत गति दी।

श्रीमठ की बागडोर संभालने के पूर्व मूलत: रामानन्द सम्प्रदाय में दीक्षित बाल ब्रह्मचारी स्वामी रामनरेशाचार्य जी हरिद्वार के कैलास आश्रम में रहा करते थे। आश्रम में उनकी प्रतिष्ठा छोटी आयु में भी असाधारण थी। लोग उन्हें उससमृद्ध आश्रम का भावी उत्तराधिकारी देखने लगे थे, लेकिन शायद ऐसे लोगों को उनमें अन्तर्निहित साम्प्रदायिक आस्थाभाव की अविचल एकनिष्ठा का बोध नहीं था। फलत: जब रामानन्द सम्प्रदाय के कुछ अति वरिष्ठ सन्त-महन्तों ने उनके गतिशील व्यक्तित्व में निहित सम्भावनाओं का आंकलन कर उन्हें श्रीमठ की बागडोर के साथ रामानन्द सम्प्रदाय के आचार्यत्व की पद-प्रतिष्ठापना का प्रस्ताव किया, तो इस कठिन चुनौती भरे प्रस्ताव को उन्होंने सहज स्वीकार करते हुए एक बार फिर काशी लौटना तय कर लिया। ज्ञातव्य है कि मात्र पन्द्रह वर्ष की अल्पायु में गृह त्याग कर वह पहले काशी ही आये थे और पियरी स्थित रामानन्द सम्प्रदाय के एक आश्रम के श्रीमहन्त से दीक्षित हो गये थे। आचार्य पद पदासीन होने के बाद आश्रम को गुरु ने अपने उस सबसे यशस्वी शिष्य को दिया था, जो अपने परिवर्तित कलेवर के साथ सम्प्रति श्रीविहारम् के नाम से जाना जाता है।

महाराजश्री की सफलता का एक मूल रहस्य उनके इस आत्मविश्वास में निहित रहा है कि किसी भी चुनौती को सिद्ध करने में अथवा किसी भी योजना या कार्यक्रम को सफलता के मुकाम तक पहुँचाने में महत्व संसाधनों का नहीं, संकल्पशक्ति का होता है। अपने अनुयायियों को भी वह यह उपदेश सदैव करते रहते हैं और उनके अपने कर्मक्षेत्र में तो उनकी इस आस्था का साकार भाव विराट स्वरूप में दृष्टिगोचर होता है कि रामजी का काम करने के लिये महज संकल्प आवश्यक है, संसाधन देना तो उनका काम

है। यही वजह है कि जब वह श्रीमठ आये तो श्रीमठ की संसाधनशून्यता कभी उन्हें विचलित नहीं कर सकी। मठ में अनुष्ठान एवं आध्यात्मिक उत्सवों की कल्पना तो दूर, दैनिक भोग-भण्डारा की व्यवस्था भी कठिन थी। महाराजश्री ने हनुमान जी को वाल्मीकि रामायण का नियमित सुन्दरकाण्ड पाठ सुनवाने की व्यवस्था की और उनके संकल्पों को संसाधन आपूर्ति का सिलसिला नई आभा के साथ आगे बढ़ने लगा। धीरे-धीरे रामानन्दाचार्य रामनरेशाचार्य की और रामानन्द सम्प्रदाय की आचार्यपीठ के रूप में श्रीमठ के आयोजनों एवं कार्यक्रमों की धूम काशी ही नहीं, पूरे देश को समेटने लगी। कभी राष्ट्रपति रहे ज्ञानी जैल सिंह तो प्रधानमन्त्री रहे राजीव गांधी जैसे लोग भी श्रीमठ के आयोजन में खिचें चले आने लगे। विद्वत्-सत्कार एवं विद्वत् सम्मान की नवीन प्रवृत्तियों के चलते श्रीमठ काशी को विद्वत् समागमों का भी प्रशस्त अखाड़ा माना जाने लगा। आध्यात्मिक अनुष्ठानात्मक प्रवृत्तियों की अनवरत श्रृंखला भक्तों के लिये राष्ट्रव्यापी आकर्षण का आधार बनती चली गयी। रामानन्दाचार्य पीठ के रूप में श्रीमठ के गौरव को पुनरुत्थान का नव रूप मिला। कुम्भ और अर्द्धकुम्भ के मेले हों या दूसरे धर्म समागमों की गहमागहमी, हर जगह श्रीमठ का आध्यात्मिक-प्रभाव स्थापित होने लगा और उसकी महत्ता की स्वीकारोक्ति के साथ उसके आकर्षण को उत्कर्ष प्राप्त होने लगा।

जिन दिनों महाराजश्री श्रीमठ आये, उन्हीं दिनों काशी में कुछ लोगों के प्रयासों से घाटों पर देवदीपावली मनाने की परम्परा शुरू हुई थी, जो एक-दो वर्षों में ही साम्प्रदायिक तनाव से जुड़े घटनाक्रमों के कारण स्थगित हो गयी। १९९४ से उसकी फिर शुरुआत हुई और क्रमश: वह काशी का अलौकिक एवं विश्वव्यापी आकर्षण का जनोत्सव बन गया। इस उत्कर्ष को उत्प्रेरित करने में स्वामी रामनरेशाचार्य जी का प्रमुख रूप से योगदान था। वस्तुत: कार्तिक में वैष्णव पर्वों की प्रधानता रहती है और कार्तिक पर्वोत्सवों एवं पूरे कार्तिक मास के आध्यात्मिक प्रकाशमय अनुष्ठानों का परम्परा से प्रशस्त केन्द्र पंचगंगा घाट है। पंचगंगा के इस परम्परागत आध्यात्मिक स्वरूप को श्रीमठ ने दिव्य कार्तिक महोत्सवों के आयोजन के साथ एक अभिन्न जन आकर्षण प्रदान करने का सिलसिला महाराजश्री के संकल्प से शुरू किया। एक माह के श्रीमठ द्वारा आयोजित इस महोत्सव का आरम्भ शरद पूर्णिमा के कोजागरी उत्सव और समापन कार्तिक पूर्णिमा के देवदीपावली उत्सव के साथ होने लगा। अत: देवदीपावली महोत्सव को महाराजश्री के संकल्प से

जहाँ आरम्भ में पंचगंगा घाट से विशेष आकर्षण मिला, वहीं श्रीमठ के हजारा दीप स्तम्भ के प्रज्ज्वलन के साथ देवदीपावली उद्‌घाटित होने लगी। काशी के अन्य घाटों पर भी उसे विस्तारित करने में श्रीमठ का महत्वपूर्ण योगदान है। महाराजश्री के संकल्प से उस दौर में कई घाटों पर दीप प्रज्ज्वलन हेतु श्रीमठ से संसाधन आपूर्ति होती थी।

जगद्‌गुरु रामानन्दाचार्य स्वामी रामनरेशाचार्य के द्वारा प्रतिवर्ष आयोजित होने वाला दिव्य चातुर्मास महोत्सव भी आध्यात्मिक चेतना के लोकप्रसार का बहुत सशक्त माध्यम बना। रामानन्द सम्प्रदाय में अनेक वरिष्ठ सन्त भी चातुर्मास नहीं करते, लेकिन सम्प्रदायाचार्य के रूप में महाराजश्री ने हर वर्ष अलग-अलग नगरों में चातुर्मास के प्रशस्त महोत्सवों की परम्परा स्थापित की। आमतौर पर बड़े धर्माचार्य अपने चुनिन्दा स्थानों पर ही चातुर्मास करते हैं, लेकिन महाराजश्री ने निश्चय किया कि वह एक शहर में दूसरी बार लगातार चातुर्मास नहीं करेंगे और तीन ही ऐसे नगर हैं, जहाँ लम्बे अन्तराल के बाद किन्हीं विशिष्ट कारणों से एक से अधिक बार चातुर्मास किया। उन्होंने देवघर तक में चातुर्मास महोत्सव का दिव्य आयोजन किया, जहां प्रशस्त तीर्थ होते हुए भी आज तक किसी बड़े धर्माचार्य ने चातुर्मास नहीं किया था। चातुर्मास की सनातन ऋषि परम्परा के अनुष्ठान जहाँ सन्तों के लिये आध्यात्मिक ऊर्जा संचय की कार्यशाला होते है, वहीं क्षेत्र विशेष में उससे जुड़े व्रत-अनुष्ठानादि आध्यात्मिक भावों की लोकचेतना का प्रसार करने में सहायक सिद्ध होते हैं। स्वामी रामनरेशाचार्य के चातुर्मास महोत्सव इन दोनों कसौटियों पर सफल और आध्यात्मिक प्रभावोत्पादकता के प्रतिमान सदृश होते हैं।

अपने आध्यात्मिक कार्यक्रमों के प्रति अविचल संकल्पबद्धता महाराजश्री का वैशिष्ट्य है। कोई आपत् धर्म भी उन्हें अपने अनुष्ठानों के संकल्प से नहीं डिगा सकता। चातुर्मास अनुष्ठान के काल में सन्तजन क्षेत्र संन्यास के लिए संकल्पित होते हैं। उनके देवघर चातुर्मास प्रवास कार्यक्रमों के बीच ही सम्प्रदाय के चार बड़े प्रशस्त सन्तों ने काशी में श्रीमठ प्रबन्धन को लेकर अपनी ओर से एक विशेष बैठक की गुपचुप योजना बनायी। बैठक की योजना वस्तुतः एक तरह के षड्यन्त्र का हिस्सा थी, जिसका उद्देश्य आचार्यश्री की चातुर्मास के चलते अनुपस्थिति का लाभ उठाकर आचार्यपीठ श्रीमठ पर कब्जा करना था। महाराजश्री की साधना और संकल्प शक्ति से यह संकट स्वयं समाप्त हो गया। पूरे प्रसंग में सन्तत्व की मर्यादा जीती और अमर्यादा पराभूत

हुई। महाराजश्री दो महीने का चातुर्मास अनुष्ठान पूर्ण कर जब लौटे, तो काशी एवं श्रीमठ में उनका भव्य स्वागताभिनन्दन हुआ। श्रीमठ से जुड़े रहे षडयन्त्रकारी सन्तों एवं भक्तों को भी मठ छोड़कर भागना और मुँह छिपाना पड़ा।

संस्थागत अथवा निजी सम्बन्धों की मर्यादा का प्रतिबद्ध निर्वाह जगद्गुरु स्वामी रामनरेशाचार्य जी की प्रमुख विशेषता है। मर्यादायुक्त सम्बन्ध निर्वाह जहां वह हर कीमत पर करने के धनी हैं, वहीं मर्यादायें खण्डित करने वालों से परम आत्मीय सम्बन्धों को सहजभाव से विच्छेदित या शिथिल कर देना भी उनका वैशिष्ट्य है। ऐसा करने में वह महज मर्यादाओं की कसौटी का ध्यान रखते हैं, न कि इस बात का कि सामने वाले का धार्मिक, राजनीतिक, सामाजिक या आर्थिक कद, व्यक्तित्व, पद आदि कितना बड़ा है। देश के हर क्षेत्र की कई ऐसी बड़ी हस्तियाँ रही हैं, जिनसे रिश्तों की मर्यादा टूटी, तो रिश्ते भी छूट गये। किसी ने टूटी मर्यादाओं को फिर से सहेजने की मर्यादित कोशिश त्रुटिबोध की अनुभूतियों के साथ की, तो रिश्तों का सिलसिला बहाल भी हुआ, लेकिन जो ऐसा नहीं कर सका, महाराजश्री उसकी चर्चा से भी विरत नजर आते हैं।

जगद्गुरु स्वामी रामनरेशाचार्य जी के नेतृत्व में श्रीमठ ने धर्म प्रसार एवं श्रीरामभाव प्रसार की बहुआयामी भूमिका निभायी। इसमें धर्मयात्राओं, धार्मिक अनुष्ठानों, मठ की शाखाओं के विस्तार, विद्वत सम्मान एवं विद्वत संरक्षण तथा साहित्य प्रकाशन के अतिरिक्त संस्कृति एवं कला क्षेत्र में भी प्रशस्त कार्यक्रमों के आयोजन एवं संरक्षण की भूमिकायें शामिल रही हैं।

रामानन्दाचार्य पद पर पदाभिषेक के बाद से ही जगद्गुरु रामनरेशाचार्य का विशेष बल धर्मयात्राओं पर रहा। इससे धार्मिक संस्कारों एवं अध्यात्मिक चेतना का लोकप्रसार करने की परम्परागत सन्त प्रवृत्ति का प्रशस्त स्वरूप श्रीमठ की भूमिका में पुनर्जागृत हुआ। सनातन धर्म की सन्त परम्परा की यह यायावर प्रवृत्ति महाराजश्री की कार्यशैली में मुखर रही है। उनका जितना समय श्रीमठ में बीतता है, उससे प्रायः दो गुना समय धर्मयात्राओं में। इससे श्रीमठ के आध्यात्मिक पक्ष को व्यापक राष्ट्रीय लोकप्रसार प्राप्त हुआ। नियमित यात्राओं के अतिरिक्त महाराजश्री ने अनेक नियोजित प्रशस्त यात्रायें भी कीं, जो व्यापक रूप से लोक संग्रही महत्व रखती हैं। इनमें १९९५-९६ में हुई श्रीरामभाव प्रसार यात्रा पहली अति महत्वपूर्ण यात्रा थी, जो ओंकारेश्वर से

शुरू होकर अयोध्या में पूर्ण हुई। दूसरी बार नियोजित यात्रा का उससे बड़ा और व्यापक स्वरूप सन् २००० में रामानन्दाचार्य सप्तशताब्दी महोत्सव के क्रम में सामने आया। एक वर्ष तक इस यात्रा ने देश के ग्यारह प्रान्तों को स्पर्श किया। इस यात्रा ने देश की सबसे विराट एवं सुसंगठित सन्त परम्परा के रूप में रामानन्द सम्प्रदाय के समग्र गौरव का जैसे पुनरोदय कर दिया। दर्जन भर प्रान्तों में चली यह धर्मयात्रा वस्तुतः श्रीरामभाव प्रसार के श्रीमठ के आध्यात्मिक अश्वमेघ का आभास करा रही थी।

पचीस वर्ष पूर्व टूटी चौकी और एक दो कुर्सी मेज के साथ विरासत में मिला संसाधनविहीन श्रीमठ श्रीरामनरेशाचार्य के आध्यात्मिक प्रस्थान का केन्द्र बन सकता है, यह कल्पना बहुतों को नहीं थी। शायद उन्हें पदासीन करने का समर्थन करने वालों में भी बहुतों को नहीं। कुछ ने तो शायद यह सोचा था कि वह उन्हें कुछ सहयोग करते रहेंगे और अपनी उंगलियों पर नचाते हुये आचार्यपीठ की आभा का प्रयोग अपनी चौधराहट सम्प्रदाय में चलाने के लिए करेंगे। समय के साथ ऐसे तमाम लोग श्रीमठ के बढ़ते कारवाँ वाले जनपथ की भीड़ में कहाँ छूट गये, कहाँ खो गये कुछ पता नहीं। श्रीमठ से धर्मभाव प्रसार का वितान फैलता ही चला गया। कल को कौन उत्तराधिकारी होगा, कौन इस प्रवाह का नायकत्व करेगा, इसकी भी चिन्ता का कोई भाव श्रीमठ परिवार में कभी अंकुरित नहीं हुआ। हम तो अपना काम करें, यह सब काम तो रामजी का है, समय के साथ वह कर देंगे। जनपथ रहेगा और उसकी लोकयात्रा मूल्यों एवं अपने आदर्शों से प्रकाशित रहेगी, तो उसे सही दिशा का नायकत्व भी मिलता रहेगा।

स्वामी रामनरेशाचार्य इस तरह सच्चे अर्थों में मानवतावादी संत एक सच्चे वैष्णव नायक भी हैं। एक वैष्णव की सच्ची कसौटी यही है कि वह परदुखकातर हो, परपीडा के प्रति संवेदना का सागर हो। कोल-भील, वानरों के बीच समभाव से काम कर महिमामण्डित हुए श्रीराम के उदात्तभावों को आत्मसात ही नहीं, लोकजीवन में संवर्धित करने के अपने संकल्प एवं अपनी साधना के कारण ही हमारे आचार्यश्री श्रीरामभावों के अधिपति हैं।

श्रीमठ का वाह्य व आंतरिक कलेवर अत्यंत प्रशस्त व पुष्ट है। अब पूर्वापेक्षा सुन्दर एवं सुरुचिपूर्ण आध्यात्मिक आभा से युक्त लगता है। पूजा, आराधना, साधना, भक्ति, भोजन-भण्डारा आदि सभी दृष्टियों से धर्मक्षेत्र में उसका सात्विक आकर्षण बढ़ा है। सबको यथोचित मान और सत्कार मिलता

है। पंचगंगा की सीढ़ियाँ थोड़ी कठिन हैं। आखिर कबीर पैदा करने वाली सीढ़ियां साधारण कैसे होगीं? अत: वृद्ध, अशक्त भक्तों की दिक्कत भी नगर में अवस्थित एवं सबकी पहुंच के लिये सहज 'श्रीविहारम्' का नवनिर्माण होने से दूर हो गई है। श्रीमठ परिवार के लिये यह अत्यन्त महत्व रखता है। इससे मठ की रचनात्मक प्रवृत्तियों को भी विस्तार मिला। अच्छे सभागार, भण्डारा हॉल, आचार्यकक्ष और भक्तों-सन्तों के अतिथि कक्षों के साथ आध्यात्मिक समागमों की दृष्टि से यह अत्यन्त उपयोगी नवनिर्माण कहा जा सकता है।

श्रीमठ के आश्रमों का अन्य नगरों में भी इन पचीस वर्षों में महत्वपूर्ण विस्तार हुआ है। इसमें प्रयाग में 'रामानन्दाचार्य प्राकट्य धाम' की स्थापना और भव्य विकास श्रीमठ की सेवाराधना को विस्तार देने का बड़ा केन्द्र बनकर उभरा है। दारागंज स्थित हरित माधव मंदिर का वह परम्परागत धार्मिक केन्द्र अवैध कब्जों में दबकर विलुप्त हो चुका था। उसके प्रबन्धन से कागजों पर जुड़े कुछ धर्मप्राण महानुभावों ने उसके उद्धार के निवेदन के साथ वह स्थल महाराजश्री को सौंप दिया। धर्मशक्ति पुनर्जागृत हुई और वहां धर्म को ध्वस्त कर काबिज आतंक का खात्मा हुआ। अब इस धर्मस्थली का पुनरोदय रामानन्दाचार्य प्राकट्य स्मारक के रूप में हो चुका है, जो प्रयाग के संगम क्षेत्र में आध्यात्मिक आकर्षण का प्रमुख केन्द्र है।

रामानन्दाचार्य स्वामी रामनरेशाचार्य जी ने प्रयाग की भांति जबलपुर के प्रसिद्ध नर्मदा तट के दर्शनीय जिलेहरी घाट पर अर्जित प्रेमानन्द आश्रम की प्रतिष्ठा एवं स्वरूप का जीर्णोद्धार कर श्रीमठ की एक और शाखा स्थापित की। अवांछनीय गतिविधियों से आहत होकर लोगों की निगाह में गिर चुका वह पुराना प्रशस्त प्रेमानन्द-आश्रम भी इस तरह अपने आध्यात्मिक उत्कर्ष का पुनरुत्थान महाराजश्री की कृपा से अर्जित कर श्रीमठ की रचनात्मक आध्यात्मिक गतिविधियों का प्रमुख केन्द्र बन गया है।

श्रीमठ का तीसरा प्रमुख केन्द्र हरिद्वार में विकसित हो रहा है। 'अद्वितीय श्रीराम मन्दिर' के रूप में। वह श्रीमठ की सर्वाधिक महत्वाकांक्षी परियोजना है और श्रीराम भक्ति परम्परा के उत्कर्ष का एक प्रशस्त केन्द्र। जिन भावों के तहत सम्प्रदाय के मध्यमाचार्य स्वामी रामानन्द जी महाराज ने शिव की काशी में श्रीमठ के रूप में अपने आध्यात्मिक लोक अभियान का मुख्यालय स्थापित किया था, उसी समन्वयी चेतना के भावों की प्रेरणा से शिव की

दूसरी प्रशस्त नगरी हरिद्वार में रामानन्दाचार्य स्वामी रामनरेशाचार्य इस अकल्पनीय परियोजना का संकल्प लेकर श्रीरामकृपा के सहारे उसे साकार करने की अभिनन्दनीय पहल को आगे बढ़ा रहे हैं। प्राय: एक अरब के व्यय से इस संकल्प को परिपूर्णता प्राप्त होगी और श्रीरामभक्ति परम्परा का यह अद्भुत मन्दिर रामानन्द सम्प्रदाय की आचार्यपीठ 'श्रीमठ' के वर्तमान नेतृत्व की कालजयी कृति होगी।

विगत वर्षों में श्रीमठ के सन्निकट प्राचीन विशिष्ट स्थापत्य कला को समेटे भवन में महाराजश्री के प्रयासों से संस्थापित अमराबापू संस्कृत विद्यापीठ की स्थापना, मध्य प्रदेश के धार जनपद के बाग के सरस्वती शिशु मन्दिर में रामानन्द स्मृति कक्ष के निर्माण, उज्जैन के वाल्मीकि धाम में सोहनदास सभागार निर्माण और जोधपुर के रामद्वारा के महाराजश्री के सहयोग से हुये निर्माण भी श्रीमठ की रचनात्मक विकासयात्रा का हिस्सा हैं। इसी सन्दर्भ में अहमदाबाद के काकोल में श्री सत्यनारायण मन्दिर के परिसर में गोदामों को हटाकर मन्दिर के स्वरूप को प्रशस्त स्वरूप प्रदान करना भी महाराजश्री के विशेष योगदान से सम्भव हो सका।

श्रीमठ द्वारा विद्वतसम्मान पर विगत पच्चीस वर्षों में विशेष बल दिया जाता रहा है। उसके विभिन्न समारोहों में विद्वतसम्मान का पक्ष विशेष रूप से समाविष्ट होता है। साथ ही प्राय: समायोजित होने वाली विद्वत संगोष्ठियों के अवसर पर भी विद्वत सम्मान उसकी अनिवार्य प्रवृत्ति रही है। विद्वत सम्मान की श्रीमठ द्वारा स्थापित इस परम्परा का सबसे बड़ा स्वरूप 'रामानन्दाचार्य पुरस्कार' के रूप में प्रस्तुत हुआ और राष्ट्रीय स्तर पर ख्यातिलब्ध हो चुका है। पहले यह पुरस्कार दस हजार का था, जो एकमात्र आचार्य भगवती प्रसाद सिंह को प्रदान किया गया था। जगद्गुरु रामानन्दाचार्य स्वामी रामनरेशाचार्य महाराजश्री के संकल्प से रामानन्दाचार्य पुरस्कार की स्थापना के बाद प्रथम बार प्रदत्त यह पुरस्कार प्रो० भगवती प्रसाद सिंह को पूर्व राष्ट्रपति श्री ज्ञानी जैल सिंह के करकमलों द्वारा प्रदान किया गया। बाद में यह पुरस्कार राशि महाराजश्री के संकल्प से श्रीमठ ने बढ़ाकर एक लाख रुपये कर दी। एक लाख रुपये का पुरस्कार पहली बार १९९३ में महामण्डलेश्वर स्वामी काशिकानन्दजी महाराज को काशी के सम्पूर्णानन्द संस्कृत विश्वविद्यालय में आयोजित एक प्रशस्त समारोह में प्रदान किया गया। समारोह की अध्यक्षता काशीराज महाराज विभूतिनारायण सिंह ने की। मुख्य अतिथि मध्यप्रदेश के

तत्कालीन मुख्यमन्त्री श्री दिग्विजय सिंह जी थे। काशीराज श्री विभूतिनारायण सिंह के ही करकमलों से एक बार और यह पुरस्कार मरणोपरान्त प्राप्त हुआ पण्डितराज राजराजेश्वर शास्त्री द्राविड़ को। इन विभूतियों के अतिरिक्त एक लाख रूपये का संस्कृत और संस्कृति के क्षेत्र में विशिष्ट योगदान के लिये काशी से दिया जाने वाला यह सबसे बड़ा पुरस्कार है। क्रमशः आचार्य कृष्णकान्त चतुर्वेदी (जबलपुर), आचार्य राममूर्ति त्रिपाठी (उज्जैन), पण्डित विश्वनाथ शास्त्री दातार (काशी), देवर्षि कलानाथ शास्त्री (जयपुर), प्रो. रामकरन शर्मा (दिल्ली), महाराजा डॉ. कर्णसिंह (पूर्व काश्मीर नरेश), श्री हनुमान प्रसाद शर्मा उर्फ मनु शर्मा (काशी), प्रो. रमाकान्त आंगिरस (चण्डीगढ़), प्रो. युगेश्वर (काशी विद्यापीठ), आचार्य कमलेशदत्त त्रिपाठी (काशी हिन्दू विश्वविद्यालय), आचार्य मंशाराम शर्मा (हरिद्वार), आचार्य वशिष्ठ त्रिपाठी (काशी), डॉ. विवेकीराय (गाजीपुर), प्रो. प्रभुनाथ द्विवेदी (काशी विद्यापीठ), डॉ. आनन्द शर्मा (जयपुर) डॉ. उदयप्रताप सिंह (सारनाथ), प्रो. कृष्णदत्त पालीवाल (दिल्ली), श्रीरामबहादुर राय (दिल्ली), आचार्य रामयत्न शुक्ल (काशी), विनायक मंगलेश्वर बादल (काशी)।

जगद्गुरु रामानन्दाचार्य स्वामी रामनरेशाचार्य के नेतृत्व में विद्वत सम्मान की एक और प्रशस्त प्रवृत्ति रही है साहित्य प्रकाशन की। उनके आचार्यत्व काल में श्रीमठ से अनेक प्रशस्त ग्रन्थों का प्रकाशन हुआ। इन ग्रन्थों से श्रीमठ की परम्परा, दार्शनिकता, उपासना पद्धति और उसके रचनात्मक कार्यक्रमों पर व्यापक प्रकाश पड़ता है। इन प्रकाशनों का आरम्भ महाराजश्री के पदाभिषेक के तत्काल बाद अत्यन्त संकुचित संसाधनों के दौर में श्रीमठ, प्रकाश पत्रिका के साथ हो चुका था। बाद में उसकी एक अन्य पत्रिका रामानन्द प्रकाश के भी कई अंक प्रकाशित हुये। इसके बाद ग्रन्थों के प्रकाशन का क्रम शुरू हुआ, जो निरन्तर जारी है। विगत वर्षों में प्रकाशनों के सम्पादन आदि में डॉ० उदयप्रताप सिंह ने लगन के साथ उल्लेखनीय योगदान दिया। ऐसे मुख्य प्रकाशित ग्रन्थ हैं -

१. किञ्चजाप्यम् - आचार्य राममूर्ति त्रिपाठी २. रामतापनीयोपनिषद् - आचार्य मुरलीधर पाण्डेय ३. जगद्गुरुशतकम् - आचार्य शिवजी उपाध्याय ४. श्रीरामरक्षास्तोत्रम् - हिन्दी अनुवाद सहित ५. श्री रामानन्द विजय - मंगलाप्रसाद (काव्य) ६. रामानन्द रामरसमाते - डॉ० उदय प्रताप सिंह ७. ऐतिहासिक आलोक में काशी और स्वामी रामानन्दाचार्य - अवधबिहारी

खरे ८. स्वामी रामानन्द के शिष्य और उपलब्धियाँ - डॉ० सुधाकर पाण्डेय ९. रामसहस्रनाम - जगन्नाथ शास्त्री तैलंग १०. श्रीमठ प्रकाश - प्रो० शुकदेव सिंह (सम्पादक) ११. श्रीमठ स्तुतिकुसुमांजलि - श्री जगन्नाथ शास्त्री तैलंग १२. आचार्य रामकरण शर्मा अभिनन्दन ग्रन्थ - श्री कमलेश दत्त त्रिपाठी १३. पायसपायी (उपन्यास) - श्री दयाकृष्ण विजय वर्गीय 'विजय' १४. तीर्थराज प्रयाग और कुम्भ महापर्व - डॉ० उदय प्रताप सिंह १५. 'श्रीमठ समग्र' दो खण्ड - डॉ० उदय प्रताप सिंह १६. श्रीरामानन्द सतसई : प्रो. प्रभुनाथ द्विवेदी १७. रामानन्दचरितम् - प्रो० प्रभुनाथ द्विवेदी १८. तीर्थराज प्रयाग और रामभक्ति का अमृत कलश- डॉ० उदय प्रताप सिंह १९. वैष्णवमताब्जभास्कर व्याख्या सहित- आचार्य जयकान्त शर्मा दिल्ली २०. सन्तों के सन्त कवि रामानन्द - डॉ० उदय प्रताप सिंह २१. द पायनियर ऑफ रामभक्ति - आचार्य कलानाथ शास्त्री, जयपुर २२. हरिद्वार समग्र- डॉ० उदय प्रताप सिंह २३. अभिनवरामानंद- स्वामीरामनरेशाचार्य– डॉ. उदय प्रताप सिंह २४. वैरागी की लोकयात्रा– डॉ. उदय प्रताप सिंह

रामानन्दाचार्य पदप्रतिष्ठित जगद्गुरु रामनरेशाचार्य जी महाराज की भूमिका धर्म, सम्प्रदाय, विद्या, संस्कृति के साथ-साथ कला के सरंक्षक स्वरूप में भी मुखर रही है। शिव की नगरी काशी नृत्य-संगीत कला का भी प्रशस्त केन्द्र रहा है। महाराजश्री ने वेदपाठ, यज्ञ अनुष्ठानादि के साथ-साथ श्रीमठ के माध्यम से कलाक्षेत्र को भी प्रोत्साहित किया। 'श्रीमठ संगीत महोत्सव' उनके संरक्षण में नृत्य-संगीत कला के ख्यातिलब्ध शास्त्रीय मंच के रूप में कला जगत के राष्ट्रीय क्षितिज पर विगत वर्षों में उभर कर सुस्थापित हो चुका है। श्रीमठ द्वारा आयोजित होने वाला दिव्य कार्तिक मास महोत्सव प्रतिवर्ष शरदपूर्णिमा के कोजागरी उत्सव के साथ उद्घाटित होता है। काशी में कोजागरी या दूसरे नगरों में भी श्रीमठ के महोत्सवों के अवसर पर स्थानीय प्रमुख कलाकारों की प्रस्तुतियाँ काशी में होती रही हैं, लेकिन विगत कुछ वर्षों में कोजागरी उत्सव काशी 'श्रीमठ संगीत महोत्सव' के रूप में आयोजित हो रहा है, जिसमें तीन दिनों तक निरन्तर देश के राष्ट्रीय और अन्तर्राष्ट्रीय ख्यातिलब्ध कलाकार गंगा और पंचगंगा के पवित्र प्रवाह को साक्षी मानकर अपनी प्रस्तुतियाँ मां लक्ष्मी को समर्पित करते हैं। इस समारोह के प्रतिष्ठा का बढ़ता यश सारे देश के कलाक्षेत्र को आच्छादित कर रहा है। इसका ताना-बाना बुनने में श्रीमठ के साथ अनन्य भाव से जुड़े श्री अरुण शर्मा,

मुकुंदलाल सेलट, रमणशंकर पंड्या, अमूल्य शर्मा और उनकी कलाप्रेमी मित्रमण्डली का विशिष्ट योगदान रहा है।

श्रीमठ के धार्मिक आयोजनों, समारोहों, महात्सवों प्रकाशनों एवं अन्यान्य गतिविधियों के समायोजन में जगद्गुरु रामानन्दाचार्य स्मारक सेवा न्यास और श्रीमठ महोत्सव न्यास जैसी संस्थाएँ महाराजश्री के संरक्षण, दिशानिर्देशन एवं आचार्य नेतृत्व में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते रहे हैं। श्रीमठ और उसकी शाखाओं में सन्तों के साथ विद्यार्थी वटुकों की भी बड़ी फौज धर्म क्षेत्र के कार्यकर्ता के रूप में दीक्षित-प्रशिक्षित हो रही है। श्रीमठ के अन्तः प्रबन्धन से जुड़े लोगों में जहां सन्त रामविनयदास जी का नाम सन्तों के बीच रहा है। सम्प्रति श्री जानकी जीवनदाक के प्रबन्धकीय नेतृत्व एवं पद्मनाभन जी आदि की सहयोगी भूमिका के साथ श्रीमठ के प्रबन्धकीय काम-काज में सन्तों, भक्तों एवं सेवकों का एक प्रशस्त समूह सराहनीय य़ोगदान दे रहा है।

●

# आचार्यश्री

**प्रेमनारायण सिंह**

कहीं पढ़ा था कि "आचारात् आचार्य" अर्थात् जो आचार पर अमल करे, अपने नित्य व्यवहार में आचार का पालन करे, वही आचार्य है। अब जिज्ञासा हुई 'आचार' क्या है? ज्ञात हुआ– **निर्विकार चिन्तन, निर्दोष स्वभाव और निष्पाप जीवन,** आचार के ये तीन अविभाज्य अंग है। स्पष्ट है, इन पर जो अमल करता है, सही अर्थों में वही आचार्य हो सकता है। बाल्यावस्था में पढ़ी-सुनी यह बात मेरे मन में एक कसौटी की तरह घर कर गयी। यद्यपि उक्त तीनों गुण (निर्विकार चिन्तन, निर्दोष स्वभाव और निष्पाप जीवन) वाले श्रेष्ठजन/आचार्य विरले ही मिलते हैं।

इसी दौरान स्वामीरामनरेशदास जी से भेंट हुई। एक ऐसा व्यक्तित्व जो सामने वाले को सहज ही सम्मोहित कर ले। छात्र जीवन के दिनों में साधु/ सन्यासी/बाबा लोगों से तो हमारी पटती ही नहीं थी। क्योंकि उपरोक्त तीन कसौटियाँ बीच में उपस्थित हो जाती थीं। किन्तु श्रीनाथजी मठ रसड़ा के तत्कालीन श्रीमहन्त लक्ष्मण गिरि जी के बाद श्रीरामनरेशदास ही वह वैरागी थे जिन्होंने प्रथम मुलाकात में ही अपनी अमिट छाप छोड़ी और सहज ही अपनी ओर आकृष्ट किया।

गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय हरिद्वार के सभागार में हुई प्रथम भेंट, तत्पश्चात् दशनाम संन्यास आश्रम, भूपतवाला, हरिद्वार में तीन दिनों तक आपका सान्निध्य और उसके बाद आगे चलकर अनन्तश्री विभूषित जगद्गुरु स्वामीरामानन्द जी की आचार्य परम्परा में रामानन्दाचार्य पद पर प्रतिष्ठित होने से लेकर आज तक अनुभवों, संस्मरणों की एक समृद्ध एवं सुदीर्घ थाती है, जिन्हें शब्दों में व्यक्त कर पाना असम्भव है। हाँ इतना अवश्य है कि– आचार्यश्री में उक्त तीनों गुण अपनी सम्पूर्णता के साथ विद्यमान हैं। वे रामानन्दाचार्य जी के योग्यतम उत्तराधिकारी हैं।

---

प्रो. शिक्षा शास्त्र विभाग, सम्पूर्णानंद संस्कृत विश्वविद्यालय, वाराणसी

सन् १९८९ में प्रो. शुकदेव सिंह ने वर्तमान आचार्यश्री के सम्बन्ध में लिखा था– "यह संयोग है कि इन दिनों श्रीमठ पर जिस तेजस्वी संत को पीठासीन किया गया है वह युवक होते हुए भी रामानन्द की प्रतिमूर्ति जान पड़ते हैं। उनकी कल्पनाएँ, उनका ज्ञान, उनकी वाग्मिता और सबसे अच्छी उनकी उदारता और संयोजन चेतना ऐसी है कि यह विश्वास किया जा सकता है कि स्वामी रामानन्द का व्यक्तित्व कैसा रहा होगा।" उन्होंने आगे लिखा– "स्वामी रामनरेशाचार्य में अपार उत्साह है। रामानन्दी वैरागी उत्साहों के साथ आधुनिक जीवन की तेजस्विता की पहचान भी उनमें है; लेकिन साधुओं और समाज के बीच अभी उनकी परीक्षा के लिए मंच बन रहा है। देखना होगा कि वे परम्पराओं और रूढ़ियों को किस सीमा तक स्वामी रामानन्द के मूल आदर्शों से जोड़ पाते हैं।"

प्रो. शुकदेव सिंह आज यदि हमारे बीच होते तो निःसंदेह गर्व करते कि तमाम बाधाओं के बीच वर्तमान आचार्यश्री कितनी कुशलता से स्वामीरामानन्द के कार्यों को सफलतापूर्वक न केवल विस्तार दिया है; अपितु स्वामीरामानन्द तथा वर्तमान के बीच एक सुदृढ़ सेतु की भूमिका का निर्वाह करते हुए लोकमंगल के कार्य में सतत् संलग्न भी हैं।

मैंने पूर्व में उल्लेख किया है कि– लगभग तीन दशक से अधिक के सान्निध्य में संस्मरणों, अनुभूतियों की एक लम्बी शृंखला है। किन्तु इतना सत्य है कि मिलने वालों को प्रत्येक बार एक नवीन अनुभव स्वामी जी के व्यक्तित्व की विशेषता बन जाती है। मुझे तो वे रामानन्द जी की प्रतिमूर्ति ही जान पड़ते हैं। संक्षेप में संयम, सहिष्णुता, सहजता, उदारता, गुरुता, धर्मपरायणता, लोकमंगल की उत्कट भावना, अपरिग्रह, सागर सी गहराई, आकाश सी व्यापकता, पृथ्वी जैसी धारण और पालन क्षमता, विद्वता और वग्मिता, संगठनात्मक दक्षता, संयोजनशीलता, विपरीत परिस्थितियों में भी असाधारण धैर्य जैसे अनेक गुणों का एक साथ एक व्यक्ति में दर्शन करना हो तो स्वामीरामनरेशाचार्य के व्यक्तित्व में ये सहज समाविष्ट हैं।

किसी विषय के गहन ज्ञान को सहज रूप में जन साधारण तक संप्रेषित करने की उद्भुत कला के धनी आचार्यश्री गूढ़ से गूढ़ तथ्यों को सरल एवं सुग्राह्य रूप में प्रस्तुत करने की अद्वितीय क्षमता रखते हैं। मार्च २०१२ में शिक्षाशास्त्र विभाग, सम्पूर्णानन्द संस्कृत विश्वविद्यालय, वाराणसी द्वारा "मूल्य शिक्षा : चुनौतियाँ और भावी स्वरूप" विषय पर एक राष्ट्रीय संगोष्ठी का

आयोजन किया गया था, जिसमें पाँच वर्तमान/पूर्व कुलपति एन.सी.टी.ई. के पूर्व अध्यक्ष एवं एन.सी.ई.आर.टी. के पूर्व निदेशक, एक दर्जन से ज्यादा ख्यातिलब्ध विद्वान् तथा दो सौ से ज्यादा प्रतिभागी थे। आचार्यश्री से मैंने निवेदन किया कि संगोष्ठी के समापन सत्र में वे अपना आशीर्वाद हमें दें। हमारा आग्रह स्वीकार कर आचार्यश्री पधारे और आशीर्वाद के साथ-साथ विषय पर अपना सारगर्भित वक्तव्य भी दिया। पूरे कार्यक्रम की रिकार्डिंग की गयी थी। उल्लेखनीय है कि आचार्यश्री का वक्तव्य इतना सहज एवं प्रभावशाली था कि कार्यक्रम के उपरान्त उनके भाषण की सी.डी. की मांग कई विद्वान/सुधी अध्यापकों द्वारा की गई और मुझे दर्जनों सी.डी. अतिरिक्त रूप में बनवाकर लोगों को देनी पड़ी।

ऐसा नहीं कि आचार्यश्री को सभी अनुकूल परिस्थितियाँ ही मिली हों। रामानन्दाचार्य पद पर प्रतिष्ठित होने के बाद प्रारम्भ के दिन संघर्षमय भी थे। किन्तु जिस धैर्य एवं कुशलता से आचार्यश्री ने न सिर्फ विपरीत परिस्थितियों पर विजय पायी बल्कि श्रीमठ की उत्तरोत्तर उन्नति तथा रामभाव का व्यापक प्रचार-प्रसार का क्रम निर्बाध रूप से जारी रखा वह स्मरणीय भी है और अनुकरणीय भी। यह गुण उन्हें अपने अन्य समकक्षों से अलग एवं विशिष्ट स्थान पर प्रतिष्ठित करता है। १९८८ से आज तक के वर्षों में श्रीमठ की ख्याति में श्रीवृद्धि, उसका विस्तार एवं चतुर्दिक विकास उल्लेखनीय है।

जगद्गुरु स्वामी श्रीरामनरेशाचार्य जी की षष्टिपूर्ति एवं रामानन्दाचार्य पद प्रतिष्ठा की रजत जयन्ती के शुभ अवसर पर उनके सुस्वास्थ्य एवं सुदीर्घ जीवन की ईश्वर से प्रार्थना है ताकि श्रीमठ की श्रीवृद्धि के साथ-साथ वे अपनी आध्यात्मिक ऊर्जा से जन मानस को आलोकित करते रहें, तथा निर्बाध रूप से रामभाव का प्रचार-प्रसार करते हुए लोक मंगल के विविध कार्य सम्पादित करते रहें। इसी मंगल कामना के साथ।

●

*भेंटवार्त्ता*

# स्वामी जी से साक्षात्कार : उदय प्रताप सिंह

**प्रश्न :** महाराजजी आप का जगद्गुरुरामानंदाचार्य पद पर अभिषेक कब हुआ? अभिषेक की प्रक्रिया क्या है? और जगद्गुरु पद की शुरुआत कब से हुई? क्या अन्य सम्प्रदायों में भी यह पद प्रतिष्ठित (सृजित) है?

**उत्तर :** उदयप्रताप जी आप संत साहित्य के अध्येता हैं। आप ने यह बहुत ही महत्त्वपूर्ण प्रश्न किया है। वस्तुत: जगद्गुरुरामानंदाचार्य पद पर मेरा अभिषेक ११/११/१९८८ ई. को हुआ। उस समय मैं हरिद्वार स्थित एक आश्रम में तपस्या कर रहा था और जिज्ञासु संत-विद्यार्थियों को दर्शनशास्त्र की विभिन्न शाखाओं का अध्यापन भी करता था। शताब्दियों पूर्व श्रीमठ के लुप्त होने के पश्चात् १९७७ ई. में परम तेजस्वी स्वामीभगवदाचार्यजी को रामानंदाचार्य पद पर अभिषिक्त किया गया। पर दैवयोग से एक वर्ष बाद ही उनका निधन हो गया। तदुपरांत १९७८ ई. में स्वामीश्रीशिवरामाचार्य का रामानंदाचार्य पद पर अभिषेक किया गया। उनके तिरोधान के उपरांत आज तक इस आचार्यपीठ की सेवा मेरे द्वारा सम्पन्न हो रही है। इस पद पर अभिषेक करने हेतु एक राष्ट्रीय समिति बनाई गयी थी जिसमें राष्ट्रीय स्तर के संत, श्रीमहंत, विद्वान, नागा एवं त्यागी विभूतियाँ थीं। कालक्रम से लोग दिवंगत होते गए। पद रिक्त हुए और एक निर्वाचक समिति 'श्रीमठ ट्रस्ट कमेटी' के रूप में बनी। सम्प्रति यही समिति श्रीसम्प्रदाय (रामावत) की मूल आचार्यपीठ है। मुझे इसी समिति ने रामानंदाचार्य पद पर अभिषिक्त किया। रामावत सम्प्रदाय का मानना है कि श्रीमठ हमारा एकमात्र मूल आचार्यपीठ है इसलिए इसकी संचालिका समिति ही पीठाधीश्वर एवं श्रीसम्प्रदायाचार्य जगद्गुरुरामानंदाचार्य के रूप में निर्वाचन हेतु पूर्ण समर्थ है।

डॉ. साहब जहाँ तक जगद्गुरु पद का प्रश्न है। सनातन धर्म के सभी मान्य एवं शास्त्रों से जुड़ी परम्पराओं के आचार्य और उन-उन सम्प्रदायों के आराध्य देव भी होते हैं। वे सनातन धर्म में

जगद्गुरु के रूप में मान्य हैं। इसलिए उनके अवतारभूत मध्यमाचार्यों को भी जगद्गुरु के रूप में व्यवहृत किया गया है। ईश्वर का जगद्गुरुत्व अनादि है अत: तदावतारभूत मध्यमाचार्यों का भी जगद्गुरुत्व अनादि है। उदाहरण स्वरूप रामावत सम्प्रदाय में श्रीरामानंदाचार्य मध्यमाचार्य के रूप में मान्य हैं। उन्हें ही जगद्गुरु के पद की प्रथम प्रतिष्ठा प्रदान की गई है।

**प्रश्न :** महाराज जी आप वर्तमानाचार्य हैं कृपया यह स्पष्ट करें कि रामभक्ति के प्रचार-प्रसार में रामानंदाचार्य की क्या भूमिका है?

**उत्तर :** डॉ. साहब सनातन धर्म में किसी भी आचार्य ने कोई नयी स्थापना नहीं किया है। स्थापित मूल्यों का ही व्याख्यान-प्रत्याख्यान कर, सर्वसुलभ बनाकर महल से झोपड़ी तक पहुँचाया है। इस क्रम में जिस आचार्य को जितनी सफलता मिली उसके आधार पर ही समाज ने उसका मूल्यांकन किया। ज.गु. शंकराचार्य, ज.गु. रामानुजाचार्य एवं मध्वाचार्य इत्यादि ने भी वेदों एवं तदनुकूल शास्त्रों का व्याख्यान करके ही उन-उन सिद्धांतों को प्रचारित किया। उन आचार्यों ने कभी भी यह नहीं कहा कि यह मेरा सिद्धांत है। यह तो शास्त्रों का ही सिद्धांत है। इसी प्रकार से रामानंदाचार्य ने भी अनादि रामभक्ति परम्परा जो वेदों एवं वेदानुकूल शास्त्रों में प्रभूत मात्रा में व्याप्त थी उसको समझकर, हृदयंगम कर तथा अपने चरित्र में उतार कर स्वयं व शिष्यों के माध्यम से जनप्रतिजन तक पहुँचाया। भक्ति एवं शरणागति का सिद्धांत भी स्वामीजी द्वारा निर्मित नहीं है। स्वामीजी उसके व्याख्याता और उससे अधिक उसके सफल प्रवर्त्तक (प्रयोगकर्त्ता) थे। स्वामी जी ने, सगुण भक्ति के प्रयोग में जहाँ पर अनेकानेक साधनों की अनुपलब्धता थी, वहाँ पर अपने कबीर, रैदास आदि शिष्यों को निर्गुण भक्ति की परिपूर्णता से मंडित कर हरिजन तथा पिछड़े वर्गों में रामभक्ति का प्रचार-प्रसार किया। गागरौनगढ़ के महाराजा पीपा को रामभक्ति से परिपूर्ण कर राजघरानों तथा उच्च वर्ग में रामभक्ति को विस्तार दिया। इसी प्रकार ब्राह्मण वर्ग से आए शिष्यों को रामभक्त बनाकर ब्राह्मण समाज को उससे जोड़ा। स्वयं तथा कबीरादि के माध्यम से अभारतीय धर्मों को स्वीकार किए लोगो को सनातन धर्म के पालन में पुन: प्रेरित किया, व्यवस्थित जीवन जीने का अवसर प्रदान किया। इसी क्रम में स्वामी रामानंद

ने स्वयं जनभाषा हिन्दी रचनाएँ लिखीं और अपने देशज शिष्यों को प्रेरणा देकर रामभक्ति का प्रचार हिन्दी के माध्यम से देश के अधिकांश भागों में किया।

**प्रश्न :** महाराज जी, स्वामी रामानंदाचार्य ने रामभक्ति का मुख्यालय काशी को क्यों बनाया जबकि यह शिवनगरी के रूप में मान्यताप्राप्त है तथा रामभक्ति का आदि केन्द्र अयोध्या, काशी से बहुत दूर नहीं है।

**उत्तर :** उदयप्रताप जी ध्यान दीजिए। स्वामीरामानंद विद्यार्जन हेतु काशी अल्पवय में ही आ गए थे। उनके आध्यात्मिक गुरु राघवानंदाचार्य उन्हें काशी में ही प्राप्त हुए– जो दक्षिण भारत के महात्मा थे। कहा जा सकता है कि रामभक्ति का केन्द्र तो काशी रामानंदाचार्य के पूर्व से ही स्थापित थी। अन्य वैष्णवाचार्यों ने भगवान् शंकर को वह आदर नहीं प्रदान किया जितना श्रीरामानंदाचार्य ने। अन्यान्य सम्प्रदायों ने उन्हें आध्यात्मिक समाज का कहीं से भी आदर नहीं प्रदान किया। परंतु रामभक्ति में परम्परया भगवान शंकर को परम वैष्णव की मान्यता प्रदान कर अन्यों से अधिक आत्मीय बना लिया। 'अध्यात्मरामायण' के प्रवक्ता भगवान शंकर ही हैं। 'श्रीरामचरितमानस' के मुख्यवक्ता वही हैं। यह सर्वविदित है कि वैष्णवों एवं शैवों के बीच अज्ञान एवं दम्भजन्य खाई बहुत पहले से ही निर्मित थी उसको पाटने का अद्‌भुत प्रयास स्वामीरामानंद ने काशी से प्रारंभ किया। पौराणिक मान्यता है कि भगवान विंदु-माधव के आमंत्रण पर ही भगवान शंकर काशी आए।

**प्रश्न :** महाराज जी आधुनिक काल में समाज के लिए धर्म की क्या उपयोगिता है? कृपया स्पष्ट करें।

**उत्तर :** अनादि काल से मनुष्य ही नहीं सभी प्राणियों ने अपने विकास की चिंता भी की है और प्रयास भी किया है। उसके आधार पर उनका विकास होना दिखता भी है, इसी को ध्यान में रखकर सृष्टि निर्माता ईश्वर ने अपनी दिव्य वाणी में सर्वप्रथम मनुष्य के लिए कहा था– 'धर्मंचर'। इसी 'धर्मंचर' की व्याख्या एवं प्रयोग आज तक हो रहा है। यह चिंतन व्याख्या एवं प्रयोग सभी दिशा, काल, क्षेत्र के मनुष्यों के लिए परमौषधिभूत है, नितांत आवश्यक है। समझना चाहिए कि धर्म केवल मृत्यूपरांत ही जीवन को उत्कर्ष नहीं प्रदान करता; अपितु वह अभ्युदय भी करता है। यतोअभ्युदयनि:श्रेयस सिद्धिः सधर्मः। उदाहरण

के लिए हम दया को ले सकते हैं। दया की व्याख्या है– 'परदुखप्रहणेच्छा'– दूसरे के दुख को दूर करने की इच्छा एवं प्रयोग। संसार में सभी को दया की अपेक्षा होती है और जब हमें दूसरों से दया की अपेक्षा है और हम दूसरों के लिए दया नहीं करें तो दया कहाँ रहेगी? हमारा, समाज और विश्व का तब क्या होगा? माता-पिता की सेवा को भी धर्म का श्रेष्ठ रूप माना गया है। उनकी सेवा को नकारना कृतघ्नता है अधर्म है जिन्होंने (माता-पिता) संतान को अपना सर्वस्व दे दिया, शेष आजीवन देने को संकल्पित हैं। ऐसी स्थिति में व्यक्ति, समाज और विश्व का क्या होगा? धर्म इसी का विधान करता है। धर्म में प्रतिकर्तव्यता का भाव होता है। यदि इस भाव से मनुष्य विरहित हो जाएगा तो समृद्धि, सौन्दर्य व सौमनस्य का क्षरण होगा। इसीलिए यज्ञादि धार्मिक कर्मों का संपादन किया जाता है।

युवापीढ़ी को भी अपने विकास की वैसी ही चिंता है जैसे पूर्व-प्राचीन पीढ़ी को रही है। युवापीढ़ी जैसे वायु, जल व भूमि को नहीं छोड़ सकती है वैसे धर्म को भी अपने से पृथक् नहीं कर सकती। जरूरत है उसके धार्मिक स्वरूप को समझने की। उसे धर्म को स्वीकार करने में कोई अड़चन नहीं है। सम्राट अशोक के पुत्र महेन्द्र और पुत्री संघमित्रा को भी किसी ने धर्म की सच्ची भूमिका समझायी थी। वे दोनों यथेच्छ सुखोपभोग कर सकते थे।पर दोनों धर्म का प्रचार करने श्रीलंका तक चले गए। युवापीढ़ी के लिए ये दोनों आदर्श हैं।

**प्रश्न :** महाराज जी क्या धर्म और राजनीति का समिश्रण उचित है?

**उत्तर :** देखिए डॉ. सिंह धर्म की आवश्यकता जैसे व्यष्टि रूप में मानव को है उसी तरह मानव समष्टि को भी है। मानव समष्टि (राष्ट्र) का ही अस्तित्वबोधक, उन्नति संपादक एवं सौंदर्यवर्द्धक राजनीति है– तो उसे धर्म की आवश्यकता क्यों नहीं होगी? धर्म के अभाव में कोई भी राष्ट्रीय व्यक्तित्व नहीं बन सकता है। धर्म रहित मनुष्य जैसे हेय बन जाता है वही गति राजनीति की भी हो जाएगी। आज विभिन्न राष्ट्रों में जितने भी राजनीतिक प्रदूषण हैं वे अधर्म के कारण ही हैं। अब तो चीन भी मार्क्स के इस कथन से किनारा कर लिया है कि 'धर्म अफीम है'। चीन स्वीकार करने लगा है कि धर्म भी मानव विकास

की एक सहज प्रक्रिया है जिसमें उसका उत्कर्ष दिखता है। प्रसिद्ध राजनीतिक चिंतक डॉ. राममनोहर लोहिया कहा करते थे कि 'राजनीति अल्पकालिक धर्म है और धर्म दीर्घकालिक राजनीति है।' महात्मा गाँधी को ही देखें वह कहा करते थे कि राजनीति धर्म के बिना शव के समान है। यह भी कहते थे कि मेरा सब कुछ कोई ले सकता है– पर 'रघुपति राघव राजाराम' मुझसे नहीं ले सकता। राम बिना तो मैं निर्जीव हूँ।' राजनीति के शिखर पुरुष धार्मिक नैतिकता को राजनीति से जोड़ने के प्रबल पक्षधर हैं।

**प्रश्न :** महाराज जी धन, स्वयंभू भगवान् विविध पंथ और नकली धर्माचार्यों के हस्तक्षेप से धर्म का क्षेत्र कितना प्रभावित हुआ है?

**उत्तर :** आज धर्म-क्षेत्र में अनेक पंथों का प्रादुर्भाव सही भी है और गलत भी। जिनका और जिन पंथों का मूल उत्स वेद व वेदानुकूल शास्त्र हैं वे सामयिक व नये स्वरूप में भी सही हैं। जो इनसे इतर हैं वे गलत हैं। ऐसे जो दम्भ एवं वैयक्तिक महत्त्वाकांक्षा द्वारा पंथों एवं पोथियों का निर्माण कर लिए हैं जैसे अकबर ने दीन ए इलाही चलाया। वह राजनीतिक महत्त्वाकांक्षा के साथ धार्मिक महत्त्वाकांक्षा को विकसित कर रहा था। नकली पंथों व पैसे के बल पर बने धर्माचार्यों से न व्यष्टि का और न समष्टि का ही कल्याण संभव है– यहाँ तक कि धर्माचार्य का स्वांग रचने वाले का भी आध्यात्मिक उत्कर्ष नहीं होता है। आज तो व्यवस्थित पंथों में भी अनेक विकृतियाँ समाहित हो गई हैं जो समाज, राष्ट्र एवं मानवता को क्षतिग्रस्त कर रही हैं। उनके सुधार के लिए अपेक्षित प्रयास नहीं हो रहे हैं– यह चिंता का विषय है। वैसे प्रकृति, काल और समाज अव्यवस्थित को स्वयं ही निगल जाता है– ओशो इत्यादि आधुनिक धर्माचार्यों को इस संदर्भ में देखा जा सकता है। उनकी दुर्दशा किसी से छिपी नहीं है। गोस्वामी तुलसीदास ने ऐसे ही लोगों की खबर ली है– **दंभिन निज मत कल्प करि प्रगट किए बहुपंथ।।**

**प्रश्न :** महाराज जी कुछ लोग धर्म को लोककल्याण से जोड़कर देखते हैं तो कुछ लोग मात्र आध्यात्मिक दृष्टि से। इसमें कौन सा पक्ष मानव के लिए श्रेयस्कर है?

**उत्तर :** सनातन धर्म में धर्म की परिभाषा से जो स्वरूप निष्पन्न होता है वह

केवल आध्यात्मिक उन्नति का ही साधक नहीं है वह तो लौकिक उन्नति का साधन करते हुए भी परलोक को सिद्ध करता है। धर्म का यह स्वरूप सनातन धर्म के सभी व्यवस्थित परम्पराओं में मान्य है। धर्म यदि केवल आध्यात्मिक व परलोक का साधक होता तो लोगों के जुड़ाव की मात्रा अत्यल्प होती क्योंकि समाज का अधिकांश भाग लौकिक जीवन और समस्याओं के समाधान हेतु समर्पित है। वेदव्यास जी ने इस संदर्भ में ललकारते हुए कहा है कि मैं अपनी दोनों भुजाओं को उठाकर चौराहे पर चिल्ला-चिल्ला कर कह रहा हूँ कि धर्म से अर्थ और काम भी सम्पन्न होते हैं। क्यों नहीं इसका सेवन करते, क्यों नहीं इसे आचरण में सम्मिलित करते– 'धर्मात् अर्थश्च कामश्च स किमर्थं न सेव्यते'। उपर्युक्त भावों का अद्‌भुत व्याख्यान है महर्षि कणाद का निम्नसूत्र 'यतो अभ्युदय निःश्रेयस सिर्द्धिसधर्मः' सनातन धर्म में मृत्यु के बाद पुनर्जन्म अवश्यंभावी है। यह धारणा श्रेष्ठ अनादि और सर्वमान्य है। उत्तर जन्म का सब कुछ पूर्वजन्मजन्य ही होता है। हमारा उत्तर जन्म तो लौकिक ही है। लौकिक का सम्मार्जन कर अलौकिक बनाना ही धर्म का उद्देश्य है। अतः लोक कल्याण व अध्यात्म को एक दूसरे से जोड़ना जोड़कर मानसिक उत्कर्ष प्रदान करना धर्म की अहं भूमिका है।

**प्रश्न :** महाराज जी आज सम्पूर्ण देश में स्वामी विवेकानंद की सार्द्धशती मनायी जा रही है। विशेषतः उनकी इस धारणा का उल्लेख किया जा रहा है कि वेदांत और मानव सेवा में विवेकानंद जी त्याग व मानव सेवा को चुनना श्रेयस्कर मानते हैं– इस कथन पर आप की क्या सम्मति है?

**उत्तर :** देखिए डॉ. साहब वेदांत के सर्वश्रेष्ठ ग्रंथ 'ब्रह्मसूत्र' में एक अहं प्रश्न उपस्थित किया गया है श्रवण, मनन एवं निधिध्यासन के सतत अभ्यास से ब्रह्म ज्ञान की प्राप्ति होती है। मनुष्य के परिपूर्ण जीवन प्राप्त करने के उपरांत भी इनकी आवश्यकता जीवन पर्यंत बनी रहती है। पहले वह साधन रूप में था अब स्वभाव के रूप में परिणत हो जाता है। संन्यास जीवन का मुख्य उद्देश्य अनादिकाल से त्रिविध संतापों (दैहिक, दैविक, भौतिक) से पीड़ित जीवन का परमोत्कर्ष, परमानंद की प्राप्ति एवं सम्पूर्ण अनर्थ की निवृत्ति है। इस क्रम में लोकशिक्षा के लिए सिद्धावस्था के बाद भी ज्ञानी, भक्त एवं शरणागत ईश्वर

की सेवा के रूप में कुछ सत्कर्मों (मानव सेवा) को करते हैं; लेकिन अपनी मूलभूत साधना को तिलांजलि देकर नहीं। मानव सेवा कल्याणकामी व कल्याणप्राप्ति का मुख्य उद्देश्य नहीं है। यह सनातन धर्म के अनुरूप नहीं है। विवेकानंद के गुरु श्रीरामकृष्ण परमहंस तो आजीवन सहज साधना में ही निमग्न थे। माँ के दर्शन से ही उनकी लौकिक सेवाएँ सम्पन्न हो जाती थीं। चिंतन की उत्कर्षता से भी भौतिक समस्याओं का समाधान संभव है। स्वामीविवेकानंद गाजीपुर स्थित पवहारी महाराज से बहुत प्रभावित थे, सत्संग में वह उन्हें उपदेश द्वारा बता चुके थे कि आत्मचेतना की प्रखर व गहन निष्ठा चिंतनकर्म का प्रस्फुटन करती है। इस सम्बन्ध में भगवद्गीता का अभिप्राय इसका अनुपम प्रकाशक है– तस्मात् सर्वेषु कालेषु मामनुस्मरयुद्धय च' अर्थात् मुझे सतत स्मरण करो तथा युद्ध भी करो। अपने लिए तथा समाज के लिए संप्राप्त कर्त्तव्यों का पालन करो। समष्टि के कर्त्तव्यों का पालन ही तो मानव सेवा है। स्मरण छोड़कर कर्तव्यपालन करने वाले लोग तो असंख्य हैं जो सामान्य जीव की कोटि में हैं वे कहीं से भी समाज के लिए वरदानं नहीं हैं। अतएव आध्यात्मिक वैशिष्ट्य के साथ ही मानव सेवा करणीय है।

**प्रश्न :** महाराज जी अंतिम जिज्ञासा यह है कि आप के आराध्य श्रीराम का कौन सा स्वरूप आज की युवा पीढ़ी को प्रभावित करता है ?

**उत्तर :** सभी कालों में समान रूप से यह तथ्य व्याप्त एवं समादृत रहा है कि जो हमारे स्वरूप का समादर करे वह हमारे लिए अधिक प्रिय एवं प्रेरक होता है। आज के युवावर्ग के लिए भी यह बात समान रूप से लागू होती है। युवाओं को जो सम्मानित करता हो, महत्त्व देता हो वह युवाओं के आकर्षण का, प्रेरणा का अवश्य केन्द्र बनता है। भगवान् श्रीराम का बाल चरित्र इसका सुस्पष्ट उदाहरण है। महाराज दशरथ भोजन के अवसर पर श्रीराम को बुलाते हैं, लेकिन वे नहीं आते। कौशल्या पकड़ना चाहती हैं– पर वे दूर भाग खड़े होते हैं। इसके पीछे यही भावना काम कर रही है कि पिता जी केवल मुझे बुलाते हैं मेरे मित्रों को नहीं। इन भावों का प्रकाशक है तुलसीदास का कथन– **नहिं आवत तजि बाल समाजा।**

भगवान श्रीराम ने सुग्रीव को पीड़ा मुक्त करने के लिए आततायी

बालि को मारा। बालि और सुग्रीव का विरोध परिवार, समाज, धर्म एवं राष्ट्र की सभी मान्यताओं को धूल धूसरित कर रहा था जिसका वर्णन रामायणों में है। बालि को मारकर श्रीराम ने सुग्रीव को खोया हुआ सम्मान, खोयी पत्नी तथा राज्य को वापस दिला दिया। ऐसी अवस्था में यह बात कहीं से भी ध्यान में आनेवाली नहीं थी कि अंगद को भी सुरक्षा एवं युवराज के रूप में जीवनोत्कर्ष प्राप्त हो सकेगा। मेरी दृष्टि में यह इतिहास की अनोखी घटना है। युवा अंगद को सुरक्षा एवं पदोत्कर्ष देकर श्रीराम ने युवकों को प्रेरणा दी। श्रीराम ने अपने वनवासी काल में तथा सिंहासनारूढ़ काल में वृद्धों एवं प्रौढ़ों के साथ अपने रामराज्य संस्थापन एवं विस्तारण अभियान में युवाओं को भरपूर महत्त्व दिया। श्रीराम का यह चरित आज के युवाओं के लिए परम प्रेरक है।

●

# ज.गु.रामानंदाचार्य श्रीरामनरेशाचार्य से भेंटवार्त्ता : सत्येन्द्र शर्मा

धर्म, समाज, परिवार और सत्ता-तन्त्र से व्यक्ति का सम्बन्ध अपरिहार्य रहा आया है। समय के बदलते प्रवाह में भी ये सम्बन्ध बने चले आए हैं। अलबत्ता सम्बन्धों के बर्ताव में बदलाव होता रहा है। व्यक्ति के संस्कार, अध्ययन-क्षेत्र, जीवनानुभव, भौगोलिक परिस्थितियाँ आदि हमारी जीवन शैली और दृष्टि का निर्माण करती है। इसका समुच्चय ही शायद संस्कृति है। व्यक्ति-समाज के समझ की सीमाएँ धर्म का स्थूल-सूक्ष्म स्वरूप खड़ा करती है किन्तु धर्म और संस्कृति का कोई स्वायत्त स्वरूप भी है या नहीं? और उसे मानव-जीवन में किस तरह बरता जाना चाहिए? मैंने इन दो मूलभूत जिज्ञासाओं को लेकर श्रीमठ पंचगंगा काशी के पीठाधिपति जगत्‌गुरु रामानन्दाचार्य श्री रामनरेशाचार्य जी से एक भेंटवार्ता की। वे न सिर्फ़ भारतीय परम्परा की विद्यमान उजली कड़ी है, वरन् दर्शन, न्याय, व्याकरण और तर्कशास्त्र के विद्वान अध्येता होने के साथ ही लोक-जीवन के व्यवहारविद् भी हैं। प्रस्तुत है उनके साथ तीन चरणों में हुई बैठकों का ब्यौरा। यह आकलन तो पाठक ही कर सकेंगे कि मेरी जिज्ञासाएँ उनके भी काम की है या नहीं? —सत्येन्द्र शर्मा

**प्रश्न : रामसेतु इन दिनों राष्ट्रीय स्तर पर एक प्रमुख मुद्दा बनकर उभरा है, जिसकी गूँज बाहर तक सुनाई दे रही है। आप क्या सोचते हैं?**

**उत्तरः** रामसेतु की चर्चा अपने यहाँ इतिहास, पुराणों में पर्याप्त मात्रा में हुई है। उसके माध्यम से भगवान् श्रीराम के द्वारा नियोजित, संरक्षित, प्रेरित सेना जा करके लंका में आसुरी शक्ति के विनाश के लिए कारगर हुई तो उसका वह स्वरूप अब नहीं है, लेकिन अवशिष्ट भाग तो उससे जुड़ा ही हुआ है। मेरा मानना है कि उसका मूल्यांकन प्राचीन और आधुनिक दोनों दृष्टियों से होना चाहिए। पुरातात्विक दृष्टि से प्राचीन धरोहरों को संरक्षित रखा जाना चाहिए; क्योंकि शास्त्रों में वर्णित है कि कलियुग में स्थान की पूजा होती है–**'कलौ**

---

प्राचार्य राजकीय महाविद्यालय, सतना (म.प्र.)

**स्थानानि पूज्यन्ते।'** हो सकता है कालक्रम से गंगा भूमि में समा जाए और उसका यह प्रवाह न रहे लेकिन लोग उस क्षेत्र को प्रणाम कर शक्ति अर्जित करेंगे। पुराणों में कहा गया है कि धार्मिक, आध्यात्मिक शक्ति के केंद्र यदि उस रूप में नहीं है तो भी उस स्थान को महत्व मिलना चाहिए। क्योंकि उसके पूजन व दर्शन से शक्ति मिलती है। इसी तरह रामसेतु की महिमा का वर्णन करते हुए बतलाया गया है कि जो उस स्थान का दर्शन या पूजन करेगा, उसे दिव्यधाम की प्राप्ति होगी। हालाँकि देश पुरातत्व के लिए न जाने कहाँ-कहाँ क्या-क्या कर रहा है? परन्तु रामसेतु के महत्व को ओझल करके, व्यापारिक महत्व को प्रमुखता देना यह कहीं से भी अच्छा नहीं है। मैं समझता हूँ कि इस धन का गौरव भारतभूमि को ही नहीं संसार की भूमि को करना चाहिए। आखिर **जिस आतंकवाद की समस्या से पूरी दुनिया विह्वल हो रही है।** उस आतंकवाद के निराकरण में रामसेतु की जितनी भूमिका है, उतनी इतिहास में कहीं नहीं। मेरा मानना है कि सरकार की अपनी जो लोकतान्त्रिक दृष्टि है, उसमें रामसेतु को महत्व देते हुए व्यापार के लिए कोई दूसरा रास्ता निकाला जाना चाहिए। क्योंकि हमारा कर्त्तव्य है कि उस स्थल को हम संरक्षित रखें। इतना ही नहीं उससे प्रेरणा भी लें कि हमें इसी तरह की भूमिका का निर्वाह करना है—जैसा श्रीराम ने किया।

**प्रश्न : रामसेतु को वैज्ञानिक या तकनीकी दृष्टि से अप्रामाणिक और भौगोलिक दृष्टि से बालू का उठान माना गया है, तो क्या आस्था के आगे तर्क या प्रमाण को तिलांजलि दे दें?**

**उत्तर :** यह आस्था भर की बात नहीं है, वरन् प्रमाण भी है, जो आस्था कपोल कल्पित, अनुपयोगी और कसौटी में खरी नहीं उतरती वह लुप्त होती जाती है। तमाम परम्पराएँ लुप्त हो गयीं, वार्ताएँ और संस्कार लुप्त हो गये लेकिन न वाल्मीकि रामायण लुप्त हुई और न उसकी बातें और न ही राम लुप्त हुए।

विज्ञान की कसौटी में जो नहीं आयेगा क्या वह सब हमारी आस्था और विश्वास को निगल जायेगा? विज्ञान की कसौटी में माता-पिता का महत्व कहाँ प्रमाणित है **'मातृ देवो भव'**, **'पितृ देवो भव'**। यह विज्ञान के थर्मामीटर में नहीं है और पूरी दुनिया में इसकी मान्यता है। इसलिए हमारी आस्थाओं को शक्ति देने वाली परम्पराओं को, जिनसे समाज का निर्माण होता है, उसके आधार पर हम चलते हैं। वेद, इतिहास और पुराणादि से जो सन्देश हमें मिलते

हैं उनको हल्के से मत लीजिए, वह अन्ध श्रद्धा नहीं है। उसके पीछे जो जीवन-दृष्टि, विकास हमसे जुड़ा हुआ है उसे हम देखें। नकली चावल से भात नहीं बनता। बात बन रहा है तो वह अपने असली होने का प्रमाण दे रहा है। विज्ञान ने ही तो उसको देखा कि वह स्थल भरा हुआ है, ऊँचा है, भिन्न है और इतिहास तो है ही– परम्परा है, आस्था भी है। गीता में भगवान ने कहा है– **'यो यत् शृद्धत सएव सा।'** आस्था ही मनुष्य का आखिरी स्वरूप होता है। आप कहाँ श्रद्धावान हैं— परिवार के लिए, जाति के लिए या राष्ट्र के लिए। यदि हम राम के कृतित्व में आस्थावान हैं, राम की संस्कृति में आस्थावान हैं तो हम अन्ध श्रद्धालु नहीं हैं। विज्ञान की जहाँ सीमाएँ हैं, जहाँ उसकी समझ नहीं है, वहाँ आस्था ही उसका पोषण कर रही है और अनादि काल से कर रही है।

**प्रश्न : हमारे राष्ट्रीय समाज में राम जन्मभूमि का प्रश्न पहले से ही विद्यमान है, उसका भी अभी तक कोई हल नहीं निकला। क्या उसके समाधान की कोई दिशा आप देखते हैं? और यह एक नया मुद्दा?**

**उत्तर** : जब मैं नया-नया यहाँ पर रामानंदाचार्य बनकर आया था तो पत्रकारवार्ता में एक पत्रकार ने कहा था कि इस गड़े हुए भूत को उखाड़ने की क्या जरूरत है? आपके प्रश्न की ध्वनि भी वैसे ही है। बहुत दिनों से जो चल रहा है यदि समाधान नहीं हुआ है तो उसको क्या वैसे ही छोड़ दिया जाए? **देश में बहुत दिनों से गरीबी चल रही है तो उसकी चिन्ता हमें नहीं करनी चाहिए क्या?** छोड़ दें उस मुद्दे को? मैंने कभी कहा था मान लीजिए कोई वामपन्थी सरकार आ जाये और कल्पना कीजिए कि गाँधी की समाधि को उखाड़ फेकें? जैसे रूस में लेनिन की समाधि का हुआ और फिर काँग्रेसी सरकार आवे और कहे कि हम महात्मा गाँधी की समाधि को फिर बनायेंगे को क्या उनको यह उत्तर दिया जा सकता है कि यह गड़े हुए भूत को उखाड़ना है और जो हो गया सो हो गया। तो यह गड़ा हुआ भूत नहीं है यह हमारी आस्था का, गौरव का, उल्लास का, हमारे श्रेष्ठ धर्म पर जो चोट हुई है, उसका प्रश्न है। हम उसको पुनः प्रतिष्ठा देंगे तो हमारी जो पीड़ाएँ हैं, हीन भावनाएँ हैं उससे उबरेंगे। हमारे तमाम उत्कर्ष जो दबे हुए हैं, वह खुलेंगे। वहाँ मंदिर बनाना चाहिए। अब वो मामला न्यायपालिका में है, जो सर्वोच्च है। इस मामले को जानबूझकर लटकाया गया है। हमारे राष्ट्राध्यक्षों और राजनयिकों को यह आभास नहीं है कि यह देश के लिए कैन्सर होगा। मैंने

एक बार **राजीव गाँधी जी** से कहा था यदि इस मामले को आप लोग लम्बायेंगे तो अनिष्ट होगा। आप जायेंगे, आपकी पार्टी भी जायेगी और आप ये हश्र देख रहे हैं कि कांग्रेस पार्टी कैसे सड़क पर आ गयी थी और जब दस वर्षों बाद सत्ता में आयी भी तो दूसरों के सहारे सरकार चलानी पड़ रही है। ये कैसा मामला है, जिसका निर्णय ही नहीं हो पा रहा है। **फैजाबाद की फाइलों में राम जी सड़ रहे हैं** जबकि तमाम फ़ाइलें रोज निकलती हैं, निर्णय होते हैं, अरे! न्याय, न्याय है वो किसी को भी मिलना चाहिए। अभी तमाम विधायक, मन्त्री सब फाँसी को जा रहे हैं। वो होगा। किसी से आपको क्या डर लग रहा है–सच बात बोलने में।

दूसरी बात, लोगों को समझाया जाय। मेरा मानना है कि बुद्धितत्व पक्षपाती होती है। **वाचस्पति** एक दार्शनिक हुए उन्होंने लिखा है– **"तत्व पक्षपातो ही गोपाय स्वभावः।"** किन्तु आज तक कोई संगोष्ठी हुई क्या? इसके लिए एक राष्ट्र-संगोष्ठी आयोजित हो। दोनों पक्ष के चुनिन्दा लोग इकट्ठे हों और बात हो कि आप क्या चाहते हैं? आपस में कटकर मरना चाहते हैं? व्यापार नहीं चाहते हैं? भाईचारा नष्ट हो जाये? मानवीय भा़वना, धार्मिक भावना नष्ट हो जाए? यह सब हो या सद्‌भावना का विकास हो। रामजन्मभूमि में बाबरी मस्जिद का क्या औचित्य है? उनका तीर्थ है क्या वहाँ? सरजू के लिए उनके मन में क्या महत्व है? अरे! बाबर ने गलती की उसको मानो कि गलती हुई और कहो कि आप मन्दिर बनाइए, नहीं तो सारा देश गुजरात बन जायेगा और ऐसे गुजरात में न मैं जाऊँगा, न कोई मौलवी जायेगा, न काँग्रेसी जायेगा न भाजपाई जाएगा। निरीह लोग मारे जायेंगे जो संसार का सबसे गर्हित कर्म है। यदि यह बात राष्ट्रीय स्तर पर समझा दी जाए तो लोग मानेंगे, यह वैचारिक तरीका है।

**प्रश्न : अच्छा तो धर्म बाहर का उपादान है या भीतर का विश्वास?**

**उत्तर :** दोनों, दोनों हैं। उदाहरण लीजिए– हम सत्य में निष्ठावान हैं, सत्य की निष्ठा भीतरी चीज है लेकिन जब हम सत्य में निष्ठावान होंगे तो वाणी का प्रयोग करेंगे। उसके अनुसार आचरण करेंगे तो वो बाहर आ गया। ये ऊर्जा है आप उसे दूसरे शब्दों में समझें कि आप भोजन करते हैं तो ऊर्जा बनती है, वो दिखती नहीं है लेकिन जब हम उसका उपयोग करते हैं तो उसका Production दिखता है। ऊर्जा जो भोजन से, वायु से तमाम चीजों से बनी है लेकिन उससे कुछ किया तो दिखा, ये देखिए (कि तौलिए एक जगह

से दूसरी जगह उठाकर रखते हुए)। इस तरह धर्म Energy है। व्यवस्थित कर्मों के द्वारा शास्त्रों, पुराणों द्वारा निर्धारित जो अत्यन्त परिष्कृत कर्म है, वह धर्म है। मैं लोगों को कहता हूँ कि कर्म करने से कोई बच नहीं सकता, लेकिन कर्म करने की जो अत्यन्त परिष्कृत विधा है, उसी को धर्म कहते हैं। कोई आदमी भूखा है, चिल्ला रहा है, दरिद्र है, परिस्थितियों से टूटा हुआ है, जब आप उसे दो रुपये दे देते हैं तो उससे जो आपकी ऊर्जा बनती है, तुरन्त जैसे Glucose पीने से बनती है। वो ऐसा भीतरी उपादान नहीं है, जिसे छुपा ही रहना है अन्तःकरण में। वह बाहर प्रकट होता है और वहीं सही समाज का निर्माण करता है। धर्म जिसकी अपेक्षा सारे संसार को है। Energy तो जब किसी को मारते हैं तब भी लगती है, सहलाते हैं तब भी। वह नकारात्मक है ये पुण्यात्मक।

**प्रश्न : अक्सर धर्म, समूह में जा कर कर्मकाण्ड का रूप ले लेता है। वह अनुष्ठानों के चक्कर में सामूहिक आरतियों और नमाज़ों में बदल जाता है। अनुदार और जड़ हो जता है। तो धर्म अन्तर्मन की साधना है या बाहर का शोर और झाँकी?**

**उत्तर :** भगवान की आराधना की कई विधियाँ हैं– पूजन की, अर्चन की। कोई ध्यान करता है वह पूजन है, कोई नाम लेता है उसका वह भी पूजन है। उनकी परिक्रमा करता है और उनके गुणों का गान करता है, यह भी पूजन है। **'श्रवणं कीर्तन विश्व स्मरणं।'** ये सब स्वरूप हैं आराधना के। उसी में यह भी स्वरूप है कि हम भगवान को स्नान करा दें, माला पहना दें। सूक्ष्मता में जाने के लिए स्थूलता से जाना पड़ता है, जैसे आप यहाँ आए हैं तो हमने आपको थोड़ा-सा प्रसाद दिलवाया है लेकिन उसके पहले और बाद में ज्यादातर तो वाणी से, भावना से, मन से भी आपका सत्कार और आत्मीय भाव का प्रदर्शन कर रहा हूँ। इसीलिए मूर्ति आराधना को नकारा नहीं जा सकता।

**प्रश्न : मेरा आशय भारी तादाद में बैठायी जा रही मूर्तियों और उनके जल विसर्जन......**

**उत्तर :** (बात काटते हुए)-भले आदमी! लोगों की संख्या पर तो नियन्त्रण नहीं कर रहे हो, मूर्तियों की चिन्ता आपको सता रही है– एक, सवा अरब हो गये हैं हम। सराकार ने अरबों, खरबों लगा दिया, लोग खा गये और परिवार नियोजन धरा रह गया। क्या और समस्याएँ नहीं हैं? उन पर नियन्त्रण नहीं, आराध्य देव की मूर्ति बनी तो जल की समस्या बढ़ गयी क्या? आप देखिए

कि जो माइयाँ एक बाल्टी में काम चला लेती थीं, वो पच्चीस बाल्टियों का उपयोग करती हैं। इतने कपड़े हैं लोगों के पास जैसे प्रदर्शनी का सामान हो। इन संसाधनों के साथ बेपरवाही का, अपव्यय का तथ्य तो है ही इसलिए ये जो पक्ष है स्थूल दृष्टि का है। मैं तो चाह रहा हूँ हर आदमी के घर में मूर्ति हो। **बिड़ला जी** का एक बड़ा घराना है उनके घर में इतना सुन्दर मन्दिर है, जितना हमारे मठ में नहीं। और परिवार के प्रत्येक सदस्य के अपने ठाकुर जी हैं, जब हमारी पत्नी, हमारी बेटी, आल्मारी हमारी, अटैची हमारी तो ठाकुर जी भी हमारे अपने। विसर्जन की कौन-सी समस्या है? नहीं विसर्जन करेंगे तो उनकी जो प्राण प्रतिष्ठा वाली रीति है, उसी रीति से बोल दिया कि **'गच्छ-गच्छ।'** जहाँ से आए हैं, वहीं जाइए और एक जगह रख दिया प्रतिमा को। आज जो अपव्यय की फूहड़ झाँकी दिखाई पड़ रही है, क्या ये सुखद हैं? महँगे-महँगे कपड़े बण्डलों में आ रहे हैं, बड़े-बड़े क्लब बन रहे हैं, बढ़ रहे हैं। रात्रि में नाचने वाले नर्तक बढ़ रहे हैं, पीने और नाचने वालों की तादाद ज्यादा है या मूर्तियों की? इसी प्रसंग में मैंने एक बार दिल्ली के **पुरुषोत्तम अग्रवाल जी** से उनके यह कहने पर कि– धार्मिक आयोजनों में बहुत पैसे खर्च किये जा रहे हैं और उसकी उपलब्धि नहीं है– कहा था जवाहरलाल विश्वविद्यालय में (JNU) जितने पैसे खर्च होते हैं उतने पूरे तीर्थ में नहीं होते। भले आदमी और उसका Production क्या है? कौन-सा वैज्ञानिक तैयार किया आपने? और उस Campus में क्या हो रहा है? उसकी भी खबर हमको है।

**प्रश्न : सादगी और मितव्ययिता का आदर्श तो गाँधी जी ने भी रखा था?**

**उत्तर :** वो होनी चाहिए, किन्तु भगवान को भोग तो लगे। आपकी जो आर्थिक स्थिति है, जो सामाजिक और वैचारिक स्थिति है उसके आधार पर आराधना होनी चाहिए। क्या राय है?

**प्रश्न : आप प्रतिवर्ष संस्कृत के विद्वान को एक बड़ी मानद राशि एवं अन्य उपहार देकर सम्मानित करते हैं, इसके पीछे आपकी क्या मंशा है?**

**उत्तर :** इसके पीछे सद्विचार, सद्इच्छा, सद्चरित्र, रचनाधर्मिता, राष्ट्रीयबोध और मानवधर्मिता का सम्मान है। ये सम्मान उन्हीं लोगों को दिया जाता है, जिन्होंने अपने जीवन को तथ्यों के संग्रह में लगाया, श्रेष्ठ मूल्यों को, विचारों को अपने जीवन में उतारा, बड़े पैमाने पर लिखा-पढ़ा और जिनका आचार और धन दोनों पवित्र हैं। आचार, शुचिता और अर्थ राम आधार के दृढ़ सतम्भ है। यह इसीलिए

नहीं करता कि बहुत पैसा है मेरे पास या मेरा नाम छपे अखबारों में, न-न, यह कतई नहीं! यह श्रेष्ठ मूल्यों का सम्मान है, जिनसे समाज में सही वातावरण तैयार होगा और **'विद्वान सर्वत्र पूज्यन्ते'** की भी बात तो है ही। यह विडम्बना है कि जितने लोग सत्ता की जयजयकार करते हैं, उतने लोग विद्वान की जय-जयकार नहीं करते। जबकि राजा से अधिक स्थायी जीवन विद्वान का होता है। अकबर का क्या जीवन है? बाबर का? **शाहजहाँ** का तो रोड ही है न? लेकिन **तुलसीदास** का? **रामचरितमानस** की जरूरत तो बाथरूम में भी है। तो विद्वान जितना समाज को देता है, वह अपनी सम्पूर्ण दे देता है। जबकि वणिक वृत्ति आमदनी का कुछ प्रतिशत ही देती है और ये सम्मान आजकल के पुरस्कारों की भाँति नहीं है जो सम्बन्ध, भाईवाद, जाति और क्षेत्र को देखकर दिए जाते हैं। पहले ही तय हो जाता है– वो सब यहाँ नहीं है। पूरे देश में किसी आश्रम की ओर से मिलने वाला एक लाख रुपये का पहला पुरस्कार है यह। आज तक जिन लोगों को दिया गया है, उनका कोई जोड़ नहीं। इस बार हम लोगों ने **कमलेशदत्त त्रिपाठी** जी को दिया है।

**प्रश्न : रामकथा के प्रथम गायक वाल्मीकि हैं। आपको वाल्मीकि ज्यादा लुभाते हैं या तुलसी?**

**उत्तर :** (थोड़ा ठहरकर) दोनों ने राम जी का गुणगान किया। जिस रामानन्द सम्प्रदाय की परम्परा में हम लोग सेवारत हैं। उस परम्परा में तो महर्षि वाल्मीकि ही तुलसीदास हुए। नाभादास जी ने लिखा– **'कलि कुटिल जीव निस्सार वाल्मीकि तुलसी भये।'** तो वेदों के अभिप्रायों को महर्षि वाल्मीकि ने प्रगट किया संस्कृत में और एक आकर्षक, समाज पोषक, प्रेरणादायक, समाज के लिए धरोहर जैसे चरित्र का प्राकट्य किया तो लगातार शताब्दियों तक लोगों को प्रेरित कर रहा है। किन्तु कालक्रम में जब भाषा में, विचार में, जीवन-पद्धति में तमाम तरह के परिवर्तन आए तो उसी तरह उसका भी एक परिष्कृत रूप आया, जब हम वाल्मीकि को पढ़ाते हैं तो हम त्रेता में राम जी को देख रहे हैं, उस दौर की संस्कृति, धर्म को देख रहे हैं। कालान्तर में उसे सहज बनाकर घर-घर पहुँचाने वाला स्वरूप तैयार कर लोकभाषाओं में तुलसी ने उसे पुनर्सृजित किया। हाँ! एक बात गौर करने की है कि उस कथा को जिस मानवीय चिन्तन की सहजता के साथ वाल्मीकि ने प्रकट किया, तुलसीदास जी ने अधिक मर्यादित और प्रेरणादायक बनाने के लिए उसमें काँटा-छाँटी की। अब आप देखें वाल्मीकि में जानकी जी से हनुमान जी ने कहा मैं ले चलता हूँ माता जी को। उन्होंने

पूछा कैसे ले जाओगे? और भी प्रश्न किये। तुम्हें गिरा देंगे, लड़ाई होगी, मुझे मार देंगे, तुम्हें मार देंगे और लंका से जा पाना भी बहुत कठिन है और जब हनुमान जी ने सभी तरह की शंकाओं का समाधान किया तो जानकी जी ने कहा कि मैं परपुरुष का स्पर्श नहीं करती। विवश थी तो रावण का स्पर्श हुआ। हनुमान जी लंका जला चुके हैं, **अशोक वाटिका** का विध्वन्स कर चुके हैं, अक्षय कुमार को धूल में मिला चुके हैं। यह सब जानकी जी ने देखा है। लौकिक और अलौकिक द्रृष्टि से हनुमान जी की महत्ता से परिचित हैं, अविश्वास की कोई गुन्जाइश नहीं है। लेकिन जानकी जी ने कह दिया तो कह दिया। तुम्हारा स्पर्श नहीं करूँगी। बार-बार माँ-माँ का सम्बोधन और इतना लायक बेटा किन्तु नहीं, तब हनुमान जी ने कहा हे राम! आप अन्तर्यामी हैं। मेरी किंचित भी दूषित भाव हो तो आप जान रहे होंगे। मुझसे केवल माँ की तड़पन नहीं देखी जा रही थी इसलिए मेरे मन में ऐसा भाव उठा, इस संवाद का एक अलग धरातल है। तुलसीदास जी ने इस सारे विस्तार को एक वाक्य में ही जमा दिया– **'प्रभु आयुष नहीं राम दुहाई।'** माता आपको अभी ले जाता पर भगवान की आज्ञा नहीं है तो विध्वन्स की आज्ञा थी क्या? लंका जलाने की आज्ञा थी क्या? बहुत काम बिना आज्ञा के हुए तो यह सहजता है। इसी तरह वाल्मीकि ने राम की महाप्रयाण की लीला का वर्णन किया, जानकी जी को जंगल में पहुँचवाया, तुलसीदास जी ने यह नहीं किया। उसमें कोई दिक्कत थी क्या? कोई दिक्कत नहीं होनी चाहिए। श्री राम का यह एक विराट् पक्ष है, जिसमें लोक आवाज के लिए, जनभावना के लिए जानकी जी को और अपने को पीड़िता कर लिया, यह नियम ही है। बड़ा निजी सुख का त्याग कर लोक आदर्श का निर्माण करता है।

**प्रश्न : यहाँ आपका राम के प्रति प्रेम बोल रहा है अन्यथा इस घटना में श्रीराम का सामन्तवादी या पुरुषवादी?**

**उत्तर :** (बीच में ही रोककर) नहीं वो नहीं। हाँ वो कौन लेखक हैं,... नागर जी ने लिखा कि वो धोबी ने कहा लेकिन वाल्मीकि रामायण में धोबी वाला प्रसंग नहीं है, वहाँ जनमानस है। राम जब अपने अन्तरंग क्षणों में अपने विश्वस्त सेवकों के साथ बैठते हैं तो जनभावनाओं को जानना चाहते हैं। लोग बताते हैं कि अच्छा चल रहा है। राक्षस राज रावण को मारने, समुद्र में पुल बनाने की आपकी प्रशंसा हो रही है। उन्होंने कहा–नहीं! और बताइए उनके अन्तरंग लोग थे किचिन केविनेट के। उन्होंने कहा कि चर्चा यह भी हो रही

है कि इतना उदात्त और मर्यादित पक्ष है आपका तो रावण के यहाँ इतने दिनों तक रही सीता को लाना नहीं चाहिए था। वे पवित्र हैं लेकिन सबको उस पवित्रता की परीक्षा का विश्वास नहीं हो रहा है। आम आदमी को उससे गलत सन्देश जा रहा है। राम जी ने कहा कि हाँ, ये गलती हुई और दूसरे दिन ही उन्होंने निर्णय ले लिया, तो इसमें राम की शत प्रतिशत लोगों की भावनाओं की विशुद्धिकरण का और औदात्त स्वरूप देने का संकल्प है। हम नहीं चाहते हैं कि 40 प्रतिशत वोट लेकर राज्य किया जाए, जैसे काँग्रेसियों ने किया 40 तक।

मैं आपको कभी एक बड़े विद्वान से मिलवाऊँगा। **पं. राम प्रकटन शर्मा।** प्राचीन और अर्वाचीन साहित्य के मनीषि हैं। वे इन्दिरा जी ने उन्हें अनेक राष्ट्रों में भारतीय संस्कृति पर बोलने के लिए भेजा था। उन्होंने पी-एच.डी. के लिए ग्रन्थ प्रस्तुत किया तो उन्हें डी.लिट् की उपाधि मिली। परीक्षकों में **गोपीनाथ कविराज** जैसे लोग थे। उनका मत है कि अरण्य प्रदेशों में रहने के बाद जब रामजी राजमहल आ गये और सीता जी गर्भवती हो गयी तो उन्होंने रामजी को प्रेरित किया और कहा 'मैं चाहती हूँ कि मेरे बच्चे आप से भी योग्य हों। आप तो राज-काज में हो, मैं चाहती हूँ कि उनका पालन-पोषण प्राकृतिक परिवेश में ऋषियों के यहाँ हो। मैं ऋषि राम को उत्पन्न करना चाहती हूँ। जो स्वरूप आपका 14 वर्षों में मैंने देखा, जिसमें रामराज्य की संस्थापक शक्ति का अर्जक स्वरूप प्रगट हुआ। मेरे बच्चों में वो शुरू से हो।' तो यहाँ व्यास, वाल्मीकि और तुलसीदास सब छोटे हो जाते हैं।

**प्रश्न : सर्वथा नयी दृष्टि!**

**उत्तर :** हाँ, तब राम जी ने कहा– हमारी अपनी सन्तति के लिए आप जो कहेंगी, घटना का माध्यम बनाकर, वो बतलाइए। अर्थात् उनको पूरी व्यवस्था के साथ भेजा गया। ऐसे ही उन्होंने एक और बढ़िया बात कही कि **कालिदास** ने **रघुवंश** में **'वागर्थाा इव सम्पृक्तौ'** कितने लोग हैं जो शब्द और अर्थ के सम्बन्ध को जानते हैं? तुलसीदास ने कहा कि **'उपमा कालिदास्य'** अद्भुत है लेकिन झोपड़ी वालों को समझने के लिए **'गिरा अरथ जल बीच समाना'** जल और तरंग के सम्बन्ध को रिक्शा चलाने वाला भी जानता है लेकिन शब्द और अर्थ को महापण्डित ही जानते हैं। तो तुलसीदास जी लोकव्यापी हैं किन्तु उस घटना को भी नहीं छुपाना चाहिए। वह रामराज्य के लोकतन्त्र का लोकतान्त्रिक स्वरूप है, बात सुनी जानी चाहिए। ऐसा थोड़ी कि शरद पवार ने प्रश्न किया और सोनिया गाँधी ने पार्टी से निकाल दिया। आप बोलिए कि हाँ! विदेशी मूल

की हूँ। यदि बेटा प्रश्न करता है, तो पिता को जवाब देना होगा। प्रश्न का जवाब न देकर बेटों को घर से निकालते-निकालते कितने बेटे बिगड़ गये इसलिए राम जी उस मूल्य का पोषण कर रहे हैं जो सच्चा लोकतन्त्र है। मैं तो इस सन्दर्भ के माध्यम से कहूँगा कि सभी लोगों को अपने बच्चों को गुरुकुल में भेजना चाहिए। (और ठहाका लगाकर–'तभी तो आपने बच्ची को वनस्थली भेज दिया।')

ऐसा आम आदमी सोचता है लेकिन एक बहुत बड़ा पक्ष है जो शब्दों से भी प्रत्यक्ष होता है, ठीक उसी तरह से जैसे हमने सुना राम जी के लिए और जो चिन्तन किया वह प्रत्यक्षात्मक ज्ञान ही है। कोई अन्धविश्वास नहीं है। हम शब्दों से ही बहुत कुछ देख रहे हैं। बहुतेरे हैं, जिन्होंने मूल्यों को नहीं देखा। कितने जानते हैं कि भोजन कहाँ जाता है? कैसे पचता है? कैसे रक्त बनता है? जो डॉक्टर इस सम्बन्ध में जानते हैं, वो ज्ञानी हुए पर जो हम जानते हैं, वो भी ज्ञान का एक स्तर है। महर्षि वाल्मीकि रामायण में एक प्रसंग है कि मारीच ने जब रामजी को देखा तो बार-बार स्मरण करता है और जब रावण गया उसे मनाने के लिए कि चलो सीता का अपहरण करना है तो मारीच ने कहा–

**ना! ना! ना! 'वृक्षे-वृक्षे तपस्यामि स्यामलां रघुनन्दनं।**
**गृहीत धनुषं राम पादहस्त शवांतकम्।**

मैं हर वृक्ष में देख रहा हूँ राम जी को। हाथ में धनुष बाण लिए हैं, कृष्णमृगचर्म पहने हुए, यमराज जैसे खड़े हैं। तो उसने स्वरूप को स्मरण कर प्रत्यक्षात्मक ज्ञान में बदल लिया और वह ज्ञान का अत्यन्त परिपक्व और श्रेष्ठ रूप है। चिन्तन से, शास्त्रों के श्रवण से, मनन से, स्मरण से प्रत्यक्षात्मक ज्ञान जैसा हो जाता है, यह दर्शनशास्त्र का बहुत बड़ा मत है।

**प्रश्न : राम आपके लिए अनुभूतिजन्य हैं या ज्ञानन्य।**

**उत्तर :** (हँसते हुए) अभी आप उस धारणा में घूम रहे हैं, जो इन्द्रियों से ग्राह्य है आँख से, कान से, नाक से वही आपके लिए प्रत्यक्ष ज्ञान है।

**प्रश्न : श्री राम से इतर आपके लिए ब्रह्म की, या परमशक्ति की और कौन-सी प्रतिमूर्ति है?**

**उत्तर : "बृहदारण्यक उपनिषद"** में लिखा है कि पृथ्वी भी ईश्वर का शरीर है। **"यस्य पृथ्वी शरीरा, यस्य जलः शरीरा।"** यह पहाड़ भी, नदियाँ, मनुष्य भी यहाँ तक कि जीवात्मा सभी ईश्वर का स्वरूप हैं तो संसार का कुछ

भी ऐसा नहीं जो ईश्वर के रूप से अलग किया जाए। लेकिन आराधना के लिए तो हमें दण्डवत्  करना है और सभी जगह दण्डवत्  करने लगे तो हमारा Disk ही निपट जायेगा। इसीलिए हम आराधना स्थल बना लेते हैं, वहाँ प्रणाम करते हैं। हमारे पास आधा किलो चावल है, उसी से भोग लगाना है और अपना भी पेट भरना है। सभी लोगों को भोग लगाने पर तो दाना भी नहीं मिलेगा, इसीलिए हम एक आराध्य स्वरूप बना लेते हैं और बाद में धीरे-धीरे हम अपनी दृष्टि का विस्तार करते हैं। इसी ईश्वर ने संसार को बनाया, उसके ही सारे रूप हैं। वेदान्त के अनुसार वह संसार का कारण है। जैसे मकान का कारण मिट्टी है, वस्त्र का कारण धागा है, हम इसीलिए सूकर को, कूकर को, सबको। अभी जब मैं आ रहा था तो जैसे आदत है मन्दिर को, मूर्ति को देखकर प्रणाम कर लेते हैं इसी धुन में मस्जिद को प्रणाम कर लिया तो बाद में ध्यान गया कि जब ब्रह्म दृष्टि कर ही रहे हैं तो इसमें झुँझलाने की बात नहीं। पहले राम रूप को भोग लगाते थे, अब रामरूप में संसार के समस्त जीवों को, पहले राम जी के रूप में, फिर देवताओं के रूप में, फिर आचार्यों के रूप में, तो **'त्वदीय वस्तु गोविन्दं।'**

●

प्रवचन

# दुःख क्यों होता है ?

एक दिन मैं बिहार यात्रा में किसी गाँव जा रहा था। विभिन्न स्वभाव और विभिन्न आयु व आकार-प्रकार व अवस्थाओं के लोग साथ यात्रा कर रहे थे। उन लोगों ने कई प्रकार की चर्चाएँ छेड़ रखी थीं, लेकिन उन चर्चाओं का कोई समाधान नहीं हो रहा था। कोई पूछ रहा था कि आजकल माता-पिता को लोग क्यों नहीं मान रहे हैं, कुछ लोग चारों तरफ बढ़ते भ्रष्टाचार की बात कर रहे थे। कुल मिलाकर सवाल यह था कि कष्ट क्यों होता है? दुःख क्यों होता है? हर आदमी के मन में कोई न कोई जिज्ञासा थी, लेकिन उसका समाधान उस समूह द्वारा नहीं हो रहा था। देखने से यही लग रहा था कि लोग जिज्ञासु हैं, उनमें जानने की इच्छा है। शास्त्रों में लिखा है, जिज्ञासा तभी होती है, जब संदेह हो और जब अपना मतलब सिद्ध होना हो। दुनिया में कोई ऐसा नहीं है, जिसे जिज्ञासा नहीं हो। हर किसी को कोई न कोई मतलब भी है और संदेह भी है।

तो चर्चा चल रही थी, क्यों लोग भ्रष्टाचारी हो रहे हैं क्यों मर्यादाएँ खो रही हैं, क्यों दुःख बढ़ रहा है? मुझसे लोगों ने पूछा कि आप इस पर कुछ बोलिए। मैंने कहा कि आप लोग अच्छी चर्चा कर रहे हैं. लेकिन इस चर्चा का कहीं एक जगह समाधान होना चाहिए। वह नहीं हो रहा है। मैंने कहा कि देखिए, व्यावसायिक उदाहरण से आपको समझाने का प्रयास कर रहा हूँ। व्यवसाय में सभी को किसी दूसरे की सहायता लेनी पड़ती है। अपनी स्वयं की पूँजी से कोई बड़ा व्यवसाय सभी लोग नहीं कर पाते हैं। बहुत प्रतिशत उन लोगों का है, जो बैंक या दूसरों से ऋण लेकर व्यवसाय शुरू करते हैं। कुछ लोग मित्रों और रिश्तेदारों से ऋण लेकर व्यवसाय शुरू करते हैं। जो आदमी पैसा ले ले और उसे लौटाए नहीं, बाजार में उसकी साख खत्म होने लगती है। उसे लोग ऋण देने में संकोच करने लगते हैं। लोग उसे चोर कहेंगे, गलत आदमी कहेंगे। ऋण न लौटाने वाला आदमी बाजार से बाहर हो जाएगा। यह आम दुनिया की बात है, तो मेरा यह मानना है कि सारी जो अव्यवस्थाएँ हैं वे सिर्फ इसलिए हैं, क्योंकि जहाँ से हमने ऋण लिए हैं, उन ऋणों को चुका नहीं रहे हैं।

---

समय-समय पर स्वामी रामनरेशाचार्य द्वारा दिए गए प्रवचनों के कतिपय अंश।
—संपादक

हमारे ऊपर देवताओं के ऋण हैं जो हमें वायु देते हैं, जल देते हैं, आकाश देते हैं, पृथ्वी देते हैं, किन्तु हम यह भूल जाते हैं।

प्रत्येक मनुष्य जब जन्म लेता है, तो तीन ऋणों के साथ जन्म लेता है। पितृ ऋण, ऋषि ऋण और देव ऋण। इन तीनों से ऋणवान होकर ही आदमी जन्म लेता है जो टाटा-बिड़ला के परिवारों में जन्म लेगा, वह भी इन तीन ऋणों के साथ जन्म लेगा। अमीर हो या गरीब, सबको ऑक्सीजन की, प्रकाश की और जल की आवश्यकता पड़ेगी। जन्म लेते ही जो हमें संस्कार मिले, जो ज्ञान-विज्ञान मिले, वह ऋषियों का ऋण है, वह परंपरागत रूप से हमें प्राप्त है और एक ऋण हमारे पितरों का शरीर में है। इन तमाम लोगों से हम ऋण लेकर आगे बढ़ते हैं और इन ऋणों को नहीं चुकाना ठीक उसी तरह से है, जैसे बाजार से ऋण लिया हो, किन्तु चुकाया नहीं। जो ऋण नहीं चुकाता, वह कभी पनप नहीं पाएगा, कभी यशस्वी नहीं हो पाएगा, कभी शांत नहीं हो पाएगा। हम सभी को इन ऋणों को चुकाने का प्रयास करना चाहिए। इन ऋणों को नहीं चुकाने के कारण ही संसार में सारी अव्यवस्थाएँ हैं। सारी समस्याएँ हैं, सारे दुःख हैं।

सभी लोग बहुत प्रसन्न हुए और कहा कि इस बात को प्रचारित करने की जरूरत है। जो माता-पिता के ऋण को नहीं चुकाएगा, राष्ट्र के ऋण को नहीं चुकाएगा, उसका काम कैसे चलेगा? हम राष्ट्र की सड़कों पर चलेंगे लेकिन हम राष्ट्र या सरकार को नहीं मानेंगे, ऐसा कैसे चलेगा? जो ईश्वर को नहीं मानता, उसका कैसे चलेगा? मूल पिता तो वही हैं। संसार के सभी लोगों को इस परंपरा से जुड़ना चाहिए कि आपको अपने विकास के लिए जहाँ से शक्ति मिली है, वहाँ के प्रति कृतज्ञता की भावना होनी ही चाहिए। ऋषियों से क्या लिया, देवताओं से क्या लिया, पितरों से क्या लिया, यह अवश्य विचार करना चाहिए।

शास्त्रों में पाँच यज्ञ करने के लिए कहा गया है, ऋषि (ब्रह्म) यज्ञ-स्वाध्यात्मक, देव यज्ञ- हवनात्मक, पितृ यज्ञ- तर्पणात्मक, भूत यज्ञ, गाय को चारा डालना, पंछियों को दाना डालना इत्यादि, मनुष्य यज्ञ- अतिथि, दीन हीन अभ्यागत व अतिथियों को भोजन कराना, उसका सत्कार करना। जो व्यक्ति अपने जीवन में इन यज्ञों या कर्मों को करता है, वही सुखी होता है और कष्टों से बचा रहता है।

●

# भ्रूण हत्या अर्थात् आतंकवाद

आज कन्या भ्रूण हत्या एक बड़ी समस्या है। हम मानते हैं कि हत्या होनी ही नहीं चाहिए, क्योंकि जो जीवन दान है, वह हमारे द्वारा नहीं होता है, चाहे कीट का जीवन हो या पतंग का जीवन हो। यहाँ तक कि हम गेहूँ, चावल भी स्वयं नहीं बना पाते हैं, हम केवल बीज डालते हैं, सींचते हैं, उसमें फूल स्वतः आता है। फल आता है। जो बनाता है, उसी को नष्ट करने का अधिकार है। रोटी हम बनाते हैं, बिल्ली आदि से उसकी रक्षा करते हैं, हम उसको खा जाते हैं या लोगों को खिला देते हैं। तीनों काम हुआ, उत्पादन, पालन और संहारण, इसलिए हम रोटी के स्वामी हैं। स्वामी को ही अधिकार है। यदि कोई मकान हमने बनाया, तो स्वामी उसका कोई दूसरा होगा क्या? इस संसार में एक भी ऐसा मनुष्य शरीर नहीं है, जो मनुष्य बनाता हो। गर्भाधान संस्कार हुआ, उसके बाद कौन-सी शक्ति हैं, जो ७२ हजार नाड़ियों को बनाए, ईश्वर ने निमित्त बनाया, माता और पिता के गुणों का संयोजन हुआ, लेकिन शरीर की जो संरचना है, कहाँ नाक, कहाँ कान, कहाँ मुँह, कहाँ मस्तिष्क, कैसे रक्त जा रहा है, कहाँ वायु का मार्ग और कहाँ से पानी जा रहा है। इसमें से एक भी उत्पादन मनुष्य नहीं करता। आत्मा के साथ शरीर का जो संयोग है, वह मनुष्य के लिए संभव नहीं है। इसलिए वेदों ने यह नहीं कहा कि ब्राह्मण को न मारो, क्षत्रिय को नहीं मारो, वेदों ने कहा, किसी भी प्राणी को नहीं मारो। माहिंस्यात् सर्वा भूतानि। अर्थात् किसी भी प्राणी को नहीं मारो। यह जोरदार वाक्य है हिंसा के विरुद्ध, ऐसा कोई दूसरा वाक्य नहीं है, पूरी दुनिया के साहित्य में नहीं है।

अपने यहाँ एक कथानक सुनाते हैं लोग, जिसने पूर्वजन्म में तितली को काँटे चुभोए थे, उसे सूल पर बैठना पड़ा। हमारे यहाँ ऐसा प्राचीन संविधान है। बहुत स्पष्ट उदाहरण है। मारने से तो पाप है ही, उसके अनुमोदन से भी पाप लगता है। दुनिया में एक ही कानून है, आपको मैं गाली दूँ, आप कब तक मेरी वंदना करेंगे। जैसा हम आपके साथ करेंगे, वैसा आप हमारे साथ करेंगे। हम आदर करेंगे, तो आदर मिलेगा। संसार में ध्वनि भी लौटती हैं। जैसी ध्वनि आप उत्पन्न करेंगे वैसी ही ध्वनि आप तक लौटेगी। राम को पुकारेंगे,

तो राम लौटेंगे, रावण को पुकारेंगे, तो रावण ही लौटेगा। मारने का अधिकार किसी को नहीं है, जो मारेगा उसे दंड मिलेगा। इसीलिए यहाँ तो किसी को वाणी से भी नहीं मारा जाता, मन से भी नहीं मारा जाता, शरीर से मारने की बात भूल जाइए। क्या बात है। आज भी भगवान की दया से अपने यहाँ सिखाया जाता है कि किसी भी चीज को यों ही न छेड़ो पता नहीं कौन ऋषि, महर्षि हो। पहले वृंदावन में किसी भी चीज को नहीं मारते थे। वृक्ष काटने को भी पाप ही कहते हैं। आजतक दुनिया में कोई भी वृक्ष काटने वाला बड़ा आदमी नहीं हुआ। लकड़ी बेचकर लकड़ी वाले थोड़े दिन तक पैसे वाले हो जाते हैं और फिर कुछ ही साल बाद नष्ट हो जाते हैं, क्योंकि जीवित वृक्ष को जो काटेगा, उसका तख्तापलट हो जाएगा। यहाँ यह बात सबको पता है।

हमारे मठ के प्रबंधक ने एक दिन कहा कि मैं आम के वृक्ष को काटने आऊँगा, आप मुझे रोकना। मैंने कहा, आप ऐसा क्यों बोल रहे हैं, उन्होंने कहा, आम के पेड़ को डराना है, कई साल हो गए फलता ही नहीं है। वे आए कुल्हाड़ी लेकर लगे बोलने कि काटो इस पेड़ को, बेकार हो गया है, फलता ही नहीं है। इसका कोई अर्थ नहीं है, तीन-चार साल हो गए फल ही नहीं रहा। मैंने कहा, मत काटिए, इनको एक बार मौका दीजिए।

ऐसा नाटक हुआ कि अगली बार आम इतना फला कि मत पूछिए। वृक्ष में प्राण होते हैं, संवेदना होती है, वह डरता है, वह लोभ भी करता है, उसमें भी आत्मा है, यह आज की बात नहीं है। हमारे यहाँ कहा जाता है कि कोई अमुक काम करेगा, तो अगले जन्म में ये वृक्ष होगा, अमुक काम करेगा, तो वो वृक्ष होगा।

वह कैसा समाज होगा, जहाँ किसी भी प्रकार की हिंसा नहीं होगी। जिस समाज में किसी की हत्या की भावना नहीं होगी। व्यभिचार नहीं होगा, किसी प्रकार का अत्याचार नहीं होगा। शोषण नहीं होगा, दुख नहीं होगा।

भ्रूण हत्या से चिंता यह नहीं है कि लड़कियों की संख्या कम होगी, तो लड़कों की शादी कैसे होगी। शादी जरूरी नहीं है, सौ में से २० लोग ही शादी की योग्यता वाले हैं। जो योग्य नहीं, वे शादी क्यों करते हैं? शादी उसी को करनी चाहिए, जिसकी जेब में पैसे हों, जो स्वस्थ हो। पुराने जमाने में सभी लोगों की शादी नहीं होती थी। बहुत पुरुष कुँवारे रह जाते थे, अभी भी हरियाणा वगैरह में प्रथा चल रही है, पाँच भाइयों में एक भाई शादी कर

रहा है, क्योंकि पाँचों शादी करेंगे, तो सबके बच्चे होंगे, विभाजन हो जाएगा, संपत्ति बिखर जाएगी। संपत्ति बिखर जाएगी, तो परिवार का, कुटुंब का सम्मान चला जाएगा। इसलिए कई परिवारों में शादियाँ कम होती हैं।

असली बात पर लोगों का ध्यान नहीं जा रहा है। दुनिया में आतंकवाद सबसे बड़ी समस्या है, लेकिन दुनिया में एक प्रतिशत भी गुंडे और आतंकवादी नहीं हैं, लेकिन भ्रूण हत्या के माध्यम से हर घर में आतंकवादी पनप रहे हैं। अपनी संतान को जिसने मार दिया, वो दूसरों को मारने वालों से भी बड़ा अपराधी है। अपनी बेटी का कोई मर्डर करता है, तो मर्डर करने वाला दूसरों का मर्डर करने वाले से ज्यादा बड़ा अपराधी होता है। हिंसा की भावना बहुत प्रबल होती है, तभी अपने से सम्बंध रखने वालों को मारना संभव होता है। एक बार भ्रूण हत्या हो गई, तो पूरा परिवार उसमें सम्मिलित होता है। पति राजी होता है, घर का मुखिया राजी होता है। सब मिलकर कन्या भ्रूण हत्या करते हैं, ऐसे लोगों में कभी भी राम भाव आने वाला नहीं है। जिस माँ को मातृदेवो भव कहा, जिस पिता को पितृदेवो भव कहा, अगर दोनों की सहमति से मर्डर हुआ है, तो मंदोदरी देवो भव हो गया, रावण देवो भव हो गया। मैंने सुझाव दिया कि राष्ट्र जैसे चुनाव का खर्च सरकारी स्तर पर उठाने की सोच रहा है, ठीक उसी तरह कानून बनाया जाए, ऐसा कानून हो कि जितनी लड़कियाँ होंगी, सरकार शादी करवाएगी। इससे कन्याएँ भी बचेंगी और पैसा भी बचेगा। कन्या भ्रूण हत्या से आतंकवाद का फैलाव होता जा रहा है। एक बार जो इस तरह की हिंसा करेगा, वह सामान्य जीवन का, सुन्दर जीवन का, प्रेमी जीवन का आदमी बन ही नहीं सकता। इस पर ध्यान दिया जाए। समस्या का समाधान यह भी होगा कि हर दो-चार साल बाद एक बार अल्ट्रासाउंड सभी औरतों का हो जाए, जिसने नहीं कराया उसकी जय जयकार और जिसने कराया है उसे तुरंत आजीवन कारावास यदि ऐसा हो जाए, तो तुरंत भ्रूण हत्या रुक जाएगी। रही बात दहेज की, उसका समाधान कन्याएँ कर ही रही हैं। दुनिया भर में लड़कियाँ काम कर रही हैं। अभी ममता बनर्जी ने जो किया, लगता नहीं था कि कम्युनिस्ट हटेंगे, ममता का कितना अपमान हुआ होगा, उन्हें समाप्त करने की कितनी चेष्ठा हुई होगी, लेकिन वह नहीं झुकीं। वामपंथियों को हरा दिया। आज की स्थिति में देश की सबसे बोल्ड महिला का नाम ममता बनर्जी है। वामपंथियों का पुराना शासन उखड़ गया, ऐसे वामपंथी, जो ऊपर से त्यागी और अंदर से भोगी थे। दुनिया के गरीबों एक हो जाओ बोलकर

लूटते थे, मजदूरों के भले के लिए काम नहीं करते थे। रोजगार बढ़ाने के लिए काम नहीं करते थे। उनका आदर्श नहीं बन सका।

भ्रूण हत्या केवल समाज का संतुलन ही नहीं बिगाड़ रही है, केवल शादी की समस्या ही नहीं पैदा कर रही है, आतंकवाद का विस्तार भी कर रही है, जो दुनिया की सबसे बड़ी समस्या है। विचार के क्रम में मेरे मन में यह भाव भी आया कि लंका में सारे दुराचार होते थे, लूट, अत्याचार, व्यभिचार, अपहरण, लेकिन भ्रूण हत्या नहीं होती थी, आपस में वहाँ भाईचारा था। विभीषण का भी सम्मान था, कुम्भकर्ण का भी सम्मान था। हाँ, लंका में भोग की वृत्ति गलत थी।

वैसे अपने राष्ट्र में कन्या द्रोह पुराना है। राजा लोग, क्षत्रिय लोग लड़कियों को विष चटा देते थे कि किसी के सामने सिर नहीं झुकाना पड़ेगा। लड़की हो जाए, तो सिर झुकाना पड़ता है। रामराज्य में यह परंपरा नहीं थी। अपने देश में इंदिरा गाँधी भी हुई। कहा गया नेहरू वंश में इतनी बदसूरत, लेकिन बाद में अक्लमंद संतति उत्पन्न नहीं हुई। इंदिरा जी के साथ रही एक महिला ने उनकी जीवनी लिखी, जब उन्होंने इंदिरा की सूरत के बारे में लिखा, तो लोगों ने विरोध नहीं किया। कभी सूरत से कम रही, अक्लमंद लड़की विश्व की सबसे बड़ी व शक्तिशाली महिला हुई। इतने बड़े लोकतंत्र की प्रधानमंत्री रहीं। आज इंदिरा जी जैसे लोगों की जरूरत है देश को। यहाँ कविता पाठ करने वाला प्रधानमंत्री और केवल हिसाब-किताब करने वाला ही नहीं चलेगा। जिसकी राजनीति में गहरी पैठ नहीं है, संगठन में गहरी पैठ नहीं है, जो देश की नब्ज नहीं समझता, वह कभी सफल नहीं होगा। देश को ऐसा नेता चाहिए जो जरूरत हो, तो दो हाथ भी जमा सके।

वैसे मनमोहन सिंह ने भी कहा था कि कन्या भ्रूण हत्या पर राष्ट्र को शर्म है। यह व्यक्ति का शर्म नहीं, जिला या राज्य का शर्म नहीं है, यह राष्ट्र का शर्म है। मैं बोलता हूँ, यह मानवता का शर्म है। सम्पूर्ण मानवता इसके माध्यम से आतंकवादी होती जा रही है। इसे छोड़ा नहीं जा सकता कि होती है, तो होने दो। मैं इस दिशा में काम कर रहा हूँ। जितने लोग हमारे साथ जुड़े हुए हैं, उनके बीच ही हम प्रचार कर रहे हैं। लोग हमारे पास आते हैं, महाराज, दो बेटियाँ हैं, एक बेटा हो जाता, तो हम लोग प्रयास करते हैं कि सनातन धर्म की दृष्टि से माँगने वाले का भला हो जाए। शर्त भी रखते हैं कि हमारे प्रयास के बावजूद फिर बेटी आ गई, तो उसकी हत्या नहीं होगी।

ईश्वर ने बेटा नहीं दिया, तो क्या हो सकता है, जो दिया है, वह स्वीकार हो। मैंने कह रखा है कि हमसे जुड़ा कोई आदमी भ्रूण हत्या में जुड़ा, तो हमारे सामने न आए। ऐसे लोगों का सामाजिक बहिष्कार होना चाहिए। हत्यारे आपके बगल में बैठे हों, तो आप तो हत्या के समर्थक हो गए न। हमारे सम्पर्क में देश के कई बड़े-बड़े बाहुबली हैं, जिन्होंने अरबों रुपयों कमाए हैं, मैं उन्हें भी कहता हूँ, मुझे आपका एक रुपया भी नहीं चाहिए और आपसे सम्बंध भी नहीं चाहिए। हिंसा भाव, हत्यारों और अपराधियों से राम जी सबको दूर ही रखें, तो अच्छा है।

●

# ईश्वरीय कण की खोज

भारतीय दर्शन के कई विभाग हैं, जिसमें छह वैदिक दर्शन हैं– महर्षि गौतम का न्याय दर्शन, महर्षि कणाद का वैशेषिक दर्शन, कपिल का सांख्य दर्शन, पतंजलि का योग दर्शन, जैमिनी का पूर्वमीमांसा दर्शन एवं भगवान् बादरायण का उत्तरमीमांसा। कुछ नास्तिक दर्शन भी हैं, जैसे जैन, बौद्ध और चार्वाक दर्शन। जो आस्तिक दर्शन हैं, वो वेदों को मानते हैं, ईश्वर को मानते हैं, परलोक को मानते हैं। इनमें न्याय और वैशेषिक दर्शन, दोनों यह मानते हैं कि सृष्टि का मूल तत्व परमाणु है। पृथ्वी, जल, तेज और वायु, इन चारों का मूल तत्व परमाणु है। परमाणु का मतलब, जहाँ से और विभाग या विभाजन संभव न हो। जो अंतिम विभाग है, जो अविभाजित होने वाला स्वरूप है, पृथ्वी, जल, तेज और वायु का, वह परमाणु है। परमाणु यानी सबसे छोटा स्वरूप है। दोनों दर्शनों ने ईश्वर को भी स्वीकार किया है, ईश्वर को सृष्टि का निमित्त कारण स्वीकार किया है। जैसे घड़े का कुम्हार निमित्त कारण होता है। कपड़ा बनाने वाला कपड़े का निमित्त कारण होता है। रोटी बनाने वाले लोग रोटी के निमित्त कारण हैं। जैसे सोना ही आभूषण के रूप में परिणत हो जाता है, दूध ही दही बन जाता है, जैसे धागा ही कपड़े में परिवर्तित हो जाता है, वैसे ही परमाणु से ही जल, वायु, तेज इत्यादि की सृष्टि हुई।

यह कैसे हुआ? चूँकि ईश्वर सर्वज्ञ है। वह परमाणुओं को जानता है, उसे संसार का साक्षात अनुभव होता है। उस ईश्वर ने संकल्प लिया, तो परमाणुओं में क्रियाएँ उत्पन्न हुईं और परमाणु से परमाणु जुड़ते गए आकार बना, बढ़ता गया। परमाणु दिखाई नहीं पड़ते, लेकिन तीन परमाणु मिलें, तो दिखाई पड़ने लगते हैं। आज विज्ञान की दुनिया में गॉड पार्टिकल या ईश्वरीय कण की जो बात की जा रही है, न्याय और वैशेषिक के लोगों ने इसे परमाणु के रूप में देखा और जाना था। ईश्वरीय कणों का मतलब है, जिन कणों से ईश्वर ने संसार बनाया। ईश्वर को पता है कि परमाणु से कैसे सृष्टि होगी, कैसे निर्माण, पालन और संहार होगा। परमाणु ही सबकुछ नहीं। वैदिक सनातन धर्म में ईश्वर सर्वज्ञ है। हमारी यह पुरानी मान्यता है। सभी तरह के पदार्थ

एक दूसरे की ओर भाग रहे हैं, गुरुत्वाकर्षण हैं, नहीं तो कोई भी पदार्थ उड़कर न जाने कहाँ चला जाएगा। कहीं कुछ नहीं रहेगा। पदार्थ में जो गुण हैं, वो सब ब्रह्म के ही गुण हैं।

क्या हमारे ऋषियों ने परमाणु को खोज लिया था, लेकिन वे इसे वैज्ञानिक या भौतिक रूप से सिद्ध नहीं कर पाए?

आधुनिक चिंतकों और वैज्ञानिकों को यह भ्रम है। विज्ञान किसी वस्तु को देखने के बाद ही उसके बारे में कुछ कहता है। यह विज्ञान का अपना तरीका है। ऋषियों का भी अपना तरीका रहा है, ऋषियों ने तप, नियम और साधनाओं से उन तत्वों को देखा, परमाणु को देखा। ये लोग आज देख रहे हैं, किन्तु हमारे ऋषियों ने हजारों-हजार वर्ष पहले देखा, प्रमाणित किया और सबको समझाया था। जब अमरीका की ही खोज नहीं हुई थी, तब भारतीय ऋषियों ने तारों, ग्रहों को जान लिया था। ऋषि लोग दृष्टि को दिव्य बनाकर स्वाध्याय, संयम परिश्रम से किसी भी चीज को ठीक उसी रूप में देखते थे, जैसे आज विज्ञान प्रयोगशाला में देखता है। कबीर ने लिखा है और कहें कागज की लेखी, कबीरा कहे आँखों की देखी। कबीर उसी ज्ञान को कहते हैं, जिसका उन्होंने अनुभव किया है। हमारे यहाँ ऐसे संत हुए हैं जो बात देते थे कि आप पचास साल पहले कहाँ थे और पचास साल बाद कहाँ होंगे।

ऋषियों ने ईश्वरीय कण को देखा था, सृष्टि की रचना को देखा था, कैसे परिवर्तन होते हैं, यह देखा था। संहार कैसे होता है, उसके मूल तत्व क्या हैं, उसके कितने विभाग हैं। इतिहास मानता है कि वेदों के पहले कुछ नहीं था। वेदों में चिंतन-ज्ञान था, तभी तो उसका अनुकरण हुआ। जाँच व आविष्कार आगे बढ़े।

ज्ञान की दो अवस्थाएँ बताई जाती हैं, परोक्ष ज्ञान और अपरोक्ष ज्ञान। परोक्ष ज्ञान का मतलब है कि हमने समझ तो लिया कि सत्य बोलना चाहिए, लेकिन हम झूठ बोलते रहते हैं। रावण को मालूम था कि वेदों में लिखा है कि हिंसा मत करो, लेकिन वह हिंसा करता रहता था। जो प्रयोग इन वैज्ञानिकों ने आज शुरू किया है, उसे हम हजारों साल पहले भी समझते थे।

आज हजारों वैज्ञानिक ईश्वरीय कण की खोज में जुटे हैं।

सबको खोज कराने करने का अधिकार है। ये तो मनुष्य का स्वभाव है। यह जानकर मुझे खुशी हुई कि लोग सृष्टि के मूल तत्व को खोजने की कोशिश कर रहे हैं। वैज्ञानिक सही खोज की ओर चले हैं, लेकिन सही खोज

के लिए व्यक्ति का संयमित होना जरूरी है, व्यक्ति मांसाहार करके, शराब पीकर, रोज पत्नी बदलकर ईश्वर को नहीं खोज सकता। रावण ईश्वर को खोज नहीं पाया, बाकी उसके पास सब कुछ हो गया था। हर स्थिति में संयम-नियम-ज्ञान, पवित्र जीवन जरूरी है। हम देखते हैं, वैज्ञानिक उपलब्धियों से संसार में अशांति बढ़ रही है, क्योंकि उपलब्धियाँ सही तरीके से अर्जित नहीं हो रही हैं। सद्भावना कम हो रही है, परस्पर प्रेम कम हो रहा है। जब तक वैज्ञानिक संत करे रूप में नहीं आएँगे, तब तक वे ईश्वरीयता की खोज नहीं कर पाएँगे।

मेरा मानना है, वैदिक सनातन धर्म को यदि कोई पढ़ेगा, तो यही कहेगा कि ईश्वर ने वेदों के रूप में तीन अभिप्रायों को बताया। आज भी वर्षा नहीं होती है, तो कोई नहीं कहता कि वैज्ञानिक उपाय किए जाएँ, हर कोई कहता है कि ईश्वर बारिश दीजिए। वैज्ञानिकों के प्रयास पर प्रसन्नता भी व्यक्त करता हूँ और अफसोस भी जाहिर करता हूँ कि ये लोग ईश्वरीय कण की खोज में बहुत बाद में, बहुत बाद में लगे हैं। इनकी खोज में अभी बहुत समय लगेगा।

अपने मूल की खोज होनी ही चाहिए। हम अपने प्रेरक की खोज नहीं करेंगे क्या? 'एसी' में नहीं रहेंगे, तो चल जाएगा, लेकिन मूल को खोजे बिना नहीं चलेगा। हमारे यहाँ लक्ष्य यही है कि हम ईश्वर में विलीन हो जाएँ। खोज में लगे लोगों को धन्यवाद और शुभकामना। किन्तु उन्हें सही जीवन की ओर मुड़ना चाहिए।

हमारे यहाँ परमाणु की जो कल्पना हुई थी, भौतिक रूप से ही हुई थी, क्योंकि संसार तो भौतिक है। संसार का जो निर्माण हुआ, भूत से हुआ। भूत अर्थात् पृथ्वी, जल, तेज, वायु और आकाश। इन भूतों का मूल तत्व क्या है, ये कैसे रूप बदलते हैं। आप ध्यान दीजिए, पशु चारा खाते हैं और उससे दूध बनता है। दूध दही बन जाता है, दही मक्खन हो जाता है। वैशेषिक दर्शन में लिखा है, कैसे पदार्थ रूप बदलते हैं। ऋषियों ने तमाम पहलुओं को देखा था और उसका प्रयोग किया था। तत्वों का सही ज्ञान नहीं होता, तो आज अज्ञान का अंधकार हो जाता, पता नहीं चलता कि पृथ्वी कहाँ से आई है। ऋषियों ने पर्याप्त भौतिक चिंतन भी किया था। आधार नहीं होता, तो यह आधुनिक भौतिक वैज्ञानिक सोच ही नहीं चल पाती जैसे जनाधार न हो, तो पार्टियाँ नहीं चलतीं। परमाणु का यदि कोई चिंतन करेगा, तो वह वास्तव में भूत चिंतन

ही होगा। इसमें बहुत तरह के चिंतन हैं। परमाणु प्रक्रिया से गुजरता है और पदार्थ की सृष्टि करता है।

भौतिक अनुसंधान जैसे हमारे यहाँ चल रहे हैं, वैसे ही पश्चिम में चल रहे हैं। जो खोज उन्होंने शुरू की है, वे तो हमारे सामने 'केजी' के विद्यार्थी हैं। हमारे शास्त्रों में जो आविष्कार शामिल हैं, उन आविष्कारों का लाखवाँ अंश भी अभी समझ में नहीं आया है। इतने अनुसंधान हैं, मैं ब्रह्म हूँ, जीव ब्रह्म है, जीव ईश्वर के द्वारा ईश्वर का शरीर है। ईश्वर जीव के साथ हर जगह जाता है। ईश्वर उसे कभी नहीं छोड़ता। हमारा पारंपरिक ज्ञान अनुसंधान के मामले में बहुत आगे है। गीता, उपनिषदों पर जितना काम हुआ, वाल्मीकि रामायण पर काम हुआ। जब दुनिया को भाषा का ज्ञान नहीं था, तब भारत में आदि महाकाव्य लिखा गया। सत्यम् वद भी हमारा एक अनुसंधान है। हमारे अनुसंधान विज्ञान की खोज से काफी बड़े हैं। मातृदेवो भव, हमने जो अनुसंधान दिए हैं, उन्हें अगर लोग समझें और जीवन में उतारें, तो जगत् में सुख और समृद्धि आ जाएगी, इस मामले में आधुनिक विज्ञान तो अभी काफी पीछे है। हमने काफी कुछ दिया है, जिसका वे उपयोग नहीं समझ रहे हैं। विकसित होने के बावजूद दुनिया गर्त में जा रही है। आइंस्टीन को अफसोस था कि उनके आविष्कार की वजह से कहीं विनाश हुआ।

मैं विज्ञान का विरोधी नहीं हूँ। मेरा मानना है, अनुसंधान होना चाहिए, किन्तु संत मन से अनुसंधान होना चाहिए। ये अनुसंधान आगे बढ़ते-बढ़ते वहीं पहुँचेंगे, जहाँ हमारे ऋषि पहले ही पहुँच चुके हैं। पहले लोग सृष्टि को पाँच हजार साल की मानते थे, लेकिन अब कहने लगे हैं कि इसकी कोई सीमा नहीं है, सृष्टि अनादि है, लेकिन हमारे यहाँ तो पहले से ही कहा गया है कि सब कुछ ब्रह्म है। वह हमारे रोम-रोम में है।

●

# भगवत्स्मरण करें

कई जन्मों के संस्कार हमारी आत्मा में पड़े हुए हैं। यह तो हमारा सौभाग्य है कि वे याद नहीं आते, जन्म-जन्मांतरों में हमने जो अनुभव किया, उसमें जो प्रगाढ़ संस्कार थे, जो मजबूत संस्कार थे, बस वही साथ रह जाते हैं। कुछ लोग कहते हैं, ये संस्कार मन में पड़े हुए हैं, तो कुछ कहते हैं, आत्मा में पड़े हुए हैं। उनको कोई उद्‌बोधक नहीं मिलता, उनको कोई जगाने वाला नहीं मिलता। संसार में तमाम तरह के कर्म हैं, जो पूर्वजन्म में किए गए होंगे, जिनको स्मरण नहीं होता। न जाने किस-किस योनि में जन्मे होंगे, गिद्ध रहे होंगे, कभी कुत्ता रहे होंगे। कभी बिल्ली रहे होंगे, कितने चूहों को दबा दिया होगा। लोग कहते हैं कि हमने कोई पाप नहीं किया, फिर हमारे जीवन में कष्ट क्यों आ गया। व्यवसाय में मंदी आ गई, तो कई लोग सोच रहे होंगे, हमने तो कुछ नहीं किया, फिर यह मंदी कैसे आ गई। जरा अपने पिछले जन्म का तो ध्यान करो, भले आदमी। बिल्ली रहे होंगे, न जाने कितने चूहों का गला दबा दिया होगा। कितने पाप हुए, कितनी गलत अनुभूतियाँ हुईं, जो मजबूत संस्कार थे, वही रह गए। संस्कार यदि मजबूत हों, तभी रहते हैं, वरना मिट जाते हैं।

तभी तो कृष्ण ने कहा, 'अंत में मेरा स्मरण करो?'

अर्जुन ने कहा, 'अंत में कैसे होगा?'

तो कृष्ण ने कहा, 'तब तो निरंतर स्मरण करना होगा।'

जो निरंतर, प्रगाढ़ता, अनन्यता के साथ अत्यंत श्रद्धा के साथ स्मरण होता है, वही अंतिम काल में होता है। ऐसा नहीं है कि बुढ़ापे में ही रामजी याद आएँगे, रामजी को तो प्रारंभ से ही याद रखना होगा। जो प्रारंभ में याद रखेगा, उसे ही रामजी बाद में भी याद रहेंगे। तो हम सभी लोग भगवत्स्मरण करें और जीवन को धन्य बनाएँ। अपने संस्कारों को सशक्त करें। भगवत्स्मरण के लिए सबसे बड़ी सामग्री है कि हम भगवान की सुनें, सत्संग करें, सत्संग से कई काम होते हैं, पाप नष्ट होते हैं। आप प्रवचन सुनते हैं, ईश्वर के प्रति श्रद्धा बढ़ती है, तो मन पवित्र होता है। लगता है, आज मैंने कुछ काम अच्छा किया।

यह ईश्वरावतार की भूमि है, ऐसी भारत भूमि हमें प्राप्त हुई। कहा जाता है, ईसाई धर्म दुनिया का सबसे बड़ा धर्म है। ईसाई देश दुनिया में सबसे धनवान हैं। दुनिया का नेतृत्व कर रहे हैं, दुनिया की सारी गतिविधियों को प्रभावित करते हैं। तो जिसके पास पैसा है, वह तो बड़ा हो जाता है, सुंदर हो जाता है। ये सभी बातें आपको मालूम हैं। किन्तु काफी लंबे समय तक कोई काले रंग का आदमी संत की उपाधि प्राप्त नहीं कर सका था। अमरीका को स्थापित हुए सवा दो सौ साल से भी अधिक हो गए। ईसा मसीह को २००० वर्ष हो गए, किन्तु कैसा धर्म है कि काले लोग संत नहीं बन पाते हैं। अभी ज्यादा दिन नहीं हुए वहाँ काले रंग वाले को भी संत की उपाधि दी गई। यहाँ तो जब कहा गया कि विद्याध्ययन ब्राह्मण ही करेगा, ब्राह्मणों को ही संन्यास लेने का अधिकार होगा, ऐसा कहा शंकराचार्य जी ने। धर्म में निश्चित रूप से उनका योगदान अनुपम है, लेकिन इस बात पर उनके अनुयायियों ने ही विरोध कर दिया। इस बात का विरोध विद्वान मंडन मिश्र ने कर दिया, जो बाद में सुरेश्वराचार्य के रूप में जाने गए, श्रृंगेरी मठ के प्रथम शंकराचार्य हुए, कहा यह गलत है, जिसे जनेऊ पहनने का अधिकार है, उसे वेदाध्ययन करने का अधिकार है, संन्यास लेने का भी अधिकार है। तो ब्राह्मण, क्षत्रिय और वैश्य, तीनों संन्यासी बनने लगे। दशनाम की परंपरा है, संन्यासी में भी दो विभाग हैं एक तो दंड वाले लोग और दूसरे दशनाम हैं। जो दंडी नहीं हैं, बिना दंड के हैं, जैसे महामंडलेश्वर इत्यादि। यह सनातन धर्म है, यहाँ ऐसे गुरु हैं, जिन्हें शंकराचार्य कहा जाता है।

कुछ वर्ष पहले दिल्ली में विशाल मंदिर अक्षरधाम बना, बड़े-बड़े नेता आए, राष्ट्रपति आए और संभवतः आडवाणी जी ने कहा कि यह देश का एक बड़ा पर्यटन स्थल होगा। यह बात बिल्कुल वैसी ही है, जैसे कोई किसी दूल्हे को कहे कि तुम्हारी नाक टेढ़ी है, तू बड़ा कुरूप लगता है, तो दूल्हे के संग बाराती दमदार होंगे, तो बिना मारे नहीं छोड़ेंगे। दूल्हा विष्णु है, उसकी नाक टेढ़ी होती है क्या? यदि मैं दूल्हा होता और ऐसे कोई मुझे बोलता, तो शादी होती न होती, जेल भले चले जाता, लेकिन बिना पीटे नहीं छोड़ता। नेताओं ने मंदिर को कहा कि देश का बड़ा भारी पर्यटन स्थल बन गया। किन्तु वो शंकराचार्य कैसे थे, जिन्होंने चार मठों की स्थापना की, जिन्हें दुनिया आज भी सबसे बड़ा मठ मानती है। विशाल बगीचा लगा देने से, खूब सजा देने से या आलीशान भवन बना देने से मठ नहीं बनते। जहाँ सत्य चिंतन हो,

जहाँ संयम, नियम सिखलाया जाए और शास्त्रों का अध्ययन कराया जाए, उसे मठ कहते हैं। मठ में केवल मंदिर से नहीं चलेगा, मठ में केवल गोशाला से नहीं चलेगा। मठ का अपना स्वरूप है, विद्यालय वहाँ न हो, तो कोई बात नहीं, वहाँ जो बड़े संत होते हैं, उनके पास बैठकर जिज्ञासाएँ शांत होती हैं, जिन्हें देखकर ही शांति मिलती है, भक्ति भाव उत्पन्न होता है, ऐसा हो, तभी मठ बनता है। जहाँ अध्यात्म शास्त्र के जिज्ञासुओं को रखा जाए, धर्म शास्त्र पढ़ाया-सिखाया जाए, भोजन कराया जाए, वह मठ है।

मधुसूदन सरस्वती के माध्यम से मैं बताना चाहूँगा कि यदि कोई भगवान की भक्ति करता है, तो सारे वेदों के वाक्य उस भक्त के जीवन में उतरते हैं, ईश्वर कृपा से अंतःकरण की पवित्रता संपादित होती है, दिव्य भाव उनके हृदय में उतरते हैं, उनका साक्षात्कार उतरता है जीवन धन्य हो जाता है।

मैं ध्यान दिलाना चाह रहा हूँ कि अगर भारत में भी यह होता कि काले रंग वाले को ईश्वर प्रेम का अधिकार नहीं होगा, तो तमाम पंडित लोग जो काले हैं, वे छँट जाते, क्षत्रिय छँट जाते। किन्तु ब्राह्मणत्व का सम्बन्ध रंग से नहीं है, आचार-आकृति से नहीं है। रंग का भेद उस पश्चिम में है, जहाँ छुआछूत को मिटाओ की पढ़ाई कराई जाती है, जहाँ भारत को छुआछूत वाला देश माना जाता है, जहाँ भारत को पिछड़ा हुआ बताया जाता है। उसी भारत में स्वामी रामानंदाचार्य जी ने साफ कहा कि जात पात पूछे नहीं कोई, हरि को भजै सो हरि का होई। सर्वे प्रपत्तेः अधिकारिणों मताः। अर्थात् ज्ञान, कर्मयोग आदि से रहित व्यक्ति भी यदि शरण में आ जाए, तो ईश्वर उसे अंगीकार करते हैं। इस भक्ति में कोई विशिष्ट अर्हता या पात्रता नहीं होती।

तुलसीदास ने लिखा है कि भरत जी निषादराज से वैसे ही मिल रहे हैं, जैसे लक्ष्मण जी से मिलते थे। ऐसा द्वापर या कलियुग में नहीं, उस समय हुआ, जब ईसाई धर्म का अता-पता नहीं था। निषादराज पवित्र हैं, भक्ति के परम पावन रूप ने उन्हें इतना पावन बना दिया, दिप्तीमय बना दिया कि उनमें कहीं कोई दुराभाव नहीं रहा। निषादराज का रंग कुछ भी हो सकता है। कितना भी आदमी सुंदर हो, गोरा हो, धूप में रहेगा, तो साँवला हो जाएगा, यज्ञशाला में रहेगा, तो साँवला हो जाएगा। गोरे होने का क्या महत्व है? यह तो केवल शरीर का मामला है। स्वामी जी ने इस मामले को बहुत परिष्कृत किया। रामानुजाचार्य जी भक्ति के बड़े आचार्य माने जाते हैं, लेकिन वहाँ भी शूद्रों को भक्ति करने से रोका गया। शूद्र को शास्त्र पढ़ने का अधिकार नहीं दिया गया। किन्तु रामानंदाचार्य

जी ने शूद्रों को भी भक्ति का मार्ग दिखा दिया।

दूसरे संप्रदायों को भी देखिए। वल्लभाचार्य जी की सभी गद्दियों पर उनके परिवार के लोग ही विराजमान हैं। दूसरी जाति वालों से पैसे तो लेते हैं, लेकिन गद्दी पर उनके बच्चे ही बैठते हैं। उनकी गद्दी पर दूसरा कोई ब्राह्मण, उनकी ही बिरादरी के ब्राह्मण भी नहीं बैठ सकते। गद्दी पर वंश चल रहा है। कहीं किसी को सिद्धी नहीं हो, तो गोद ले लेते हैं, किन्तु गद्दी छोड़ते नहीं। निम्बार्काचार्य संप्रदाय की तो एक ही गद्दी है, वृन्दावन में होनी चाहिए थी, किन्तु उनके उत्तराधिकारी गद्दी ले गए राजस्थान, अपनी जन्मभूमि।

हमारे श्रीमठ में पाँच किलोमीटर के दायरें में रामानंद जी का क्षेत्र था। औरंगजेब ने तुड़वा दिया, कब्जा हो गया, अभी मठ का बहुत छोटा-सा हिस्सा बचा था, अरविंद भाई मफतलाल समूह व रामानंद संप्रदाय के अन्य महंतों, भक्तों विद्वानों ने श्रीमठ को संभाला। कभी आप वहाँ जाओगे, तो देखोगे, वह कोई बड़ी जगह नहीं है, किन्तु वह रामानंद जी का मूल स्थान है, वहीं से हम लोग राम भक्ति की गर्जना करते हैं, तो हर जगह सम्मान मिलता है। यदि मैं बोलूँ कि मेरा जहाँ जन्म हुआ था, वहीं श्रीमठ को ले चलता हूँ, तो यहाँ जो रामानंदी महंत हैं, वो तो बहुत नाराज हो जाएँगे। बोलेंगे कि हम आपको दंडवत इसलिए नहीं कर रहे थे कि आप श्रीमठ को अपनी जन्मभूमि ले जाओ, दंडवत इसलिए कर रहे थे कि आप श्रीमठ में झाड़ू लगाते हो।

बिहार में मेरे एक बड़े भक्त हैं। बात बड़ी जोरदार करते हैं। होटल के मालिक हैं। खूब धार्मिक हैं, शायद ही कोई आदमी हो, जो अपनी आमदनी का चौथा भाग धर्म पर खर्च करता हो। वे करते हैं। चौथा भाग राजनीति में, चौथा भाग परिवार में और चौथा भाग व्यापार में खर्च करते हैं। राजा आदमी हैं। उन्होंने मुझे बुलाया, मैं गया। यज्ञ मंडप में उन्होंने मुझे किसी कार्य से बुलाया, कहा, चलिए, मैं दंड छोड़कर चल पड़ा, तो उन्होंने कहा, ओह, दंड क्यों छोड़ रहे हैं, इसी को तो हम नमस्कार करते हैं, बाकी आप रामनरेशाचार्य जी तो पहले भी थे, ये दंड स्वामी जी हैं, राम जी हैं, इनको नमस्कार है, इन्हें साथ ले चलिए।

कितनी बड़ी ज्ञान की बात उन्होंने की। मैंने दंड थाम लिया। तो ऐसा है हमारा संप्रदाय। न कोई परिवारवाद, न क्षेत्रवाद, न जातिवाद, हमने वेदों की नब्ज पकड़ ली है।

जब राम जी और भरत जी निषादराज को, कोल, भिल्लों को गले लगा

सकते हैं, तो रामानंदाचार्य जी रविदास को क्यों नहीं अपना सकते? आज भी लोग शूद्रों, दलितों को मुख्यमंत्री बनाने में हिचकते हैं, किन्तु रामानंद जी ने धन्ना जाट को भी ऊँचाई पर पहुँचाया, जिनको लिखना भी नहीं आता था। जो वेद मंत्र नहीं जानते थे, धर्म नहीं जानते थे, शास्त्र नहीं जानते थे, रामायण नहीं जानते थे, किन्तु राम जी को जानते थे।

हमारी भूमि शांति की भूमि है, अमरीका की भूमि नहीं है, पता नहीं आप लोग क्या देखने जाते हो अमरीका? इस मामले में काठियावाड़ियों की प्रशंसा करनी चाहिए, वे वहाँ से हीरा लाने तो जाते हैं, लेकिन वहाँ की रोटी भी नहीं खाते, वश चले, तो जल भी अपना ले जाएँ, लेकिन यह संभव नहीं है। कल मैंने एक काठियावाड़ी से पूछा, आप वहाँ क्या करते हो? उन्होंने उत्तर दिया, हम अपना भोजन बनाते हैं, यहीं से बाजरा, आटा, दाल ले जाते हैं। वहाँ से हीरा लेकर आते हैं, पैसा कमाते हैं।

आप लोग मुझे इतनी देर से सुन रहे हो, वहाँ अमरीका के लोग दो घंटा पोप को नहीं सुनते। यहाँ गरीबों को लालच देकर ईसाई बनाते हैं, यहाँ हम लोग दक्षिणा लेकर चेला बनाते हैं। दोनों में अंतर है। अभी मैंने दीक्षा दी बहुत से लोगों को, इतना सामान आया कि एक कमरे में अलग से व्यवस्था करनी पड़ रही है। मैं बतलाना नहीं चाह रहा हूँ कि कहीं इनकम टैक्स का छापा नहीं पड़ जाए। भले आदमी, जो टॉफी खाकर चेला बनेगा, उसकी टॉफी घुल जाएगी, तो उसका शिष्यत्व भी पिघल जाएगा। जगद्गुरु रामानंदाचार्य ने यहाँ प्रयोग किए, इसीलिए यह श्रेष्ठ भूमि है। सनातन धर्म सबको प्रेरित करने वाला धर्म है। यह सर्वश्रेष्ठ धर्म है। क्या रूप है? ईसा मसीह सलीब पर ऐसे लटके हैं, देखकर ही कष्ट होता है।

धन्य हैं, हम लोगों को मनुष्य जीवन मिला और भारत वर्ष का मनुष्य जीवन मिला। दैविक सनातन धर्म का मनुष्य जीवन मिला। वैदिक सनातन धर्म केवल ब्राह्मणों का नहीं है, केवल भारत वालों का नहीं है, किसी भी प्रकार के भेदभाव का नहीं है, सनातन धर्म सम्पूर्ण मानवता का धर्म है। भगवान ने अनादि वेदों का स्मरण किया, उन्हें दुनिया को दिया। केवल ब्राह्मणों, क्षत्रियों को नहीं, सबको दिया। जैसे चंद्रमा को दिया, वायु को दिया। बाद में कई लोगों ने वेदों को तोड़-तोड़कर अपनी पोथी बना ली, ग्रन्थ बना लिए, सब वेदों से लेने को अभिशप्त हैं। किन्तु दुनिया में जितने भी बल्ब बनेंगे, सूर्य से कमजोर ही होंगे। वायु का प्रबंध होगा, तो वह प्रबंध वायु देव के प्रबंध

के आकार का नहीं होगा। जो कमरे बनेंगे, उनकी तुलना महा-आकाश से नहीं होगी। बर्तन में रखे पानी की समुद्र से तुलना होगी क्या? समुद्र की तुलना तो समुद्र से ही होगी, आकाश की तुलना तो आकाश से ही होगी। राम जी की तुलना राम जी से होगी और किसी से नहीं। रामानंदाचार्य की तुलना और किसी आचार्य से नहीं होगी, स्वयं रामानंदाचार्य जी से ही होगी। गगन से किसकी उपमा की जाए, गगन के सिवा गगन से और कोई उपमा के लायक नहीं है। सागर से किसकी तुलना की जाए, सागर से। अपनी पानी की टंकी की तुलना सागर से करेंगे क्या?

संतों ने अपने मन .को ही कहा, रे मन मूरख। तो हम दूसरे को क्यों कहेंगे, अपने मन को कहेंगे। रामानंदाचार्य ने अद्‌भुत क़ाम किया, मानव जीवन के लिए सनातन धर्म के लिए, किन्तु यह कोई उनका अपना काम नहीं है। पुराने अभिप्रायों से उन्होंने समझा और उसका क्रियान्वयन किया। सनातन धर्म में कोई बात नहीं कही जाती है, कहा जाता है कि अभिप्राय समझकर इन्होंने व्याख्या की, इसीलिए सभी प्रवर्त्तक हैं, व्याख्याकार हैं। रामानंदाचार्य जी सभी के हैं। कौन आदमी होगा, जो सत्य को नहीं मानेगा, अहिंसा को नहीं मानेगा, ब्रह्मचर्य को नहीं मानेगा। वेदों ने बड़ी-बड़ी बातें कीं। केवल अपने यहाँ की बात नहीं है। अमरीका के राष्ट्रपति ने वाटरगेट कांड में झूठ बोला, तो अमरीकियों ने ही कहा, यह आदमी व्हॉइट हाउस में नहीं चलेगा। अर्थात् वहाँ भी सत्यम् वद को महत्व दिया गया। सत्य को ही महत्व देना होगा। हम लोगों को वेदों के आधार पर जीवन मिला है। मनुष्य जीवन जब वेदों के मार्ग पर चले, तभी सच्चा जीवन है।

लोग कहते हैं, हम मानवता धर्म को मानते हैं। यह कैसा धर्म है? वास्तव में भारत भूमि से जुड़ा मनुष्य जीवन सच्चा जीवन है, वैदिक सनातन धर्म से जुड़ा हुआ मनुष्य जीवन ही प्रशस्त है। सड़क से दूर धान के खेत में कोई गाड़ी फँसी हो, तो पेट्रोलिंग वाले भी उसे कुछ नहीं बोलते, कोई मूर्ख आदमी होगा, जो गाड़ी को खेत में ले गया, फँसी रहने दो जो गाड़ी नेशनल हाईवे पर हो, उसकी मदद की जा सकती है, लेकिन जो गाड़ी मार्ग पर ही नहीं है, उसकी मदद कौन करेगा? पश्चिम में जहाँ न औरत का ठिकाना, न बाप की चिंता, न भोजन की स्वच्छता, न धन की पवित्रता, न दया, न संयम, यह कैसा मानवता धर्म है। भारत में तो वैदिक सनातन धर्म है, लोग सुबह उठते हैं, तो हथेली पर ही ईश्वर के दर्शन करते हैं। भगवान के नाम

से सुबह की शुरुआत करते हैं। पृथ्वी पर पाँव रखने से पहले उसे प्रणाम करते हैं, ईष्ट देव को प्रणाम करते हैं। पग-पग पर भगवत्स्मरण, यही सनातन जीवन है।

एक व्यक्ति के घर गया था, काठियावाड़ी यादव परिवार है, बहुत संस्कारी है, उनकी बेटी है, कोई बड़ी पढ़ाई कर रही है, उसकी दीक्षा हो गई है। उसने पूछा, 'गुरुजी आप जितना बोले थे, उतना भजन नहीं हो पाता है, उतनी माला जपती हूँ, जितना आपने बताया था, लेकिन रामायण नहीं पढ़ पाती हूँ। मैंने कहा, 'तो छुट्टी के दिन पढ़ो। इस दिन रामायण पाठ को अपनी दिनचर्या में शामिल कर लो।' रविवार को लोग रुके हुए काम निपटाते हैं, सप्ताह भर के कपड़े इत्यादि धोते हैं, उन्हें इस छुट्टी के दिन रामायण पाठ के लिए भी समय तय कर लेना चाहिए। उसने बताया, 'दस हजार बार नाम जपती हूँ,' क्या बात है! यही सनातन धर्म है, इतना कितने लोग जपते होंगे? मैंने कहा, 'मैं आशीर्वाद देता हूँ, इसी तरह जपोगी, तो साल दो साल में पचास हजार बार जपने लगोगी।' तो आज के युवा व बच्चे भी भगवान का नाम जपने लगे हैं। ध्यान से सुनें आप लोग, बड़े आयु वाले लोग ध्यान दें। आप लोग भी जपना शुरू करो। वरना ये बच्चे आपको घर में खाँसने नहीं देंगे। बोलेंगे, सारा जीवन पेट भरने में लगा दिया, पैसा कमाया, भगवान का नाम नहीं लिया। नाम कब लेंगे?

विभिन्न धर्म हैं, सनातन धर्म, आज भी बड़े संस्कारी लोग हैं। लोग रात-रात भर प्रवचन सुनते हैं, आप भी संस्कारी हों। उधर गिरिजा घरों में आधा घंटा में सब कर्मकांड खत्म हो जाता है और उसके बाद लोग रविवार को समुद्र के किनारे जा लेटते हैं।

मनुष्य जीवन में भगवत्स्मरण जरूरी है। मन का सदुपयोग करें। ज्ञानेन्द्रियों में सबसे बड़ा क्षेत्र श्रवण इन्द्रीय का ही है। जितना हम आँखों से देखते हैं, उससे करोड़ों गुना ज्यादा कानों से सुनते हैं। सम्पूर्ण अध्ययन का काम कानों से जुड़ा है। जब अध्ययन करता है आदमी, गुरु बोलता है, शिष्य सुनता है। पुराने जमाने में गुरु सुना-सुनाकर ही याद करा देते थे। नाक से जो ज्ञान होता है, वह अत्यंत सीमित है, आँखों से जो होता है, वह भी सीमित है। कानों से जो होता है, वह असीमित है। ईश्वर को कान से सुनें, कान से ज्ञान करें। केवल पद ज्ञान ही महत्वपूर्ण नहीं है। सुनाई पड़ना हीं बड़ा ज्ञान है। किसी ने कहा, 'राम गांधी नगर जाता है।' तो कानों से पहले 'राम' सुना, उसके

बाद 'गांधी नगर' सुना, फिर 'जाता' सुना और फिर 'है' सुना। सुना, जाना और उसके बाद ही वाक्य का अर्थ समझ में आया। कान से हम सुनें, इसके बाद ज्ञान सुनें, अर्थ अनुभव करें, उसके बाद प्रवचन करें, भगवान की महिमा गाएँ। यही सनातन धर्म है।

●

# रजत जयंती परिक्रमा : अयोध्या महोत्सव

**उदय प्रताप सिंह**

मुक्तिदायिनी माँ गंगा के पावन तट पंचगंगा (काशी) पर रामावतार स्वामी रामानंद ने ७१५ वर्ष पूर्व रामभक्ति का अनुपम आलोक बिखेरा था। उसकी परमोज्ज्वल आभा से सनातन भारतीय संस्कृति व समाज आज तक आलोकित हो रहा है। धार्मिक चेतना से मंडित व युगीन परिस्थितियों की अद्भुत पहचान रखने वाले आचार्य रामानंद ने लोक में रचे-बसे **श्रीराम,** जगतजननी **माँ सीता** सहित **लक्ष्मण** को परमोपास्य बनाया। दक्षिण में प्रादुर्भूत भक्ति को उत्तर में अवतरित श्रीराम से जोड़कर उन्होंने समाज में एक नयी चेतना की लहर उत्पन्न कर दी थी। शास्त्र और लोकाचार में अद्भुत समन्वय स्थापित करने वाले श्रीरामानंदाचार्य की चेतना में राष्ट्रभक्ति का प्रबल रूप प्रकट होता है। उनकी समन्वयशील दृष्टि ने तत्कालीन समाज में व्याप्त विकृतियों का निरसन श्रीराम के लोकव्यापी पावन चरित-गायन से किया था। उनकी उदारता ने उपासना पद्धति के भेदों को समेटते हुए सगुण-निर्गुण, शैव-वैष्णव, स्पृश्य-अस्पृश्य जैसी विषमताओं को समाप्त कर दिया था। शिव की नगरी में राम का गुणगान, सगुण के धाम में निर्गुण का तूर्यनाद, राम के साथ कृष्ण की भक्ति, द्विज के साथ द्विजेतर का सम्मान उनकी उदात्त चेतना का प्रमाण है।

रामावतार ज.गु.रामानंदाचार्य ने गुरु राघवानंदाचार्य द्वारा प्रदत्त आध्यात्मिक चेतना से श्रीमठ को धर्म, संस्कृति और साधुता का संगम बना दिया था। विशिष्टाद्वैत के दार्शनिक रसायन में लोक-परलोक को उन्होंने ऐसा मिलाया कि उनका पार्थक्य ही मिट गया। यही कारण है कि सात शताब्दियों से श्रीसम्प्रदाय की यह आदि पीठ लोकमानस को तृप्त करती रही है। अनंतानंद, कबीर, रैदास, धन्ना, पीपा, पद्मावती-सुरसरी, सेन इत्यादि उनके बारह शिष्यों ने अपनी शीतलस्पर्शी वाणियों द्वारा तत्कालीन समाज को आप्यायित तो किया ही उनका महत्त्व आज भी कम नहीं है। आचार्य प्रवर की प्रेरणा से श्रीसम्प्रदाय के अन्तर्गत संस्कृत, पैशाची और हिन्दी में प्रभूत साहित्य रचा गया। इन वाणियों के प्रभाव से जाने-अनजाने कई उप-सम्प्रदायों का समय-समय पर उद्भव भी हुआ।

वर्तमान श्रीसम्प्रदायाचार्य ज.गु.रांमनरेशाचार्य महाराज उसी सुदीर्घ परम्परा के एक प्रकाश पुन्ज हैं। इनके व्यक्तित्व में उदारता, साधुता एवं वैदुष्य का अद्‌भुत संगम है। जिन विशिष्टताओं के कारण ज.गु. रामानंदाचार्य को रामावतार कहा गया उन्हीं गुणों के आधार पर वर्तमान श्रीसम्प्रदायाचार्य श्रीरामनरेशाचार्य को रामानन्दाचार्य के अवतार रूप में भक्त जन देख रहे हैं। वर्षों से लुप्तप्राय श्रीमठ को स्वामी रामनरेशाचार्य ने पचीस वर्षों की अनवरत साधना द्वारा प्राणवन्त कर दिया है। श्री सम्प्रदायाचार्य पद प्रतिष्ठित होने का उनका २५वाँ वर्ष पूर्ण हो चुका है। इस निमित्त **अखिल भारतीय स्तर पर वर्षपर्यन्त रजत जयंती महोत्सव** का समायोजन किया गया है।

देश के विभिन्न नगरों-महानगरों, सुदूर अंचलों, आश्रमों और तीर्थस्थलों में इस महोत्सव को सोल्लास सम्पन्न करने की महत्त्वाकांक्षी योजना बनायी गई है। महोत्सव के अन्तर्गत विभिन्न अंचलों में श्रीरामभाव प्रसार यात्राएँ, शोभायात्राएँ, अखण्ड भगवन्नाम संकीर्त्तन, रामलीला, वैदिक एवं भावपूर्ण विधि से परमोपास्य श्रीराम का पूजन, हवन, क्षेत्रीय देवों का पूजन, विद्वत् संगोष्ठियों का समायोजन, संत-सम्मेलन, पत्रकार वार्ताएँ, श्रीरामभावाभिषिक्त महानुभावों का अभिनन्दन, आदिवासी बन्धुओं के साथ सहभोज, हरिजन, गिरिजन को स्वजन बनाने का अभियान, साम्प्रदायिक मठ-मन्दिरों का जीर्णोद्धार, सौन्दर्यीकरण व प्रशस्तीकरण, श्रीमठ से सम्बन्धिथ साहित्य का प्रकाशन-पुनर्प्रकाशन इत्यादि वर्षव्यापी अनुष्ठान सम्पन्न होंगे।

धर्माचार्य के जीवन का पच्चीस वर्ष उसकी अग्नि-परीक्षा का समय होता है। यह महत्त्वपूर्ण कालखण्ड उसकी साधुता, भक्तिभाव, सम्प्रदाय विस्तार, लोकसंग्रह एवं लोकमंगल स्वरूप का परिचायक भी होता है। इस अवधि में उसके लौकिक-पारलौकिक चिंतन का ऐसा परिपाक बन जाता है जिससे शताब्दियों तक लोग रस ग्रहण करते रहते हैं। ऐसे संत-साधु-धर्माचार्य की स्थिति उस परोपकारी बादल जैसी हो जाती है जो अनायासही जल वर्षा करता रहता है। वर्तमान श्रीसम्प्रदायाचार्य श्रीरामनरेशाचार्य जी इसके ज्वलंत दृष्टांत हैं। उनकी उदारता, साधुता व परदुखकातरता स्वामी रामानंद का सहज ही स्मरण करा देती है।

अनंत श्रीविभूषित श्रीसम्प्रदाचार्य ज.गु.रा. श्रीरामनरेशाचार्य की पदप्रतिष्ठा का महोत्सव रामभक्तिधारा के केन्द्र अवधुपरी श्री अयोध्या जी में दिनांक ३१/३/१४ से ९/४/१४ तक विभिन्न उत्सवों के माध्यम से सम्पन्न हुआ। वस्तुतः

रजतजयंती का यह पद प्रतिष्ठा समारोह २३/१/१४ से १२/१/१५ तक पूरे देश और सम्प्रदाय में मनाया जा रहा है। श्री अयोध्या धाम में महोत्सव का दूसरा बड़ा कार्यक्रम पूर्ण हुआ है। इसके पूर्व समारोह का श्रीगणेश श्रीमठ काशी में स्वामी रामानंद की जयंती से २३/१/१४ को हुआ था।

अयोध्या श्रीसम्प्रदाय के परमाचार्य की आदि भूमि है– जन्म भूमि है। यहाँ बारहोमास 'जय सियाराम' की ध्वनि ही गूँजती रहती है। यहाँ की श्रीरामजन्मभूमि, हनुमानगढ़ी, विभिन्न सम्प्रदायों के कार्यालय-मुख्यालय, सरयू का पावन तट श्रीराम की सुगंधि से सुवासित हर साँस, प्राय: पूरी अयोध्या राममय और मंदिरमय है। ऐसी भक्ति की मंदाकिनी में मूल सम्प्रदाय के जगतगुरु का आना, राम को माथा टेकना, सम्प्रदायगत संतों, श्रीमहंथों तपस्वियों से प्रेमपूर्वक मिलना, पधरावणी में जाना प्रत्येक दिन सरयूस्नान, सरयू का पूजन, परम प्रभु श्रीराम का ऋगवेदीय पंचसूक्त पवमान से पूजन, आचार्य श्री द्वारा प्रतिदिन आशीर्वचन करना,हवनात्मक श्रीरामयज्ञ करना दैनिक प्रवृत्तियाँ हैं।

दिनांक ३/४/१४ को देश के शीर्षस्थ विद्वानों द्वारा श्रीराम और अयोध्या पर व्यापक विमर्श हुआ जिसमें प्रो. सूर्यप्रसाद दीक्षित–लखनऊ, डॉ. कौसलेन्द्र पांडेय लखनऊ, श्री श्रीराम मेहरोत्रा लखनऊ, डॉ. अमिता दुबे लखनऊ, प्रो. प्रभुनाथ द्विवेदी, डॉ. अशोक कुमार सिंह और डॉ. उदय प्रताप सिंह, वाराणसी, श्री रणविजय सिंह गोरखपुर और सम्प्रदाय के विभिन्न संतों श्रीमहंथों ने श्रीराम और अयोध्या के महत्त्व को ऐतिहासिक, पौराणिक और वर्तमान संदर्भों में व्याख्यायित किया। प्रतिदिन प्रभु श्रीराम के प्रति बधाई गान का आयोजन हुआ जिसमें देश के विख्यात, कलासाधकों ने संगीत वाद्य, नृत्य द्वारा श्रीराम को अपनी कला का निवेदन किया जिनका विवरण निम्नवत् है–

नवरात्र के प्रथम दिन ३१/३/१४ को सायंकाल अयोध्या के सुंदरतम सीता, राम, लक्ष्मण मंदिर में प्रभु श्रीराम के प्रति बधाई गान का आयोजन किया गया था। यह रसिक परम्परा का जगत् प्रसिद्ध मंदिर है। यहाँ बधाई गान का विशेष महत्त्व है। प्रसिद्ध बाँसुरी वादक श्रीराम मजुमदार मुम्बई ने तबला वादन में श्रीसुधीर पांडेय दिल्ली के साथ अद्भुत समाँ बाँध दिया। बाँसुरी के सुर लय ताल में विलीन श्रोताओं के लिए समस्त भवबाधाओं से विमुक्त हो राममय हो गये थे। उनके उपरांत म. श्रीरामकिशोर दास ने अपनी पूरी मंडली के साथ प्रभुभजनों से लोगों को अभिभूत कर दिया।

दूसरे दिन १/४/१४ को कनक बिहारी मंदिर के प्रशस्त प्रांगण में इंदौर

से आयीं श्रीमती कल्पना जोगलेकर ने शास्त्री गायन द्वारा पं. सुधीर पांडेय के तबला वादन से कई भजन प्रस्तुत कर लोगों को सुनने के लिए विवश कर दिया। लखनऊ से धर्मनाथ मिश्र ने हारमोनियम द्वारा एक अलग रूप ही खड़ा करा दिया। दूसरे क्रम में विहार के श्री भरत शर्मा ने भोजपुरी में बधाई गान प्रस्तुत किया। उसकी मिठास का आनंद श्रोता घण्टों लेते रहे। सुश्री अनामिका सिंह ने ७-८ साथियों के साथ भजनों की एक शृंखला ही प्रस्तुत कर दी। तीसरे दिन २/४/१४ को बधाई गान का कार्यक्रम बड़ा स्थान रसिकपीठ जानकी घाट पर सम्पन्न हुआ। इस कार्यक्रम के कलाकार कोलकाता से आए पं. भार्गव चटर्जी ने अपने गायन द्वारा श्रोताओं को मंत्र मुग्ध कर दिया। तबले पर संगीत पं. सुधीर पांडेय दिल्ली तथा हारमोनियम पर पं. धर्मनाथ मिश्र ने किया।

चौथे दिन दि. ३/४/१४ को दशरथ महल बड़ा स्थान पर गायन सम्पन्न हुआ। इसमें पं. राजेश्ववर आचार्य का शास्त्रीय गायन मन को मोह लिया। तबले पर किशन राम दोहकर और हारमोनियम पर रामचंद्र भागवत वाराणसी ने गायन का अद्भुत रूप प्रस्तुत किया। उसी दिन परम्परागत गायन पं. गौरीशंकर जी ने किया। उनके बधाई गान से सभी लोग कुछ समय के लिए राममय हो गये। ४/४/१४ को झुनकीघाट रामकिला पर बधाई गान का आयोजन किया गया इसमें मुम्बई से आए पं. अखिलेश चतुर्वेदी ने मन मुग्ध करने वाला कत्थक नृत्य प्रस्तुत किया। इसी दिन पद्मश्री स्वामी जी .सी.डी. भारती रायपुर (छत्तीसगढ़) से पधारकर पूर्व पश्चिम के रागों को समन्वित रूप देते हुए घंटों लोगों को अपने जादुई गायन से बाँधे रखा। उन्होंने राम जी के जन्मोत्सव पर बधाई गायन द्वारा लोगों को ऐसा ऐन्द्रजालिक प्रभाव डाला कि लोग रात्रिपर्यन्त रामभाव में ही डूबे रहे।

दिनांक ५/४/१४ को लक्ष्मण किला में अद्भुत गायन सम्पन्न हुआ। लखनऊ में भारतखण्डे वि.वि. की कुलपति श्रीमती श्रुति शोडोलकर ने सारंगी पर विनोद मिश्र, तबले पर रविकांत मिश्र लखनऊ तथा हारमोनियम पर रामचंद्र भागवत वाराणसी के साथ बधाई गीत को उत्कृष्टता प्रदान किया। ६/४/१४ को बड़ा भक्तमाल में प्रभुराम के प्रति शास्त्री गायिका सुचरिता गुप्ता ने कई गायन प्रस्तुत किया। तबले पर उनका साथ श्रीललित कुमार वाराणसी तथा हारमोनियम पर यमुना वल्लभ गुजराती ने दिया। जिन्हें प्यार से लोग भैय्यन जी कहते हैं। गायन का यह क्रम ७/४/१४ को वैदेही भवन जानकीवाट अयोध्या में सम्पन्न हुआ जिसमें मुख्य गायन श्रीमती कंगना बनर्जी का था। उनका साथ

दिया श्रीलाल जी मलिक ने तबला द्वारा और दीपक चौबे (अयोध्या) ने हारमोनियम द्वारा गायन को विविध रागों से सजा दिया। ८/४/१४ को वैष्णवी प्रज्ञा भारती ने वृंदावन से आकर परब्रह्म श्रीराम के गायन का उत्कृष्ट रूप प्रदर्शित किया। म. श्रीरामकिशोर दास ने अंतिम दिन श्रीराम के प्रति रागों द्वारा प्रणति निवेदन करते हुए उस दिन का समापन प्रस्तुत किया। ९/४/१४ को मणिराम दास की छावनी के वर्तमान म. श्री नृत्यगोपालदास के आतिथ्य में श्री रवीन्द्र जैन मुम्बई ने साथियों द्वारा बधाई गान प्रस्तुत करते हुए रामायण की चौपाइयों का गायन प्रस्तुत किया। उस कार्यक्रम में जन सैलाब उमड़ पड़ा था। कार्यक्रम का संयोजन श्री अमूल्य शर्मा वाराणसी ने किया।

श्री सम्प्रदाचार्य ज.गु.रा. श्रीरामनरेशाचार्य की वर्षों से इच्छा थी कि अयोध्या में नवरात्र (रामनवमी) के अवसर पर प्रभुश्रीराम के प्रति बधाई गान का आयोजन हो। इसे संयोग ही या एक प्रकार का चमत्कार कहेंगे कि उनके आचार्य पीठ पर आसीन होने के पचीसवें वर्ष में यह अभिलाषा पूर्ण हुई। यह सब परम प्रभु श्रीराम की ही अहेतुकी कृपा कही जाएगी।

दिनांक ९/४/१४ को वर्तमन श्रीसम्प्रदायाचार्य श्रीरामनरेशाचार्य का गुलाब की पंखुड़ियों से पुष्पाभिषेक हुआ। यह कार्यक्रम नागरिक अभिनंदन के रूप में आयोजित था जिसमें अयोध्या के समस्त वैरागी, श्रीमहंत, महामंडलेश्वर उपस्थित थे। सम्प्रदाय के आदि प्रवर्त्तक आचार्य श्रीराम की जन्मभूमि अयोध्या में इस कार्यक्रम का वर्षों बाद सम्पन्न होना सम्प्रदाय का एक बड़ा मोड़ है और रामभक्ति परम्परा में एक अभिनव इतिहास का सृजन भी है। प्राप्त इतिहास एवं परम्परागत अनुश्रुतियों में इस प्रकार का यह अद्वितीय महोत्सव था।

## इंदौर (म.प्र.) १५/४/१४-१९/४/१४ तक

रजत जयंती परिक्रमा का यह क्रम वर्ष पर्यन्त चलता रहेगा। इंदौर इसका तीसरा पड़ाव है। यह म.प्र. का प्रमुख औद्योगिक नगर और रामानंद सम्प्रदाय का गढ़ है। वर्तमान श्रीसम्प्रदायाचार्य का यहाँ के लोगों के प्रति विशेष अनुग्रह दिखायी पड़ता है। लगभग दो दशकों से यहाँ के भक्तों ने समय-समय पर कई महत्त्वपूर्ण कार्यक्रम सम्पन्न कराए हैं। यहाँ के प्रमुख भक्तों एवं सेवाभावी जनों में श्रीगोपालदास मित्तल (भाई जी), श्रीविष्णु बिंदल, गीता बिंदल, श्री तुलसी मनवानी, श्रीमती लक्ष्मी मनवानी श्री एम.एम. जोशी एवं स्नेह जोशी, श्रीमती इंदु जादौन, श्रीमती पुष्पा श्रीवास्तव आदि ने इस महोत्सव को भव्य

रूप देने में अतुलनीय सेवाभाव का परिचय दिया।

१५/४/१४ को 'गीता भवन' इंदौर में हनुमद्जयंती का आयोजन किया गया। उज्जैन के प्रसिद्ध कथावाचक श्री विजय शंकर मेहता ने महाराजश्री की सन्निधि में हनुमत् स्वरूपों का विशद-व्यापक एवं प्रभावकारी वर्णन किया। उन्होंने हनुमद् भक्ति को वर्तमान जीवन के संदर्भ से जोड़कर एक अभिनव व्याख्या की। यह रजत जयंती महोत्सव का इंदौर में अति भव्य कार्यक्रम था। अंततः महाराजश्री ने रामानंद सम्प्रदाय में हनुमान की उपासना को वाल्मीकि रामायण से आजतक क्रमबद्ध विवेचन किया और हनुमान के स्वरूप की सम्प्रदाय में उपयोगिता बनाया। प्रारम्भ में श्रीमठ के विद्यार्थियों द्वारा वैदिक मंगलाचरण का पाठ हुआ।

१६/४/१४ को इंदौर महानगर में दशाधिक हनुमत विग्रहों का महाराजश्री की सन्निधि में दर्शन पूजन किया गया। रणजीत हनुमान, बनखंडी हनुमान, राजवाड़ा हनुमान इत्यादि के दर्शन करने में रात्रि के बारह बज गये। उक्त स्थलों पर पहले से ही हनुमत भक्तों की अपार भीड़ थी। ज.गु.रा. श्रीरामनरेशाचार्य के पहुँचते ही भीड़ कई गुनी बढ़ गई। सब विग्रहों के दर्शनोपरान्त महाराज श्री ने प्रवचन भी किया बनखंडी हनुमान में महराजश्री की पूर्व स्मृतियाँ ताजा हो गईं। रामानंदाचार्य की पदवी लेने के उपरांत पहली बार यहीं से प्रयाग कुम्भ में चलने की योजना सफलीभूत हुई थी।

१७/४/१४ को राष्ट्रीय संगोष्ठी का संयोजन किया गया था। संगोष्ठी के संयोजक वाराणसी के डॉ. उदय प्रताप सिंह थे। विषय था– रामानंद सम्प्रदाय में हनुमत उपासना। उज्जैन के डॉ. मिथिला प्रसाद त्रिपाठी, इंदौर के श्री राकेश शर्मा, डॉ. मीनाक्षी स्वामी, डॉ. कला जोशी इत्यादि ने गीता भवन के खचाखच भरे सभागार में हनुमान के ऐतिहासिक पौराणिक और वर्तमान स्वरूपों पर विस्तृत चर्चा किया। डॉ. उदय प्रताप सिंह ने आधुनिक साहित्य विशेषत: हिन्दी में हनुमत स्वरूपों पर शोधपूर्ण वक्तव्य दिया। उन्होंने कहा कि हनुमान ही एक ऐसे उपास्य हैं जो सेवक से सेव्य तक विस्तृत हैं। इसी प्रकार मिथिला प्रसाद त्रिपाठी, श्रीराकेश शर्मा ने लोकमानस में हनुमान की चर्चा कर गोष्ठी को नया तेवर प्रदान किया। अंततः महाराजश्री ने रामकथा में हनुमान की भूमिका पर व्यापक प्रकाश डालते हुए कहा कि हनुमान के बिना न रामकथा पूरी होती है और न रामदरबार ही पूर्ण बनता है।

१८/४/१४ को रणजीत हनुमान में स्वामी जी ने विधिवत् पूजन किया।

वहाँ का हनुमत् विग्रह अत्यंत आकर्षक एवं दिव्य प्रतीत हुआ। पूजनोपरांत रणजीत हनुमान परिसर में महाराजश्री के स्वागत में एक नागरिक अभिनंदन का कार्यक्रम सम्पन्न हुआ जिसमें ओंकारेश्वर के महामंडलेश्वर ने स्वामी जी की भक्तिसाधना की भूरि-भूरि प्रशंसा की और अमर्षपूर्ण शब्दावली में यह उपालंभ दिया कि रजत जयंती महोत्सव का कार्यक्रम ओंकारेश्वर में क्यों नहीं किया गया। ज.गु.रा. श्रीरामनरेशाचार्य ने अपने वक्तव्य में इसका समाहार करते हुए कहा कि आप के आश्रम पर यह महोत्सव अवश्य ही मनाया जाएगा। उचित समय की प्रतीक्षा कीजिए।

अभिनंदन संगोष्ठी में श्रीगोपालदास मित्तल श्री विष्णु विंदल और सेन समाज के कई लोगों ने महाराजश्री के प्रति प्रणति निवेदन करते हुए आगामी कार्यक्रमों की चर्चा की। महाराजश्री से आत्मीय सम्बन्धों का उल्लेख करते हुए वक्ता कभी-कभी भावविभोर हो जाते थे। सेन, स्वामी रामानंद के बारह शिष्यों में एक प्रमुख शिष्य थे। उनके समाज में ज.गु.रा. की गद्दी के प्रति एक परम्परागत भावनात्मक लगाव है– उसका प्रगटीकरण उस दिन शताधिक मालाओं एवं आत्मीय वचनों से सम्पन्न हो रहा था। मध्य प्रदेश सरकार में राज्यमंत्री का दर्जा प्राप्त सेन समाज के एक सज्जन तो इतना अभिभूत थे कि उनका कहना था कि महाराजश्री काशी छोड़कर यहीं रहें। उल्लेखनीय है कि मध्य प्रदेश की शिवराज सरकार ने सेन महाराज के नाम पर एक भव्य आश्रम बनवाने की पहल कर दी है। इस प्रकार की पहल सामाजिक एवं सांस्कृतिक एकता के लिए महत्त्वपूर्ण है।

अभिनंदन समारोह में काशी से आये डॉ. उदय प्रताप सिंह ने कहा कि 'इतिहास स्वयं को दुहराता है। दो ज्योतिर्लिंगों के बीच बसे शहर इंदौर कितना भाग्यशाली है कि स्वामी रामानंद ने सात सौ वर्ष पूर्व जिस सम्बन्ध को सेन को गुरु मंत्र देकर प्राणवंत किया था उसी का प्रत्यावर्त्तन वर्तमान श्री सम्प्रदायाचार्य कर रहे हैं। देवी अहिल्या ने अपने शासन काल में श्री सम्प्रदाय की अनादि पीठ श्रीमठ काशी में हजारा नामक स्वतंत्र दीप स्तम्भ का निर्माण कराया था। वह श्रीमठ में ही स्थित है। शताब्दियों वर्ष पूर्व का सम्बन्ध महाराजश्री की इस रजत जयंती वर्ष पर की गई यात्रा से जीवंत हो उठा है। अंततः श्री सम्प्रदायाचार्य श्रीरामनरेशाचार्य ने कहा कि इंदौर में विशेषतः रणजीत हनुमान परिसर में यह दिव्य प्रतिमा राम भाव प्रसार की साक्षी है। हनुमान जी ने श्रीराम की सेवा करते हुए बल-बुद्धि, समर्पण सत्यता और आत्मीयता का परिचय दिया था।

वर्तमान पीढ़ी को श्री हनुमान के इस गुण का परिपालन करना चाहिए। उसी क्रम में उन्होंने सेन समाज के प्रांतीय एवं राष्ट्रीय पदाधिकारियों को इस भव्य आयोजन के लिए आशीर्वाद भी प्रदान किया।

इसी यात्रा के क्रम में एक दिन तो अद्भुत अपूर्व दृश्य देखने को मिला। वाजपेयी जी के सौजन्य से एक हनुमत् विग्रह का पूजनदर्शन रखा गया था। स्थान का भवानीपुर इंदौर शहर का बाहरी प्रभाग जहाँ कम आय के लोग निवास करते हैं। उस अद्भुत कार्यक्रम में श्रम से पाँच हजार जनों का सैलाब महाराजश्री का दर्शन करने के लिए उमड़ पड़ा।

महाराज श्री को देखने के लिए आबाल-वृद्ध नर-नारी व्याकुल थे। पूरे दो किमी. तक पुष्पवर्षा से महाराज श्री का ऐसा अभिनंदन न भूतो न भविष्यत' जैसा था। भक्तों की यह बाढ़ देखकर यह सोचने के लिए विवश होना पड़ा कि धर्म जैसी ताकत समाज को जोड़ने के लिए कोई नहीं। वह दृश्य देखकर मन इतना अभिभूत हो उठा कि बहुतों की आँखों से अश्रुधारा का प्रवाह होने लगा। यह दृश्य कुछ उसी प्रकार का था जैसे श्रीराम के अयोध्या लौटने पर नर-नारी दीपक जलाकर,पुष्प वर्षा कर स्वागत करते थे। मार्ग में गोस्वामी तुलसीदास उल्लिखित देवताओं द्वारा पुष्पवर्षा का स्मरण भवानीपुर की भक्तस्नात जनता कर रही थी।

अंतिम दिन महाराजश्री की विदाई इंदौर की जनता ने किया। इंदौर से होशंगाबाद के इस रजत जयंती महोत्सव में अनेक प्रवृत्तियाँ सम्पन्न हुईं।

●

# रजतजयंती समापन समारोह
# (१०-१-१५ - १५-१-१५ ई.)

स्वामी रामनरेशाचार्य के ज.गु.रामानंदाचार्य पद प्रतिष्ठा का रजय जयंती समापन समारोह काशी में अद्वितीय उत्साह के साथ सम्पन्न हुआ। पचीस वर्ष से रामानंदाचार्य पदप्रतिष्ठित स्वामी जी के जीवन का साठ वर्ष भी इसी समय पूर्ण हो रहा है। सब मिलाकर कई दृष्टियों से वर्तमान आचार्य के लिए यह अत्यन्त ऐतिहासिक व मांगलिक क्षण है।

लौकिक जीवन में प्राय: देखा जाता है, जन्मभूमि, निवासभूमि और साधनाभूमि पर क्षेत्रीय महापुरुषों का यथोचित आदर सम्मान नहीं होता है। रामकथा के अद्भुत गायक गोस्वामी तुलसीदास का अनुभव भी इस तथ्य की पुष्टि करता है– 'तुलसी वहाँ न जाइए जहाँ जनम को ठाँव।' इसी मंतव्य से मिलता किसी और का कथन है कि 'घर का जोगी जोगड़ा आन गाँव का सिद्ध'। कहने का आशय यह है कि जिससे लोग निकटकता से परिचित होते हैं, गाँव, माँ-पिता, भाई-बंधु, सखा, जन-परिजन, जाति-सम्प्रदाय, सहपाठी का आँकलन गंभीरता से नहीं करते। 'अतिपरिचयात् अवज्ञा' वाले भाव में उपस्थित हो निंदानिमग्न ही रहते हैं। ईर्ष्या-द्वेष, प्रतिस्पर्द्धा भी हार्दिकता में बाधक बनती है। अत: घर का परम योगी भी सस्ता जोगड़ा बन जाता है और परम साधु, संत, वैरागी, आचार्य भी सामान्य सा संत दिखने लगता है। पर वर्तमान आचार्य के साथ ऐसा नहीं है। वह जितना बाहर आदर और श्रद्धा के पात्र हैं कहीं उससे अधिक अपनी कर्मभूमि और साधनाभूमि पर बंदित हैं। उसका सबसे बड़ा प्रमाण है– उनके रजत जयंती वर्ष का समापन समारोह। दूर की वस्तुएँ सुहानी और आकर्षक प्रतीत होती हैं। अतीत की घटनाएँ भी आदर्श और परिपूर्णता से मंडित लगती हैं जब कि उनकी भी सीमाएँ हुआ करती हैं। कहने का आशय इतना ही है कि सामने उपस्थित व्यक्ति भौतिक दृष्टि से बौना प्रतीत हो सकता है या कम महत्त्वपूर्ण लग सकता है। वर्तमान पीठाधीश्वर स्वामी रामनरेशाचार्य ने अवधारणा के स्तर पर निर्मित इस मिथक को तोड़ा है, और अपनी ही भूमि पर अपने ही लोगों के मध्य प्रतिष्ठा का एवरेस्ट स्पर्श कर लिया है।

गत वर्ष १२-१-१४ से प्रारम्भ रजत जयंती समारोह १५-१-१५ को पूर्णता प्राप्त कर सका है। इसका शुभारंभ काशी से हुआ और समापन भी यहीं हुआ– यह काशी वासियों के लिए परम मंगलमयता का क्षण तो है ही काशी के धार्मिक इतिहास और सांस्कृतिक चेतना में एक नये अध्याय का जुड़ना भी है। एक वर्ष पूर्व काशी से उठी धर्म चेतना की यह लहर रामभक्ति के मूल स्थान अयोध्या में नहाती हुई चण्डीगढ़ कुरुक्षेत्र, सामाना, राजपुरा, लुधियाना पटियाला, सूरत, अंकलेश्वर, मुम्बई, इंदौर, जबलपुर तथा अन्यान्य क्षेत्रों को रससिक्त करती हुई पुनः काशी में पर्यवसित हो गई। काशी में वर्षों बाद लोगों को प्रतीत हुआ कि संतो, वैरागियों, संन्यासियों, आचार्यों एवं विभिन्न संत सम्प्रदायों में कितना आकर्षण होता है। काशी में संत-समाज का एक बड़ा समूह रहता है, विद्वानों की मंडली है, साधकों का स्वर है, गंगा की प्रतिध्वनि है, पढ़े-लिखे लोगों का बड़ा समाज है, सोचने समझने और समझकर सटीक टिप्पणी करने वालों का एक आलोचक समुदाय है। सभी ने एक स्वर से वर्तमान आचार्य की साधुता, वैदुष्य, उदारता, परदुख से द्रवीभूत होने का स्वभाव, बड़े-बड़े धार्मिक व सांस्कृतिक आयोजनों को संयोजित करने की क्षमता की प्रशंसा की है।

प्रथम दिन १०-१-१५ को संतों का सम्मेलन था। उनकी वाणी को सुनकर, उनके तापसवेश को देखकर, लोगों के मन में जिस पवित्रता का भाव जमा वह रामभाव की व्यापकता का ही प्रतीक था। ऐसा अद्‌भुत कार्यक्रम अब काशी में भी महीं होता है। यह टिप्पणी सर्वत्र सर्वसामान्य से सुनी जा रही थी। इस कार्यक्रम से वर्तमान आचार्य के प्रति लोगों की आस्था में कई गुना विस्तार दिखा। योगी तो बारह वर्ष में ही बारहखण्डी योग की प्रक्रिया पूर्ण कर योगी कहाने का अधिकारी बन जाता है पर साधु-वैरागी और संत के साथ ऐसी सीमाबद्धता नहीं है। उसे तो क्षण-क्षण का हिसाब देना होता है, जीवन भर का हिसाब देना होता है। कहीं वह रामनाम से क्षणभर के लिए भी भटक गया तो साधुता गयी। जो निरंतर पच्चीस वर्षों से राम भक्ति की साधना में निमग्न होगा उसके एकाग्रचित्तता की कल्पना करना कितना कठिन है व्यवहार में तो लाना कल्पनातीत ही लगता है। पर ज.गु.रा. स्वामीरामनरेशाचार्य ने इसे सत्य कर दिखाया है। यह देशभर से आए संतों की वाणियों का सार है। प्रथम दिन के इस संत सम्मेलन में गुजरात, मध्यप्रदेश, वृंदावन, काशी, बिहार, उत्तराखण्ड और सीमांत पंजाब से संतों का एक बड़ा जत्था उपस्थित था जो अपने आचार्य की पचीस

वर्षीय साधना को देखकर, सुनकर और अनुभव कर मुग्ध था। द्वादश पीठों के श्रीमहंथ भी इस अवसर पर उपस्थित थे। प्रमुख संतों में श्रीभवानीनंदन यतिजी, श्रीअविमुक्तेश्वरानंद जी (काशी), सेनाचार्य श्री अचलानंदगिरि जी (जोधपुर), बलरामदास जी (वृन्दावन), स्वरूपदास जी गुजरात, महात्यागी जी गुजरात इत्यादि की महत्त्वपूर्ण उपस्थिति रही। सभी संतों ने महाराज जी के प्रति शुभकामना व्यक्त करते हुए उनके धार्मिक अभियान में तन-मन-धन से जुटने का आवाहन किया।

११-१-१५ को हिन्दी विद्वानों की संगोष्ठी थी। केन्द्रीय विषय था- 'रामभक्ति परम्परा : आदि से वर्तमान तक'। देश के विभिन्न प्रान्तों से आए विद्वानों ने अपना सार गर्भित वक्तव्य देते हुए कहा कि भक्ति में समाज को जोड़ने की अद्‌भुत शक्ति है। विभिन्न सम्प्रदायों ने समाज से ईश्वर तक पहुँचने के जिस सर्वसामान्य मार्ग का प्रयोग किया है– वही भक्ति है। भक्ति सम्प्रदायों में रामभक्ति परम्परा और वर्तमान आचार्य तक (स्वामीरामनरेशाचार्य) की भक्ति पर व्यापक प्रकाश डाला गया। विषय प्रवर्त्तन डॉ. उदय प्रताप सिंह ने किया। उन्होंने भक्ति के सनातन स्वरूप पर प्रकाश डालते हुए रामभक्ति की विविधता का विश्लेषण किया। प्रो. त्रिभुवन नाथ शुक्ल, प्रो. प्रभुनाथ द्विवेदी, डॉ. अशोक कुमार सिंह, प्रो. हरिकेश सिंह, बाबूराम त्रिपाठी इत्यादि ने व्यापक विमर्श द्वारा भक्ति की प्रासंगिकता और वर्तमान आचार्य के वैदुष्य पर अपना मंतव्य दृढ़ता के साथ प्रस्तुत किया।

१२-१-१५ को तीसरे दिन तो समारोह की ऐसी भव्यता बढ़ी कि काशी का सम्पूर्ण विद्वत् मण्डल उमड़ पड़ा। अवसर था पाँच विभूतियों को एक-एक लाख के 'रामानंदाचार्य पुरस्कार' से विभूषित करने का। प्रतिवर्ष एक विद्वान् को ही रामानंदाचार्य पुरस्कार प्रदान किया जाता है; पर इस वर्ष रजत जयंती समारोह में पाँच विद्वानों को पुरस्कार प्रदान कर वर्तमान आचार्य ने सरस्वती के प्रति अपनी निष्ठा व्यक्त की है साथ ही रामभक्ति की पारंपरिक उदारता का एक उदाहरण भी प्रस्तुत किया है। पुरस्कृत विद्वानों में आचार्य रामयत्न शुक्ल, वेदमूर्ति विनायक मंगलेश्वर बादल व संत साहित्य मर्मज्ञ डॉ. उदय प्रताप सिंह (काशी), प्रो. कृष्णदत्त पालीवाल और श्रीरामबहादुर राय (दिल्ली) हैं। विद्वानों ने अपनी अभिव्यक्ति में कहा कि वर्तमान आचार्य में स्वामीरामानंद के गुणों की स्पष्ट झलक दीख पड़ती है। उदय प्रताप सिंह ने विनम्रता से कहा कि इसमें मेरा कुछ नहीं यह तो राम जी की कृपा हैं। उन्हीं पर काम उन्हीं पर

आराम अब तो यही जीवन का मंत्र बताता जा रहा है। अन्य विद्वानों ने भी महाराजश्री के प्रति कृतज्ञता ज्ञापित किया।

विद्वानों के सम्मान में और पुरस्कार के महात्म्य पर प्रो. हरिकेश सिंह एवं द्राविड जी ने व्यापक प्रकाश डाला। प्रो. हरिकेश सिंह ने कहा कि इस प्रकार की अद्भुत छटा तो राष्ट्रपति भवन में भी नहीं दिखायी पड़ती है। ज.गु.रा. श्रीरामनरेशाचार्य जी ने इस प्रकार का सान्निध्य प्रदान कर विद्वता, संस्कृति, धर्म और भारतीयता को नवजीवन प्रदान किया है। डॉ अशोक कुमार सिंह ने रामभक्ति परम्परा का गीत प्रस्तुत कर सबका मन मोह लिया। अंततः महाराजश्री ने कहा कि विद्वानों को सम्मान उस ईश्वर को सम्मान देना है। जो सबका जन्मदाता है। वे विद्वान सरस्वती के वरदपुत्र हैं– इनका सम्मान सरस्वती का सम्मान है। सम्मान की परम्परा सनातन भारतीय संस्कृति का महत्त्वपूर्ण पक्ष है।

१३-१-१५ को संस्कृत विद्वानों ने राम तत्त्व, आचार्य रामानंद व वर्तमान आचार्य पर व्यापक प्रकाश डाला। प्रो. राजकिशोर मिश्र, प्रो. यदुनाथ दुबे, प्रो. प्रभुनाथ द्विवेदी, प्रो. राधेश्याम पांडेय, प्रो. कमलेश झा इत्यादि लोगों ने रामभक्ति की व्यापक चर्चा करते हुए वर्तमान समाज से उसे जोड़ने का प्रयास किया और सभी धर्म सम्प्रदायों में भक्ति को सरल-सहज बताया। धर्मदत्त चतुर्वेदी ने वर्तमान आचार्य पर छंदोबद्ध रचना प्रस्तुत कर भक्ति का प्रवाह यहाँ तक स्थापित किया। इस अवसर पर स्वामी रामनरेशाचार्य ने वैष्णवमताब्जभाष्कर के माध्यम से रामभक्ति पर व्यापक चर्चा किया और 'सर्वेप्रपत्ते रधिकारिणोमताः' की बहुत बोधगम्य व्याख्या की।

१४-१-१५ को वसंत पूजा के अन्तर्गत चारों वेदों की एक-एक शाखा का पाठ काशी के विद्वानों द्वारा सम्पन्न हुआ। इस अवसर पर पहली बार 'श्रीमठरत्न' की उपाधि रामानंद सम्प्रदाय के नौ तपस्वी साधकों को महाराजश्री द्वारा प्रदान की गई। इनमें महात्यागी ईश्वरदास जी बापू बलवाड़ा गुजरात, श्रीमहांत कौशल किशोरदास जी भक्तमाली-अयोध्या, श्रीमहांत प्रभुदास जी शास्त्री-अयोध्या, श्रीमहांत रामस्वरूपदास जी-वृंदावन, श्रीमहांत प्रेमदास जी मौनी तेरह भाई त्यागी-अयोध्या, श्रीमहांत दीनबंधुदास जी नक्कखी घाट वाराणसी, श्रीमहांत बलरामदास जी वृंदावन, श्रीमहांत जगन्नाथदास जी सूरत, संत श्री श्यामाशरण जी हरिद्वार हैं। इन संतों के महत्त्व पर प्रकाश डालते हुए महाराजश्री ने कहा– संतों ने ही रामानंदसम्प्रदाय को जीवित रखा है। ये श्रीमठ के नवरत्न हैं। इनमें मानवता का पल्लवन होता है। तापत्रय की आँच संतों के शीतल स्पर्श से ही मिट सकती है। इन संतों

में ७०-९५ वर्ष तक की विभूतियाँ भी हैं जिनके दर्शन मात्र से भवबंध ढीले पड़ जाते हैं। रजत जयंती की अंतिम निशा में भक्तगण प्रभुश्रीराम के प्रति गाये गये भजनों व वाद्ययंत्रों से अभिभूत हो गये। इसका संयोजन अमूल्य शर्मा ने किया।

अंततः संतों ने महाराज श्री के प्रति अपना आभार व्यक्त किया और दिनानुदिन उनके चरणों में रहने की बलवती स्पृहा प्रकट किया। इस अवसर पर साधु समाज के कई अखाड़ों के संत उपस्थित थे। १५-१-१५ को मकर संक्रान्ति का मंगलमय क्षण था। इस दिन विशाल भण्डारा १२ बजे दिन से ८ बजे रात्रि तक अनवरत चलता रहा। वैष्णव समाज में अन्न क्षेत्र, धर्म का बहुत बड़ा अनुष्ठान माना जाता है। उसका विधिवत सम्पादन रजत जयंती वर्ष पर हुआ।

रजत जयंती वर्ष के इस समारोह से वर्तमान आचार्य की एक ऐसी छवि का निर्माण हुआ है जो उदार, भव्य, धर्मनिष्ठ, परोपकारी, वैदुष्य से पूर्ण साधना से बलवती और सम्प्रदाय विस्तारक भी है। काशी युगयुगीन धर्म, संस्कृति, वैदुष्य और ज्ञान की नगरी रही है। यह सहजतः किसी को स्वीकार नहीं करती है। साधना, कर्म, वैदुष्य और ज्ञान को ही महत्त्व देती है। वर्तमान आचार्य को भी काशी ने पचीस वर्ष का समय दिया था। उस अग्नि परीक्षा में काशी ने उन्हें सर्वोत्तम अंक प्रदान किया है। उनके भक्त शिव की नगरी में पंचगंगा की तरह हैं। कई दिशाओं से आते हैं। एक घाट पर स्नान करते हैं और स्वामीरामानंद की चरण पादुका को प्रणाम कर रामभक्ति में रम जाते हैं। भगवान राम, स्वामीरामानंद और स्वामी भगवदाचार्य के त्रिगुण से बना स्वामीरामनरेशाचार्य का व्यक्तित्व त्रिगुण सम्पन्न ईश्वर का स्मरण कराने लगा है। इस वातावरण में घर का जोगी जोगड़ा आन गाँव का सिद्ध व "तुलसी वहाँ न जाइए जहाँ जनम को ठाँव" की उक्तियाँ स्वतः अर्थहीन हो जाती हैं।

●

# अभिनंदन पत्र एवम् सम्मान

महाराजश्री की प्रतिभा किसी से छिपी नहीं है। अतः समय-समय पर उनके वैदुष्य को सम्मानित करने के लिए अभिनंदन पत्रों एवं सम्मान प्रतीकों से उन्हें विभूषित किया जाता रहा है। यह क्रम विद्यार्थी जीवन से ही निरंतर चल रहा है। विस्तारभय से यहाँ कतिपय को ही प्रस्तुत किया जा रहा है। - *संपादक*

॥ श्रीगणेशाय नमः ॥

श्रीगुरुः शरणम्

प्रातःस्मरणीयानां कैलासवासिनां श्रीगुरुचरणानां पण्डितराजानां श्रीराजेश्वर-
शास्त्रिद्राविडमहोदयानां प्रादुर्भावतः एकोत्तरशताब्दमहोत्सवमुपलक्ष्य समायोजिते
पण्डितराजश्रीराजेश्वरशास्त्रिद्राविडस्मारकग्रन्थप्रथमभागप्रकाशनसमारोहप्रसङ्गे
सपरिकराणां विविधविरुदावलीविभूषितानां जगद्गुरुरामानन्दाचार्य-
सम्प्रदायान्तर्गतकाशीस्थपञ्चगङ्गाघट्टस्थितश्रीमठाधीश्वराणां पूजनीयानां

**स्वामिश्री१००८ रामनरेशाचार्यमहाराजानां**

जगद्गुरुवल्ल्भाचार्यवंशजानां काशीस्थगोपालमन्दिरस्थितषष्ठपीठाधीश्वराणां पूजनीयानां

**गो. श्री१००८ श्याममनोहरमहाराजानां**

जगद्गुरुविष्णुस्वामिसम्प्रदायागतकाशीस्थमणिकर्णिकाघट्टस्थितसतुआबाबाश्रमपीठाधीश्वराणां
पूजनीयानां

**श्री१००८जमुना(यमुना)दासमहाराजानां**

गोब्राह्मणप्रतिपालकानां महाराजधिराजानां द्विजराजानां काशिराजानां माननीयानां

**श्री५विभूतिनारायणसिंहशर्मदेववीरपुङ्गवमहाभागानां च**

करकञ्जपुटेषु समर्प्यमाणं

# शुभाशंसनपत्रम्

विश्वेशं श्रीनिवासं सकलसुरयुतं स्वामिमध्यार्जुनेशं
व्यासं गङ्गां कवेरप्रभवशिवनदीं राजराजेश्वरं च ।
पूर्वाचार्यान् नमामः सविनयमनिशं तेऽस्य कुर्वन्तु भव्यं
पूज्यश्रीशास्त्रिराजेश्वरगुरुसुयशःस्रग्धरग्रन्थराजः ॥१॥

रामानन्दार्यवर्यप्रथितसुयशसः सम्प्रदाये तदीये
स्थित्वा श्रीरामभक्तेर्जगति बहु कृतो यैः प्रचारो नुमस्तान् ।
श्रीरामाद्यान् नरेशान् यतिवरतिलकांस्तेऽस्य कुर्वन्तु भव्यं
पूज्यश्रीशास्त्रिराजेश्वरगुरुसुयशःस्रग्धरग्रन्थराजः ॥२॥

पूज्यश्रीवल्लभार्यप्रथितसुयशसस्तत्कुलोदन्वदिन्दून्
गोस्वामिश्यामरूपाननवरतमहो! कृष्णभक्तिप्रचारे।
दत्तस्वान्तान् नमामः सकलगुणनिधींस्तेऽस्य कुर्वन्तु भव्यं
पूज्यश्रीशास्त्रिराजेश्वरगुरुसुयशःस्रग्धरग्रन्थराजः ॥३॥
श्रीविष्णुस्वामिवर्यप्रथितसुयशसः सत्तुबाबेति लोके
विख्याता विश्ववन्द्या यतिवरयमुनादासरूपा महान्तः।
प्राप्तान् वन्दामहे तानिह बत कृपया तेऽस्य कुर्वन्तु भव्यं
पूज्यश्रीशास्त्रिराजेश्वरगुरुसुयशःस्रग्धरग्रन्थराजः ॥४॥
मान्याः काशीनरेशा गुरुचरणकृपापात्रभूता महेच्छा
अस्य ग्रन्थस्य भव्यप्रणयनसहिते मुद्रणे प्रेरका ये।
काशीविश्वेशरूपाः प्रथितसुयशसस्तेऽस्य कुर्वन्तु भव्यं
पूज्यश्रीशास्त्रिराजेश्वरगुरुसुयशःस्रग्धरग्रन्थराजः ॥५॥
येषां श्रीमद्गुरूणां शुभजनिसमयाद् भूवियच्चन्द्र (१०१) वर्षे
शुद्धाभिर्भावनाभिः सहृदयसुखकृद् भक्तवर्गेण येन।
आद्यो भागोऽर्पितस्तत्करकमलयुगे तेऽस्य कुर्वन्तु भव्यं
पूज्यश्रीशास्त्रिराजेश्वरगुरुसुयशःस्रग्धरग्रन्थराजः ॥६॥
तन्वन्ति स्वीयलोके खलु परमकृपां ये गुरूणां कटाक्षा
भक्त्या सर्वो जनो यः समुपगत इहानुग्रहाप्त्यै गुरूणाम्।
कार्येऽस्मिन्नर्पणे श्रीगुरुकरकमले तेऽस्य कुर्वन्तु भव्यं
पूज्यश्रीशास्त्रिराजेश्वरगुरुसुयशःस्रग्धरग्रन्थराजः ॥७॥

फा.कृ. ३० सोमे, २०५६ तमे वै.
(दिनाङ्क ६-३-२००० ई.)

समर्पकाः–
पण्डितराजश्रीराजेश्वरशास्त्रिद्राविडस्मारकग्रन्थसमितिसदस्याः

।। श्रीमते रामानन्दाचार्याय नमः ।।

# अभिनन्दनपत्रम्

आनन्दभाष्यसर्जकजगद्गुरुश्रीरामानन्दाचार्यानुयायिनां पौरस्त्यविविधविद्यासंरक्षणसमु-त्सुकानां वैष्णववनवनजानां प्रथितयशसां न्यायाम्भोधिपारगानां विशिष्टा-द्वैतसिद्धान्तसंरक्षकाणामाचार्य-जगद्गुरुश्रीरामनरेशमहाराजानां जगद्गुरुरामा-नन्दाचार्यपदे प्रतिष्ठापितानां करकमलयोः समुपह्रियते पद्यप्रसूनाञ्जलिः

-१-

श्रीरामनामाञ्चितभव्यभूमीन्
भव्याः नरेशान् परिकीर्त्तयामः।
आचार्यरूपान् महनीयभावान्
नन्दाम ईशाखिलशास्त्रसारान्॥

-२-

विज्ञाग्रगण्यान् नयशास्त्रगेहान्
बोधैकवित्तान् भुवनाभिरामान्।
शास्त्रैकमूर्तीरवनौ यतीन्द्रान्
नन्दाम ईशाखिलबोधनम्रान्॥

-३-

नवाभिषेकान् कमनीयकामान्
नयाब्धिपारान् सुरवाग्विलासान्।
विद्याग्रगण्यान् प्रतिमैकवित्तान्
नन्दाम ईशाञ्चितविग्रहांस्तान्॥

-४-

तर्कैकगौतममतिं विरलाभिरामां
संशीतिसर्पदहने दहनैकरूपाम्।
अध्यापने परमपाटवतामुपेतां
संभावयाम इह वागपरां विभूतिम्॥

-५-

पश्यामि रामानभिषेकभव्यान्
विज्ञैकमोदान् भुवनाभिरामान्।
नन्दाम ईशाखिललोकपालान्
सत्सम्प्रदायान् भवतो विनम्रान्॥

-६-

अहह तात तवैव विद्याऽमला
सृजति संस्कृतवाग्विभवं नवम्।
दहति तापकदम्बभवार्णवं
दिशति भव्यपथं हितदं वरम्॥

-७-

सुजनता प्रथितावनिमध्यगा
दनुजतां विनिहन्ति भयावहाम्।
मधुरमोहदभव्यकलासुधा
किरति ते नवजीवनमौषधम्॥

-८-

नमति ते पदपङ्कजकोमलं
वटुसमूहनवभ्रमरावलिः।
समभिषेकनवार्णवमोहदो
भवतु संशयसर्पविनाशकः॥

संवत् २०४४माघकृष्णा सप्तमी
श्रीरामानन्दाचार्यजयन्ती
वाराणसी

श्रीमताम्
अखिलभारतीयरामानन्दीयश्रीवैष्णवाः

॥ श्रीराम: शरणं मम ॥

# जगद्गुरुरामानन्दाचार्य-दिव्यचातुर्मासमहोत्सव समिति, नाशिक, १९९६

श्रीमताम् अत्रभवतां श्रीक्षेत्रपंचगंगाघट्टविद्योतमानश्रीमठपीठाधीश्वराणां रामभक्ति-मंदाकिनीभगीरथानाम् अनन्तश्रीविभूषितानां **जगद्गुरुरामानन्दाचार्य-श्री-रामनरेशाचार्यमहाराजानाम्** करसरोरुहयो: नासिकवासिभि: सप्रश्रयं समर्प्यमाणा

## भावमयी त्रिवेणिका

श्रीरामचंद्रप्रसादेन भक्तिमुक्तिप्रदायिन्या: दक्षिणवाहिन्या: गौतमीगंगाया: गोदावर्या: अधिकूलं पञ्चवट्याम् विराजमानं चतु:संप्रदायाधिष्ठानं श्रीव्यंकटेशबालाजी मन्दिरं महाराजानां पावनपदकमलसमर्पणेन तीर्थायति खलु।

आचार्यश्रीने 'पक्षो वै मास:' इस नियम के अनुसार आषाढ पूर्णिमासे भाद्रपद पूर्णिमा पर्यंत अनुष्ठित दिव्य चातुर्मास व्रत से श्रीरामभक्ति मन्दाकिनी में सभी को स्नान कराया और जन्म-मरण-चक्र के बंधन को तोड़कर मुक्तिमार्ग की ओर अग्रसर किया, इससे बढ़कर नासिकवासियों के लिए गौरवास्पद और पुण्यावह क्या हो सकता है?

नित्य दिन चर्येत गोदावरी पूजन, कालेरामांचे दर्शन, भगवान् व्यंकटेश बालाजी समोर सीताराम-चरणपादुका पूजन व रामसहस्र नामाने लक्ष तुलसीदल समर्पण, रामयज्ञ, भक्तांच्या घरी जाऊन, कृपाकटाक्षपात, दीक्षादान, दिव्योपदेश ह्यांचा आस्वाद ज्यांची चाखला असेल, तोच त्यास समजू शकतो. वाणी ह्याचे वर्णन करण्यास अपुरी पडेल.

आता आपला आमच्याशी विरह होणार, तरी संगमापेक्षा विरह श्रेष्ठ. कारण संगमात फवत तुम्हीच आमच्याडोळ्यासमोरहाल. विरहावस्थेतसाय्याविश्वाततुमच्या स्वरूपाचाआम्ही साक्षात्कार करू.

आपल्या चरणकमली सादर अनंतकोटी साष्टांग प्रणिपात।

**आपले**

बांकेलाल चतुर्वेदी
महामंत्री

दीनबंधुदास महाराज
अध्यक्ष

**आणि समस्त चातुर्मास महोत्सव समिति परिवार**

भाद्रपद पौर्णिमा शके १९१८ शुक्रवार, दि. २७ सप्टेंबर १९९६

॥ श्रीमते रामानन्दाचार्याय नमः ॥

# अभिनन्दनपत्रम्

पौरस्त्यपाश्चात्यवाङ्मयपाथोधिपारङ्गतानां संस्कृतिसंस्कृतसंरक्षणैकव्रतानां कोविद-कदम्बकोकिलवासन्तिकानिलानां तर्ककर्कशपारावारतरङ्गावगाहनपरमपाटवतामुपेतानां वैष्णवकुलकमलभास्वतां निगमागमसम्मतविशिष्टाद्वैतसिद्धान्तानुयायिनां जगद्गुरूणां श्रीमतामाचार्यरामनरेशमहाराजानां जगद्गुरुश्रीरामानन्दा-चार्यमहाराजपदेऽभिषिक्तानां पाणिपाथोजयोः समुपह्रियमाणः शब्दकुसुमाञ्जलिः

-१-

सांख्ये योगे महाब्धौ जगति विजयिनी शेमुषी भव्यभावा
वेदान्ते न्यायशास्त्रेऽप्रतिहतगतिका रम्यवाणी यदीया।
मीमांसायां सुधायां परभुवि रमते प्रातिभं कम्रकुञ्जं
येषां विद्याव्रतानां जगति विजयिनां स्वागतं भातु तेषाम् ॥

-२-

शास्त्रे वैशेषिके वै बुधवनजयिनी यन्मती रुद्ररूपा
खेलन्ती बोधकूला स्मरहरनगरे जाह्नवी वाग्यदीया।
शब्दे शास्त्रे नदीष्णा विहरति सततं निर्भयं शेमुषी सा
येषां योगाग्निपूता वरबुधविपिने ते जयन्तीह भूमौ ॥

-३-

योगाभ्यासाञ्चिताशा नवनयदयिता या दयादानदक्षा
भक्तानां कामदैका सुरगिरवनिका लोककल्याणगात्रा।
दिव्यादेशोपदेशा शशधरसदृशा शान्तिपुञ्जैककुञ्जा
तां नन्दामो जगत्यामभिनवमहितां रामनामाभिरामाम् ॥

-४-

रामानन्दान् नवीनान् धृतनववपुषो भक्तगेहान् दयार्द्रान्
साक्षाद्रामान् महेशान् हृतकलुषकुलान् शास्त्ररक्षाव्रतांस्तान्।
संस्कारार्चाधनाढ्यान् बुधवनवनजान्शास्त्रमार्गान् यतीन्द्रान्
प्राग्रामार्चान् नरेशान् बुधधनगणितान् प्रस्तुतांस्तान्नमामः ॥

-५-

प्रख्याताखिलशास्त्रदिव्यबदरीनाथाश्चितोऽलौकिको
विद्याभ्यासपटुत्वकालविमलो भिक्षोः पुरे पावनः।
बोधाङ्गा धवलामला मतिमतां गङ्गा हरिद्वारजा
सुश्रीरामनरेशमान्ययतयः सारस्वतेया बुधाः ॥

-६-

तर्काम्भोधितरङ्गनिर्मलधियां विद्यावतां भास्वतां
शुक्लानां प्रतिभावतां सुमनसां सेवैकवित्ताञ्चिता।
न्यायाङ्गा नयशास्त्रसूक्ष्मधिषणा येषां प्रसिद्धाधुना
तेषां स्वागतसाधिकां कृतिमतां वाचं न विद्मो वयम् ॥

-७-

तीर्थासक्तधियां मनोहरगिरां मानाग्रणीनां सतां
तत्त्वान्वेषणदृष्टिरम्यवपुषां वैदुष्यभूषाजुषाम्।
साक्षाद्रामनरेशतां गतवतां विद्याव्रतानामहो
रामानन्दमुनेः सुधासनधृतां सुस्वागतं कुर्महे ॥

-८-

लोकाशोककरा यतीन्द्रमहिता विद्यावतां मोहदाः
शिष्याणां सुखकुञ्जकोमलकला बोधाब्धिपारङ्गताः
वेदान्तामरतत्त्वचिन्तनपराः संख्यावतां मानदा
राजन्तां भुवि भारतेऽमरगिरौ लोकाभिरामाःसदा ॥

-९-

श्रीरामलक्ष्मणगुरून् भुवि सार्वभौमान्
सन्तोष्य तर्कविमलां प्रतिभामवाप्य।
विद्याप्रदान-धवलामधिगत्य कीर्तिं
संराजमानधिषणान् सततं नमामः ॥

संवत् २०४४
माघकृष्णा सप्तमी
श्रीरामानन्दाचार्यजयन्ती
वाराणसी

भवतां
वाराणसेयाः विद्वांसः

सीतानाथसमारभ्मां रामानन्दार्यमध्यमाम् ।
अस्मदाचार्यपर्यन्तां वन्दे गुरुपरम्पराम् ।।

# अभिनन्दन-पत्र

अनन्तश्रीविभूषित जगद्गुरुरामानन्दाचार्य जी
स्वामीश्रीरामनरेशाचार्य जी महाराज भगवत्पाद
'श्री' मठ, पंचगंगा घाट, काशी (उत्तर प्रदेश)
परम श्रद्धेय आचार्यश्री,

आज हम सब वैष्णव ब्राह्मण समाज के बंधु सौभागयशाली हैं कि भारत की आध्यात्मिकता, ज्ञान व भक्ति के महान् संत तथा रामानन्द सम्प्रदाय की मुख्य गादी के आचार्य अनन्तश्रीविभूषित जगद्गुरु श्रीरामानन्दाचार्य जी पूज्यपाद स्वामी श्रीरामनरेशाचार्य जी महाराज हमारे बीच विद्यमान हैं। आपने अपने प्रवचनों तथा सरल दृष्टान्तों के माध्यम से परमात्मतत्व की ज्ञानगंगा बहायी, उसमें अवगाहन कर, हम वैष्णव बंधु न केवल धन्य हुए, अपितु हमें जीवन के वास्तविक धरातल पर जीने की एक प्रेरणा मिली है, तथा प्रथम बार हम लोगों को अपने अतीत के गौरवमय होने का आभास हुआ है, जिसके लिए हम स्वामीजी के कृतज्ञ हैं।

परम श्रद्धेय! आप हमारे धर्म के गौरव हैं, हमारे सम्प्रदाय के प्राण हैं, तथा सम्पूर्ण भारत के अधिकृत वैष्णव धर्माचार्यों के शिरोभूषण हैं। आपके विरक्त-जीवन, मधुरवाणी व आशीर्वाद, हमारे जीवन को हमेशा प्रेरित करते रहेंगे। ऐसे ओजस्वी व्यक्तित्व के धनी महान् आचार्यजी को हम शत शत नमन करते हैं।

श्रद्धेय स्वामीजी को वैष्णव समाज के बंधु बहुत प्रिय हैं। हमेशा हमें 'अपना' कह कर सम्बोधित करते हैं, और वे इसी अपनत्व को साकार करने हमारे समाज भवन गुलाब सागर पर पधारे तथा अपने प्रवचनकाल में यह प्रकट किया कि आज मैं अपने परिवार के बीच हूँ, ऐसे प्रेममय, अपनत्व के वातावरण में हमारा भवन ही 'श्री' मठ लगने लगा। ऐसे यशस्वी, सहृदय, व्यक्तित्व का हम प्रेममय अभिनन्दन करते हैं।

आज हम हमारे संस्कार भूलते जा रहे हैं। संस्कृति दूषित होती जा रही है तथा पाश्चात्य सभ्यता हावी होती जा रही है, ऐसे समय में स्वामीजी

स्थान-स्थान पर जाकर मानव जीवन के कल्याण के लिए धर्म की राह पर चलने का संदेश दे रहे हैं। यह हम लोगों के लिए अमृत-प्राप्ति के समान है। हमारा जीवन सुखमय बनाने के अनूठे प्रयास करने वाले परम सम्मानीय स्वामीजी का हम आभार प्रकट करते हैं।

आपके अल्पकालीन सामीप्य में अमृतवाणी एवं स्नेहमय आशीर्वचनों ने हमें आध्यात्मिक साहित्य से संजोया है, जिसका शब्दों में वर्णन नहीं किया जा सकता। हम सभी वैष्णव समाज के बंधु हृदय से आपके आभारी हैं, परमश्रद्धेय, परम आदरणीय आचार्य श्री का नतमस्तक हो अभिनन्दन करते हैं तथा प्रभु से प्रार्थना करते हैं कि स्वामीजी इसी प्रकार समस्त मानव जीवन के कल्याण में लगे रहें और हम सभी वैष्णवों पर इसी प्रकार की कृपा दृष्टि बनाये रखें। इसी मंगल कामना के साथ जगद्‌गुरु जी के चरण कमलों में पुनः कोटिशः वन्दन के साथ हार्दिक अभिनन्दन अर्पित करते हैं।

आपका कृपापात्र वैष्णव बंधु
बाबूलाल पहलवान, निम्बार्क
अध्यक्ष
श्री वैषणव ब्राह्मण समाज, गुलाब सागर,
जोधपुर (राज.)
(रजि. नं. ३९/६९)

जोधपुर
दिनांक १९ सितम्बर १९९४

।। श्रीश्रीमद्रामानन्दाचार्यो विजयतेतराम् ।।

आनन्दभाष्यकर्तारमानन्दपथदर्शकम् ।
आनन्दनिलयं वन्दे रामानन्दं जगद्गुरुम् ।।

## जगद्गुरु रामानन्दाचार्य
## स्वामी श्रीरामनरेशाचार्यजी महाराज

के करकञ्जयुगल में प्रणतिपुरस्सर सादर समर्पित

# ।। अभिनन्दनपत्र ।।

आनन्दभाष्यकार भगवान् श्रीरामानन्दाचार्यजी महाराज द्वारा प्रतिपादित विशिष्टाद्वैतसिद्धान्त की पूर्ण प्रतिपालकता, सनातनधर्मसंरक्षणार्थ अनवरत सजगता, सुविलक्षण प्रतिभा, बहुआयामी सृजनशीलता, तार्किक व्याख्यानशैली, अप्रतिम शास्त्रज्ञान, मृदुलस्वभावकी कोमलता, संकल्पों की दृढ़ता, सर्वजनसमानता आदि आपके विभिन्न दिव्यगुणों का समादार करते हुए अग्रवाल वेलफेयर सोसाइटी (पञ्जीकृत), अशोकविहार, दिल्ली सश्रद्ध आपको यह अभिनन्दनपत्र समर्पित करती है।

| महाराजा अग्रसेनभवन<br>२९ सितम्बर, २००४<br>दिल्ली | प्रेमसागर गोयल<br>(प्रधान) | कैलाशचन्द्र गुप्ता<br>(महामन्त्री) | अशोक गुप्ता<br>(घीवाले)<br>(कोषाध्यक्ष) |
|---|---|---|---|

अग्रवाल वेलफेयर सोसाईटी (पञ्जीकृत)
अशोक विहार फेज-१, दिल्ली-५२

गुलाबी नगरी जयपुर में आयोजित

**'जगद्गुरु श्री रामानन्दाचार्य सप्त-शताब्दी महोत्सव' के पावन अवसर पर**

सांस्कृतिक, साहित्यिक पत्रिका 'कोमल टाइम्स' की ओर से अनन्त श्रद्धा के साथ समर्पित

अनंतश्री विभूषित, योगवर्य, यतिराज, षड्दर्शनाचार्य, परमार्थभूषण,
परमविशिष्ट, आचार्य सम्राट, संत शिरोमणि, वैष्णवाचार्य

श्रीमठ पंचगंगा काशी के पीठाधीश्वर

# स्वामी रामनरेशाचार्य जी महाराज

हर लक्ष्य उसी के लिए बना, जो तप करता विश्वासों का
हर फूल उसी की माला है; जो दास नहीं मधुमासों का
उसका जीवन ही पुण्यधाम, जिसकी सांसों में तीरथ है
जिसमें निश्चय का तेजपुंज, गंगा का वही भगीरथ है ।

**शत-शत नमन !**

आचार्यवर आपकी चरण धूलि का पावन स्पर्श पाकर द्वितीय काशी के रूप में विश्वविश्रुत यह गुलाबी नगर जयपुर अपने को धन्यभाग मानता है। रामानंदी सम्प्रदाय के आचार्य संत कृष्णदास पयोहारी, अग्रदास और भक्तमाल के रचयिता नाभादास की साधना स्थली यह जयपुर की तपोभूमि आपको शत-शत नमन करती है, अभिनन्दन करती है।

**हे विलक्षण प्रतिभा सम्पन्न !**

भगवान बुद्ध की भूमि बिहार के भोजपुर जनपद के अन्तर्गत [illegible] ग्राम में 31 जनवरी 1952 को विलक्षण प्रतिभा के धनी बालक 'श्रीकृष्ण' का जन्म हुआ - जो आज जगद्गुरु श्री रामानंदाचार्य द्वारा स्थापित 'श्रीमठ' के पीठाधीश्वर हैं। प्रारंभ से ही अध्ययन के प्रति गहरी अभिरुचि के कारण आपने इतिहास, समाजशास्त्र, राजनीतिशास्त्र और अर्थशास्त्र जैसे गंभीर विषयों का अध्ययन किया और किशोर वय के इस अध्ययनशील किशोर ने काशी में रहकर वेद, षड्दर्शन, पुराणेतिहास आदि का अध्ययन रघुवर गोपालदास जी महाराज से किया तथा उन्हीं से 19 दिसम्बर 1968 को दीक्षा प्राप्त कर आपने कठिन साधनापूर्ण आध्यात्म पथ का अवलम्बन किया एवं हरिद्वार में रहकर अपनी प्रखर प्रतिभा का अवदान दिया। तीर्थों की लम्बी पदयात्राएं कर आपने जन-जागरण का महत्वपूर्ण कार्य किया।

**नवीन प्रवृत्तियों के संवाहक !**

अग्रणी संतों के आग्रह को शिरोधार्य कर जगद्गुरु श्री रामानंदाचार्य की साधना स्थली 'श्रीमठ' के पीठाधीश्वर पद पर (11 जनवरी 1988) अभिषेक किये जाने पर आपने 'श्रीमठ' के माध्यम से नवीन प्रवृत्तियों का सूत्रपात किया। जिनमें धार्मिक उत्सव, विद्वानों को प्रतिवर्ष । लाख रुपये का विशिष्ट सम्मान, वेदाध्यायी छात्रों और आदिवासी छात्राओं को छात्रवृत्तियां, रामानंदी साहित्य का प्रचार प्रसार और 'रामानंद प्रकाश' नाम की साहित्यिक पत्रिका का आरंभन कर श्रीमठ को देश भर में नवीन स्फूर्ति से लक्षित किया।

इस अपरा काशी जयपुर के विद्वान, भक्तगण, अनुयायी आपको 'व्याख्यान चक्रवर्ती' के अलंकरण से भूषित कर अपनी श्रद्धा प्रकट करते हैं - और आपके दीर्घ आयुष्य की मंगल कामना करते हैं।

सप्तशती महोत्सव
श्री गोविन्द देव मंदिर
जयनिवास उद्यान, जयपुर
26 अगस्त 2000

विनय प्रस्तुति :

गोपालशरण [illegible] — का. अध्यक्ष (केन्द्रीय)
ओमप्रकाश मोदी — का. अध्यक्ष (जयपुर)
[illegible] अग्रवाल — अध्यक्ष (जयपुर)
डॉ. [illegible] राय — मंत्री
श्री. कुमार [illegible] — प्रधान संपादक 'कोमल टाइम्स'

अखिल भारतीय जगद्गुरु श्री रामानन्दाचार्य सप्तशताब्दी महोत्सव समिति

परम श्रद्धास्पद अनन्तश्रीविभूषित

जगद्गुरु रामानन्दाचार्य स्वामी श्री रामनरेशाचार्यजी महाराज के

श्रीचरणों में, उनके दिव्य चातुर्मास्य महोत्सव, इन्दौर 1998 ई. के समापनोत्सव के पावन अवसर पर

सादर समर्पित --

# अभिनन्दन-पत्र

सीतानाथसमारम्भां रामानन्दार्यमध्यमाम्।
अस्मदाचार्यपर्यन्तां वन्दे गुरुपरम्पराम्॥

मुनिवर!

बाबा वैद्यनाथ के पवित्र धाम की चिताभूमि, युग पुरुष कौटिल्य, सम्राट चन्द्रगुप्त मौर्य, शकटार कात्यायन और महापंडित मण्डन मिश्र की जन्मभूमि, नालन्दा की पवित्र ज्ञान भूमि, भगवान् बुद्ध एवं भगवान् महावीर की साधना भूमि और महात्मागांधी के सत्याग्रह की उद्घाटक भूमि की महिमा के साथ भारतीय संस्कृति, धर्म एवं राजनीति के इतिहास की गौरवशाली धरोहर समेटे बिहार प्रान्त के अन्तर्गत परिसियां गाँव में माघ शुक्ल पंचमी, संवत् २००८ वि., गुरुवार को आपका प्राकट्य एक ब्राह्मण परिवार के बीच लोकमानस में धर्म के भावों एवं संस्कारों की फसल अंकुरित एवं पल्लवित करने के ईश्वरप्रदत्त दायित्व की पूर्ति हेतु हुआ। भगवान् श्रीराम की भक्ति परम्परा को और समृद्ध बनाने तथा लोकमंगलकारी श्रीरामभाव प्रसार को गति प्रदान करने के लिये हुए आपके अवतरण से धर्म के उत्थान का मार्ग प्रशस्त हुआ और धर्मनिष्ठ प्राणी धन्य हुये।

## हे सरस्वती के वरद पुत्र!

बाल्यावस्था से ही आपके व्यक्तित्व में अन्तर्निहित जगद्गुरु का विराट स्वरूप पल्लवित और मुखर होकर सामने आने लगा। माँ सरस्वती की आपने साधना की और उनकी कृपा आपको प्राप्त हुई। युग के दृढ़व्रती सन्त महान्त वेदान्ती रघुवर गोपालदासजी के पटु शिष्य के रूप में पंच संस्कारों से दीक्षित होकर आप श्रीरामभाव के अधिकारी और उपासक बनकर **रामनरेशदास** बन गये। श्रीराम के प्रति समर्पण के अप्रतिम दास्यभावकी साधना ने आपको अन्ततः अल्पकाल में ही आचार्यत्व के उस सोपान पर पहुँचा दिया जहाँ **जगद्गुरु**

रामानन्दाचार्य के स्वरूप में आसीन होकर श्रीरामभाव के लोक प्रसार के अभिनव युग प्रवर्तक बन गये हैं। आपके इस विराट जगद्गुरु स्वरूप का हम बार-बार वन्दन और अभिनन्दन करते हैं।

**अलौकिक व्यक्तित्व धनी!**

आपके अलौकिक व्यक्तित्व के परम सात्विक आकर्षण से हम भक्तजन अभिभूत हैं। हमें आपके अद्भुत प्रेरणास्पद व्यक्तित्व में श्रीरामभाव की प्रेरणा का मानसरोवर और मर्यादा पुरुषोत्तमरामजी एवं उनके अवतार स्वामी रामानन्दजी महाराज का प्रतिबिम्ब दृष्टिगोचर होता है। आकर्षक और आजानबाहु काया, साधुता, शुचिता एवं शालीनता की दिव्यमूर्ति और ज्ञान, शक्ति, शीलका बहुआयामी संयोग आपके व्यक्तित्व का जो दैदीप्यमान स्वरूप प्रस्तुत होता है, हम सब शिष्य और भक्त उसके विनम्र आराधक हैं।

**संस्कृति के संरक्षक आचार्यवर!**

महादेव भगवान् शिव की नगरी काशी में श्रीरामभक्ति की सबसे बड़ी परम्पराओं से जुड़ी महान् वैष्णवपीठ **'श्रीमठ'** के पीठाधीश्वर आचार्य के रूप में आप मात्र रामानन्द सम्प्रदाय के आचार्य नहीं बल्कि वैष्णव एवं शैव मतों के दो स्तम्भों पर टिकी महान् भारतीय संस्कृति के युगसंवाहक भी हैं। धर्म की इन दोनों धाराओं की शक्ति के समन्वय की चेतना को आपकी नैयायिक प्रज्ञा जिस प्रकार और प्रखर बना रही है, उससे भारतीय संस्कृति के संरक्षक और संवाहक के रूप में आपको हम **नमन** करते हैं।

वर्ष १९८८ ई. की ११ जनवरी को रामभक्ति परम्परा की सर्वोच्च पीठ और मध्यकाल में भक्ति आन्दोलन की गंगोत्री बनकर धर्म, संस्कृति एवं राष्ट्र की रक्षा करनेवाली आद्य जगद्गुरु रामानन्दाचार्यस्वामी रामानन्दजी महाराज की पावन साधनास्थली के रूप में गौरवशाली परम्परा से जुड़ी आचार्यपीठ **'श्रीमठ'** में आपका आचार्य पदाभिषेक इस महान् परम्परा का प्राय: सात शताब्दियों पूर्व स्थापित गरिमा के नवोदय का मार्ग प्रशस्त करनेवाले युगान्तकारी अध्याय का उद्घाटन था। मानव मात्र के बीच बन्धुत्व, समता, सहिष्णुता, स्वातन्त्र्य चेतना और न्याय के उदात्त आदर्शों की **'श्रीमठ'** की परम्परा के पुनरुत्थान एवं श्रीरामभाव की मर्यादा के लोकप्रसार के आन्दोलन का रामानन्दाचार्य पीठ **'श्रीमठ'** एक जीवन्त प्रतीक बनकर आपके नेतृत्व में नयी पहचान प्राप्त कर सका है। **'श्रीमठ'** के उस आध्यात्मिक आलोक से हम

सबका पथ प्रशस्त हो रहा है। हम आपकी कृपा और स्नेह की शीतल एवं प्रेरक छाया पाकर अभिभूत हैं। इन्दौर में दूसरी बार आपके दिव्य चातुर्मास महोत्सव से इन्दौर नगरी में धर्म के संस्कारों का प्रभावी पल्लवन हुआ है। माँ अहिल्या की इस पावन नगरी के हम नागरिक और आपके भक्त आपकी इस विनम्र कृपा के लिये कृतज्ञ हैं।

अन्त में, आपके श्रीचरणों में अपना प्रणाम निवेदित करते हुए दिव्य चातुर्मास समापनोत्सव १९९८ के पवित्र अवसर पर हम आपका हार्दिक अभिनन्दन करते हैं।

भाद्र शुक्ल पूर्णिमा, सं. २०५५ वि.
दिनांक ९ सितम्बर १९९८ ई.

हम हैं आपके,
जगद्गुरु रामानन्दाचार्य आध्यात्मिक मंडल, इन्दौर के समस्त शिष्य तथा
इन्दौर नगरी के सभी श्रद्धालुजन
दिव्य चातुर्मास महोत्सव समिति,
इन्दौर (मध्य प्रदेश)

।। ॐ ।।

।।नमोऽस्तु रामाय।।

# प्रशस्तिपुरस्सरम् अभिनन्दन-पत्रम्

ब्राह्मीवाग्भूत-वेदानुगत-वेदाङ्गादिसर्वशास्त्रार्णवावगाहनावदातहृदयानां, चतुर्दशविद्या-विलास-लसमान-मानसानां, जगद्गुरु
श्रीरामानन्दाचार्य-परम्परा-परिपालन-प्रवीणानां, नव्यानव्यन्यायशास्त्र-निःसृततर्क-रत्नरश्मिनिकर-निवारिताविद्यान्ध-
कारणां, वाक्-कला-कलापाकलन-निपुणानां, विद्याप्रदान-कालाकांक्षित-गुणगण-धारण-धुरीणानां,
ब्रह्मविद्या-वह्नि-विदग्धविकारप्रकाराणां, मानव-जगदमङ्गलवारणाय मङ्गलकरणाय
कल्पितमानवदेहानां, मोक्षप्रदायिनीकाशीनगरी-मध्यावस्थितस्य पञ्चगंगा-
नामधेयस्य जगद्गुरु-श्रीरामानन्दाचार्य-मूलपीठस्य परमाध्यक्षाणां,
श्रीजगद्गुरुरामनन्दाचार्य-पद-प्रतिष्ठितानां,
श्रीस्वामी श्रीरामनरेशाचार्यमहाराजानां,
पाणि-पयोजयोः समर्प्यमाणं
प्रशस्तिपुरस्सरम्
**अभिनन्दन-पत्रम्**

### *हे सत्यसनातन-परम्परा-परिपोषक!*

जगदाधारपरमेष्ठिव्यवस्थानुसारं भद्ररूपां श्रियमुद्वहद्भिर्भवद्भिर्विहार-प्रान्तान्तर्गत परसिया नामाङ्कितं ग्रामपदं द्विपञ्चाशदुत्तरेकोनविंशतिशततमे खिष्टाब्दे स्वजन्मना पवित्रीकृतम्। बालस्वभावसुलभचेष्टया परमोदारभावविवर्धकानां पारिवारिकजनानां निर्मलं चित्तं विकास्य हास्यलास्यलीलाञ्चितं कुलं कृतम्।

### *हे विपश्चिदपश्चिम !*

अविरलं विद्याव्यसनं समञ्चद्भिर्भवद्भिः सरसतया न्यायशास्त्राचार्य-परीक्षामुत्तीर्य समधीत्यान्यानि शास्त्राणि विद्वज्जगत्यां महत्यां शास्त्रीयं पाण्डित्यं वाक्चातुर्यं तर्कप्रागल्भ्यं च संप्रसार्य चतुर्दशवर्षाणि हरिद्वारे गङ्गाद्वारे प्रबोधकारिण्या अध्यापनवृत्त्या प्रशस्यानि कृतानि।

### *हे लेखन-कला-कुशल!*

विचारससेचनेनामितान् जनानानन्दयितुं श्रीमद्भिरेकशताधिकलेखानां द्वादशाधिकग्रन्थानां च प्रकाशनं विधाय सारस्वत क्षेत्रस्य गौरवमभिवर्धितम्। समग्रे भारते श्रीमतां श्रीमुखाब्जनिःसृतं भारतीरसं निपीय बहवो हि भवच्छिष्या भवतां गुणगणगौरवगाथां गायन्तः सर्वासु दिक्षु प्रसारयन्ति श्रीमतामुत्तमं यशः।

### *हे जगद्गुरु-श्रीरामानन्दाचार्य-कार्य-विकासक!*

श्रीमद्भिर्दशाधिकानां रामानन्दीयाश्रमपदानां जीर्णोद्धारं विधाय गुरुकर्मणां विकासो कृतः। सम्प्रति हरिद्वारे सार्धैककोटिरुप्यकैः श्रीमतां संरक्षकत्वे श्रीराममन्दिरनिर्मितिर्भवति। विषमता-रोग-बाण-प्रहार-मूर्च्छितः समाजो भवद्भिः समरसतया सञ्जीविन्या सञ्जीवितः क्रियते दिवानिशम्। किल्विषनाशाय केवलमेकमपि चातुर्मास्यमलमिति निगद्यते, परं श्रीमद्भिर्महद्भिरविरलतया निरालसतया विंशतिचातुर्मास्यानि समाराध्य निरुपमेया यशस्विता समर्जिता।

### *हे अर्चनीयचरण!*

भवतां श्रीमतामपरिमितां तपस्वितां विलक्षणवाग्मितां, परमोदारतां, स्वभावविमलतां, सरलतां, सरसतां शास्त्ररसिकतां, विद्वज्जनानुरागितां, स्वगुण-गान-विरागतां, परगुण-गानाग्रमितां सततमनुभवन्तो वयमद्य श्रीजगद्गुरुरामानन्दाचार्य-श्रीस्वामिरामनरेशाचार्याणां मनोरमे शुभे जन्मोत्सवे प्रशस्तिमुद्गीय अमन्दमानन्दमनुभवन्तो हार्दिकम् अभिनन्दनं प्रकुर्मः।

वसंत-पंचमी
१५ फरवरी, २०१३
प्रयागः

एते स्मो वयम्
श्रीमच्चरण-कमल-चञ्चरीकाः

## डॉ. उदय प्रताप सिंह

01 जनवरी, 1955 ई., आजमगढ़ (उ.प्र.)
एम.ए., पी-एच.डी. (हिन्दी)

सम्प्रति : एसोसिएट प्रो. हिन्दी, श्री महंथ रामाश्रयदास स्नातकोत्तर महाविद्यालय, भुड़कुड़ा, गाजीपुर (उ.प्र.)

**अकादमिक परिलब्धियाँ : प्रकाशित पुस्तकें :**

(1) आया साहब और उनकी कृतियाँ- 1989 ई. (2) निर्गुण भक्ति और आप ग्रंथ- 2002 ई. (3) अनुचिंतन एवं अनुसंधान-2004 ई. (4) पूरब रंग के साधु कविता- 2006 ई (5) मार्क्सवादी हिन्दी समीक्षा का अन्तर्द्वन्द्व-2007 ई. (6) आलोचना की अपनी परम्परा-2007 ई. (7) संतों के संत कवि रामानंद-2010 ई. (8) सामाजिक व्यवस्था में संत कवियों का योग 2012 ई. (9) अलहराम छूट्या ... मोरा-(विनिबंध) 2014 ई. (10) स्वामी रामानंद (विनिबंध) 2015 ई. (11) एक विरक्त की लोक यात्रा-2015 ई.

**सम्पादित पुस्तकें :**

(1) राम भक्ति साहित्य अन्वेषक और राही-1999 ई. (2) रामानंद रामरस माते- 2000 ई. (3) भारतेन्दु फिर 2004 ई. (4) तीर्थराज प्रयाग और कुम्भ महापर्व-2007 ई. (5) ज.गु. रामानंदाचार्य : श्रीसम्प्रदायः (रामावत) विविध आयाम 2010 ई. (6) हरिद्वार समग्र-2010 ई. (7) तीर्थराज प्रयाग और रामभक्ति का अमृत कलश-2013 ई. (8) ज.गु.रामानंदाचार्य सप्तशताब्दी महोत्सव-2013 ई. (9) अभिनव रामानंद : स्वामीरामनरेशाचार्य-2015 ई.

**फेलोशिफ :**

विश्वविद्यालय अनुदान आयोग, नई दिल्ली- (1) रिसर्च एवार्डी 2002-2005 (2) वृहद शोध परियोजना 2008-2011 ई.

**पुरस्कार एवं सम्मान :**

(1) अखिल भारतीय साहित्य परिषद् कोटा, राजस्थान (2) अखिल भारतीय विद्वत परिषद सम्मान (3) भाषाभूषण सम्मान साहित्य मंडल श्रीनाथद्वारा (4) जगद्‌गुरुरामानंदाचार्य पुरस्कार-2013 ई. जगद्‌गुरु रामानंदाचार्य पुरस्कार एक लाख रुपये- (100000·00) 2015 ई.

संपर्क : बी.एफ-एस.-13 हरनारायण विहार, सारनाथ-221007, वाराणसी,
मो. 09415787367 Email : dr. udaipratapsinghvns@gmail.com

प्रकाशक
जगद्‌गुरु रामानन्दाचार्य स्मारक सेवान्यास
पंचगंगा, वाराणसी